

# तित्थोगाली प्रकीर्णक



संपादन एवं अनुवाद  
डॉ. अतुल कुमार प्रसाद सिंह

पांचवी शताब्दी के अज्ञात जैनाचार्य द्वारा रचित

# तित्थोगाली प्रकीर्णक

मूल प्राकृत एवं हिन्दी अनुवाद

संपादन एवं अनुवाद

डॉ. अतुल कुमार प्रसाद सिंह

जैन विश्वभारती संस्थान

मान्य विश्वविद्यालय, लाडनूँ-341306 (राजस्थान)

© जैन विश्वभारती संस्थान (मान्य विश्वविद्यालय), लाडनूँ

ISBN : 978-81-910633-2-5

अनुवाद एवं संपादक : डॉ. अतुल कुमार प्रसाद सिंह

प्रथम संस्करण : 2012

मूल्य : ₹175/-

प्रकाशक : जैन विश्वभारती संस्थान  
(मान्य विश्वविद्यालय)  
लाडनूँ - 341306, राजस्थान  
सम्पर्क-01581-226110

मुद्रक : श्री वर्द्धमान प्रैस, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32

## तित्थोगाली प्रकीर्णक : एक परिचय

जैन साहित्य में प्रकीर्णक एक विशेष प्रकार का पारिभाषिक शब्द है। यहां इसका अर्थ मुक्तक वर्णन के रूप में किया गया है। वास्तव में प्रकीर्णक जैन धर्म के अंतर्गत आनेवाले धार्मिक साहित्य का एक विभाग है। वैसे प्रकीर्णक शब्द 'प्र' उपसर्ग पूर्वक 'कृ' धातु में 'क्त' प्रत्यय सहित निष्पन्न 'प्रकीर्ण' शब्द से 'कन्' प्रत्यय होने से बनता है। इसका अर्थ सामान्य तौर पर नाना संग्रह, फुटकर वस्तुओं का संग्रह और विविध वस्तुओं का अध्याय आदि किया जाता है।

जैन परंपरा में प्रकीर्णक साहित्य वस्तुतः विविध विषयों के संकलन से तैयार ग्रंथ को लिया गया है। कुछ प्रकीर्णकों में उसके ग्रंथकारों ने इस बात उल्लेख किया है कि श्रुत के अनुसार अंग, उपांग आदि ग्रंथों के आधार पर प्रकीर्णकों की रचना की गयी है। मलयगिरि रचित नंदीसूत्र के अनुसार, तीर्थंकर द्वारा उपदिष्ट श्रुत का अनुसरण करके श्रमण प्रकीर्णकों की रचना करते हैं। इसी को विस्तार देते हुए आचार्य आत्माराम जी ने कहा है, "अरिहन्त के श्रुतों के आधार पर श्रमण निर्ग्रन्थ भक्ति भावना तथा श्रद्धावश मूल भावना से दूर न रहते हुए जिन ग्रंथों का निर्माण करते हैं, उन्हें प्रकीर्णक कहा जाता है।" वस्तुतः प्रकीर्णक जैन परंपरा में धार्मिक आगम ग्रंथों के अंतर्गत होते हुए भी मुनियों द्वारा रचित होते हैं। अंग, उपांग समेत आगम के अंतर्गत आनेवाले शेष ग्रंथों के बारे में मान्यता है कि इनका प्रवचन स्वयं तीर्थंकर सूत्र रूप में करते हैं और उनके गणधर उन्हें निबद्ध करते हुए उनकी व्याख्या करते हैं। आगम के अन्य भेदों और प्रकीर्णकों में मुख्य रूप से यही अंतर है। परंपरानुसार, जिस तीर्थंकर के संघ में जितने स्थविर होते हैं, प्रकीर्णकों की संख्या उस संघ में उतनी ही मानी गयी है।

प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव के संघ में 84,000 स्थविर माने गये हैं। उनके संघ में प्रकीर्णकों की संख्या 84,000 मानी गयी है। समवायांग सूत्र में इसका उल्लेख इस प्रकार किया गया है—'चौरासीइं पन्नग सहस्साइं पण्णत्ता'। इसी प्रकार अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर के संघ में 14,000 स्थविर कहे गये हैं। इस हिसाब से वर्तमान में गतिमान चौबीसवें तीर्थंकर के संघ में प्रकीर्णकों की संख्या 14,000 होनी चाहिए। लेकिन वर्तमान में अब तक के सभी उपलब्ध स्रोतों से अधिकतम 32 प्रकीर्णक ही प्राप्त होते हैं।

आगम साहित्य के अंतर्गत प्रकीर्णक अंगबाह्य ग्रंथ माने जाते हैं। अंगबाह्य वे ग्रंथ हैं जो जिनवचन के आधार पर स्थविरों द्वारा रचे गये हैं। नंदी सूत्र में इस अंगबाह्य ग्रंथों को दो भागों में विभक्त किया गया है—आवश्यक और आवश्यक व्यतिरिक्त।

प्राचीन आगमों में ऐसा स्पष्ट उल्लेख नहीं है कि कौन ग्रंथ प्रकीर्णक हैं। वैसे अंग आगमों में प्रकीर्णक का उल्लेख सर्वप्रथम समवायांगसूत्र में मिलता है। प्रो. सागरमल जैन के अनुसार, प्रारम्भ में अंग आगमों से इतर आवश्यक, आवश्यक व्यतिरिक्त, कालिक एवम् उत्कालिक के रूप में वर्गीकृत सभी ग्रंथ प्रकीर्णक कहलाते थे। उन्होंने इसके प्रमाणस्वरूप षट्खण्डागम की धवला टीका का उल्लेख किया है जिसमें 12 अंग आगमों के भिन्न अंगबाह्य ग्रंथों को प्रकीर्णक नाम दिया है। धवला टीका के अनुसार प्रारम्भ में अंग आगमों को छोड़ सभी ग्रंथ ही प्रकीर्णक कहलाते थे—अंगबहिरचोद्दसपइण्णयज्झाया।

कहा जा सकता है कि प्रकीर्णक श्रेणी में ग्रंथों का विभाजन सर्वप्रथम आचार्य जिनप्रभ रचित ग्रंथ विधिमार्गप्रपा (ई. की 13वीं शती) में हुआ है। तेरहवीं शदी के पूर्व आगमों के वर्गीकरण में प्रकीर्णक वर्ग का उल्लेख नहीं है। लेकिन आज प्रकीर्णक माने जानेवाले ग्रंथ इससे पहले भी उपलब्ध थे। श्वेताम्बर मूर्तिपूजक संप्रदाय में वर्तमान में प्रकीर्णकों के अंतर्गत दस ग्रंथ मानने की जो परम्परा है वह न केवल अर्वाचीन है बल्कि इस संबंध में आचार्यों में मतभेद भी रहा है। 14वीं शदी के आचार्य प्रद्युम्नसूरि ने विचारधारा प्रकरण में 45 आगमों का उल्लेख करते हुए कुछ प्रकीर्णकों को

लिया है। मुनि पुण्यविजय जी ने चार अलग-अलग संदर्भों में प्रकीर्णकों की अलग-अलग सूची प्रस्तुत की है। वर्तमान में जो 10 ग्रंथ आगम के अंतर्गत माने जाते हैं, वे हैं—

1. चतुःशरण,
2. आतुरप्रत्याख्यान,
3. महाप्रत्याख्यान,
4. भक्तपरिज्ञा,
5. तंदुलवैचारिक,
6. संस्तारक,
7. गच्छाचार,
8. गणिविद्या,
9. देवेन्द्रस्तव और
10. मरणसमाधि।

इसके अतिरिक्त उपलब्ध बाईस और प्रकीर्णक हैं जिनको मुनि पुण्यविजय जी ने पङ्णयसुत्ताइं नामक ग्रंथ में समाहित किया है। इस प्रकार वर्तमान में बत्तीस प्रकीर्णक उपलब्ध हैं। इसके अलावा 22 ये हैं—

11. चंद्रकवेध्यक,
12. ऋषिभाषित,
13. द्वीपसागरप्रज्ञप्ति,
14. वीरस्तव,
15. चतुःशरण कुसलानुबंधी,
16. आतुर प्रत्याख्यान,
17. आतुरप्रत्याख्यान,
18. सारावली,
19. ज्योतिषकरण्डक,
20. तित्थोगाली,
21. प्राचीन आचार्य विरचित आराधनापताका,

22. श्री वीरभद्राचार्य विरचित आराधना पताका,
23. आराधनासार या पर्यन्ताराधना,
24. आराधना पंचकम्,
25. आराधना प्रकरण,
26. जिनशेखर श्रावक प्रति सुलसा श्रावक आराधित आराधना,
27. नन्दन मुनि आराधित आराधना,
28. आराधनाकुलकम्,
29. मिथ्यादुष्कृष्ट कुलक,
30. मिथ्यादुष्कृत कुलक,
31. आलोचना कुलक और
32. आत्मविशोधि कुलक।

इसके अलावा कई अन्य ग्रंथों को भी प्रकीर्णक श्रेणी में रखा जाता है-

33. कवच,
34. अंगविद्या,
35. अजीवकल्प,
36. तिथिप्रकीर्णक,
37. सिद्धप्राभृत,
38. अंगचूलिका,
39. जीवविभक्ति,
40. पिण्डविशुद्ध,
41. बंगचूलिका,
42. योनिप्राभृत,
43. जम्बूचरितप्रकीर्णक

इन सबमें अंगविद्या को प्रकीर्णक मानने पर मतभिन्नता है। अगर अंगविद्या को छोड़ दें तो तित्थोगाली प्रकीर्णक सबसे वृहदाकार प्रकीर्णक है।

उपरोक्त 43 प्रकीर्णकों के अतिरिक्त कुछ ऐसे प्रकीर्णक हैं जो वर्तमान में प्राप्त नहीं हैं। यद्यपि उनके नाम यत्र-तत्र मिलते हैं। इनकी संख्या 45 हैं। इनके नाम व प्रमाणभूत ग्रंथ इस प्रकार हैं—

44. अरुणोपपात	(ठा., नं., पा. व्य.),
45. आत्मविशुद्धि	(पा., योगनंदी),
46. आत्मविशुद्धि	(नं., पा.),
47. उत्थानश्रुत	(व्य., नं., प्रा.),
48. आसी विभावना	(व्य., पा., योगनंदी),
49. कल्पाकल्प	(नं., पा., ध.),
50. कल्पिका	(नं., पा.),
51. कृतिकर्म	(ध. 97),
52. क्षुल्लिकाविमानप्रविभक्ति	(ठा., नं., पा., व्य.),
53. गरुडोपपात	(ठा., नं., पा., व्य.),
54. चरणविधि	(नं., पा.),
55. चारणस्वप्नभावना	(व्य., पा., योगनंदी),
56. चुल्लककल्पश्रुत	(नं., पा.),
57. तेजोनिसर्ग	(व्य., पा., योगनंदी),
58. दीर्घदशा	(ठा. 755),
59. दृष्टिविषभावना	(व्य., पा., योग.),
60. देवेन्द्रोपपात	(व्य., नं., पा.),
61. द्विगिद्धिदशा	(ठा. 755),
62. धरणोपपात	(व्य., नं., पा.),
63. ध्यानविभक्ति	(नं., पा.),
64. नागपरिज्ञापनिका	(व्य., नं., पा.),
65. पुण्डरीक	(ध.),
66. पोरुषीमण्डल	(नं., पा.),

67. प्रमादाप्रमाद	(नं., पा.),
68. बन्धदशा	(ठा. 755),
69. मण्डलप्रवेश	(नं., पा.),
70. मरणविशुद्धि	(योग.),
71. महतीविमानप्रविभक्ति	(व्य., नं., पा., ठा.),
72. महाकल्पश्रुत	(नं., पा., ध.),
73. महापुण्डरीक	(ध.),
74. महाप्रज्ञापना	(नं., पा.),
75. महास्वप्नभावना	(व्य., पा., योग.),
76. वरुणोपपात	(व्य., नं., पा., ठा.),
77. विद्याचरणविनिश्चय	(नं., पा.),
78. विहारकल्प	(नं., पा.),
79. वीतरागश्रुत	(नं., पा.),
80. वृष्णिका	(नं., पा., योग.),
81. वेलन्धरोपपात	(व्य., नं., पा., ठा.),
82. वैनयिक	(ध.),
83. वैश्रमणोपपात	(नं., पा., ध., ठा.),
84. वियाहचूलिका	(व्य., नं., पा., ध., ठा.),
85. संक्षपित दशा	(ठा. 755),
86. संग्रहणी	(विधि.),
87. समुत्थानश्रुत	(व्य., नं., पा.), और
88. संलेखना	(नं., पा.)।

(संक्षिप्त नाम संकेत — ठा. : ठाणांग, नं. : नन्दीसूत्र, व्य. : व्यवहार, ध. : धवला, विधि. : विधिमार्गप्रपा, पा. : पाक्षिकसूत्र, योग. : योगनन्दी) इस प्रकार कुल उपलब्ध और अनुपलब्ध (पर प्रमाणसहित) प्रकीर्णकों का कुल संख्या 88 होती हैं।

## रचयिता एवं रचनाकाल

जहां तक प्रकीर्णकों के रचनाकाल का संबंध है, लंबे अंतराल तक इनकी रचनाएं चलती रहीं हैं। इसकी प्राचीनता का प्रमाण नंदी सूत्र में इनका प्राप्त होना है। परन्तु प्रकीर्णकों की रचना इसके बाद भी होती रही है। इसमें वीरभद्रार्यकृत आतुरप्रत्याख्यान ग्यारहवीं शताब्दी के हैं, जो अंतिम काल के प्रकीर्णक कहे जा सकते हैं। सबसे प्राचीन प्रकीर्णक ऋषिभाषित है जो संभवतः आचारांग के प्रथम श्रुतस्कन्ध के संकलन के समानान्तर संकलित हैं। प्रस्तुत तित्थोगाली प्रकीर्णक का उल्लेख नंदीसूत्र में उपलब्ध आगमों की सूची में नहीं है। परन्तु सातवीं शताब्दी में जिनदासगणि क्षमाश्रमण द्वारा रचित ग्रंथ व्यवहार भाष्य में इसका उल्लेख प्राप्त होता है। अतः इसका रचनाकाल चौथी शताब्दी के नंदीसूत्र के बाद और व्यवहार भाष्य के पूर्व होना चाहिए।

जिस प्रकार तित्थोगाली प्रकीर्णक के रचनाकाल के विषय में इस ग्रंथ में कुछ भी उल्लेख नहीं है, उसी तरह इसके रचनाकार का भी अन्यत्र या इस ग्रंथ में कहीं उल्लेख नहीं है। कहीं भी इस संबंध में विशेष नहीं होने से इसका वास्तविक रचनाकाल तथा रचनाकार का नाम निश्चित करना कठिन है। इसके कुछ अंतःसाक्ष्य के आधार पर इस ग्रंथ को विक्रम की पांचवीं सदी के आसपास पाटलिपुत्र में रचित होने का अनुमान लगाया जा सकता है। कल्कि राजा की उत्पत्ति परं तित्थोगाली में एक गाथा है—

जं एयं वरनगरं, पाटलिपुत्तं तु विस्सुअं लोए।

एत्थं होही राया, चउमुहो नाम नामेण।।

इस गाथा में एयं और एत्थं का प्रयोग से मुनि कल्याण विजय ने इसके लेखक के पाटलिपुत्र में रहकर रचना करने का अनुमान लगाया है। राजवंशों की समाप्तिसूचक एक गाथा भी इसी दिशा में संकेत करते हैं—

ता एवं सगवंसो य नंदवसो य मरुयवंसो य।

सयराहेण पणट्ठा, समयं सज्झाणवंसेण।।

इन गाथा में नन्दवंश, मौर्यवंश और शकवंश के अंत का निर्देश है। विक्रम की चौथी सदी के पूर्वार्ध में ही शक साम्राज्य का अंत और गुप्त साम्राज्य का उदय हो चुका था। प्रकीर्णककार शकवंश के नाश का उल्लेख तो करते हैं पर उसके नाशक गुप्त राजवंश के बारे में कुछ भी इशारा नहीं करते। इससे यह अनुमान होता है कि गुप्तवंश उनके समय में अपने को स्थापित करने में लगा रहा होगा। इन प्रमाणों से इस ग्रंथ का रचनाकाल विक्रम की चौथी सदी के अंत और पांचवीं सदी के प्रारम्भ के बीच होने का अनुमान लगाया जा सकता है।

## विषय वस्तु

जहां तक तिथ्योगाली प्रकीर्णक के परिचय और इसकी विषय-वस्तु का प्रश्न है, इसका उल्लेख सर्वप्रथम छठी शताब्दी के व्यवहारभाष्य<sup>1</sup> में प्राप्त होता है। इसकी किसी प्रति में 1233 और किसी में 1261 गाथाएं प्राप्त होती हैं। इसका समाधान इसी क्रम में आगे करने की कोशिश की जाएगी। इसमें वर्तमान अवसर्पिणी काल में प्रथम तीर्थकर ऋषभदेव से लेकर चौबीसवें तीर्थकर महावीर तक के विवरण के साथ ही भरत, ऐरावत आदि दस क्षेत्रों में एक साथ उत्पन्न होनेवाले दस-दस तीर्थकरों का विवेचन किया गया है। इसमें उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी काल और उसके छह-छह आरों का विस्तृत निरूपण किया गया है। अवसर्पिणी काल में प्रत्येक आरे में मनुष्यों की आयु, शरीर की शक्ति, ऊंचाई, बुद्धि, शौर्य आदि का क्रमशः हास बतलाया गया है। ग्रंथ में चौबीस तीर्थकरों, बलदेव, वासुदेव आदि शलाकापुरुषों के पूर्वभवों के नाम, उनके माता-पिता, आचार्य, नगर आदि का वर्णन है। ग्रंथानुसार जिस रात्रि में तीर्थकर महावीर निर्वाण को प्राप्त हुए, उसी रात्रि में पालक राजा का राज्याभिषेक हुआ। इसमें पालक, मरुत, पुष्पमित्र, बलमित्र, भानुमित्र, नभःसेन, गर्दभ एवं दुष्टबुद्धि राजा के जन्म एवं उन सभी के राज्यों का वर्णन है, जो इतिहास की दृष्टि से काफी महत्त्वपूर्ण है। इसमें जैन कला, खगोल, भूगोल का भी वर्णन है।

सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि श्वेताम्बर परंपरा में यही एकमात्र ऐसा ग्रंथ है जिसमें आगम ज्ञान के क्रमिक उच्छेद की बात कही गयी है। इसमें

तीर्थकर महावीर से लेकर भद्रबाहु स्वामी तथा स्थूलभद्र तक की पट्ट परंपरा का उल्लेख किया गया है। अन्त में बारह आरों, विविध धर्मोपदेश और सिद्धों की स्वरूप विस्तृत रूप से निरूपित है। प्रस्तुत प्रकीर्णक महावीर जैन विद्यालय से मूल रूप में प्रकाशित है जिसका संपादन मुनि पुण्यविजय जी ने किया है।

## गाथा संख्या

मुनि पुण्यविजय द्वारा संपादित पड़ण्यसुत्ताइं भाग-1 में संग्रहीत तित्थोगाली प्रकीर्णक में 1261 गाथाएं उपलब्ध हैं। परन्तु अंतिम 1261वीं गाथा में इसकी गाथा संख्या 1233 बतायी गयी है।

तेत्तीसं गाहाओ दोन्नि सता ऊ सहस्समेगं च।

तित्थोगाली संखा एसा भणिया उ अंकेण।।

वस्तुतः पूर्व के किसी अज्ञात संपादक ने विषय की क्रमबद्धता को अविच्छिन्न रखने के लिए कई स्वकल्पित गाथाओं को ग्रहण किया है तथा कई गाथाओं के दूसरे आगमों से ग्रहण करने का उल्लेख किया है। अन्य आगमों से गृहीत तित्थोगाली की गाथाएं इस प्रकार हैं। क्रम संख्या के साथ वाली गाथा तित्थोगाली की है और बिना क्रम संख्या वाली तत तत उद्धृत ग्रंथों की –

144. भोगंकर 1 भोगवती 2 सुभोग 3 तह भोग मालिणि 4 सुवच्छा 5।

तत्तो चव सुमित्ता 6 अणिंदिया 7 पुप्फमाला 8 य।।

भोगंकर भोगवती सुभोगा भोगमालिणी।

सुवच्छा वच्छमित्ता य, वारिसेणा बलाहगा।।

स्थानांग, संपादक- मुनि मधुकर, अष्टम स्थान 99/1

147. मेहंकर 1 मेहवई 2 सुमेह 3 तह मेहमालिणि 4 विचित्ता 5।।

तत्तो य तोयधारा 6 बलाहका 7 वारिसेणा 8 य।।

मेघंकरा मेघवती, सुमेघा मेघमालिणी।

तोयधारा विचित्ता य, पुप्फमाला अणिंदिता।।

– वही, 100/1

153. नंदुत्तरा 1 य नंदा 2 आणंदा 3 नंदिबद्धणा 4 चेव ।  
 विजया 5 य वेजयंती 6 जयंति 7 अवराइ<sup>२</sup>अट्ठमिया 8 ॥  
 णंदुत्तरा च णंदा, आणंदा णंदिवद्धणा ।  
 विजया य वेजयंती, जयंती अपराजिया ॥  
 —वही, 95/2
157. देवीओ चेव इला 1 सुरा 2 य पुहवी 3 य एगनासा 4 य ।  
 पउमावई 5 य नवमी 6 भद्दा 7 सीया<sup>९</sup> य अट्ठमिया 8 ॥  
 इलादेवी सुरादेवी, पुढवी पउमावती ।  
 एगणासा णवमिया, सीता भद्दा य अट्ठमा ॥  
 —वही 97/2
159. तत्तो अलंबुसा 1 मिसकेती (सी) 2 तह पुंडरि (री)गिणी 3 चेव ।  
 वारुणि 4 आसा 5 सव्वा 6 सिरी 7 हिरी 8 चेव उत्तरओ ॥  
 अलंबुसा मिस्सकेसी, पोंडरिगी य वारुणी ।  
 आसा सव्वगा चेव, सिरी हिरी चेव उत्तरतो ॥  
 —वही, 98/2
426. बेंटुट्ठाइं (?) सुरभिं जल-थलयं दिव्वकुसुमणीहारिं ।  
 पयरेंति समंतेण दसद्धवन्नं कउसुमवासं ॥  
 वेट्टट्ठाइं सुरभिं जलथलयं दिव्वकुसुमणीहारिं ।  
 पइरंति समन्तेणं दसद्धवणं कुसुमवासं ॥  
 —आवश्यक निर्युक्ति 546
534. भरहे सेज्जंसजिणो, एरवए जुत्तिसेणजिणचंदो ।  
 दस वि सवणजोएणं सिद्धिगया पुव्वसूरम्मि ॥  
 —तित्थोगाली
535. एवमसीति जिणिंदा अट्ठमयट्ठाणनिट्ठवियकम्मा ।  
 दससु वि खेत्तेसेए सिद्धिगया पुव्वसूरम्मि ॥  
 —तित्थोगाली

848. गुणभवणगहण ! सुयरयणभरिय ! दंसणविसुद्धरच्छागा !।  
संघनगर ! भद्दं ते अक्खंडचरितपागारा !।।

गुण-भवणगहण! सुय-रयणभरिय! दंसण-विसुद्धरत्थागा।  
संघनगर! भद्दं ते, अक्खण्ड-चारित्त-पागारा।।

—नंदीसूत्र, मुनि मधुकर-4

849. भद्दं सीलपडागूसितस्स तवनियमतुरगजुत्तस्स।

संघरहस्स भगवतो सज्झायसुनंदिघोस्स।।

भद्दं सीलपडागूसियस्स, तव-नियम-तुरगजुत्तस्स।

संघ-रहस्स भगवओ, सज्झाय-सुनंदिघोसस्स।।

—नंदीसूत्र, मुनि मधुकर-6

850. संजम-तवतुंबारयस्स नमो सम्मत्तपारिअल्लस्स।

अप्पडिचक्कस्स जतो होउ सता संघचक्कस्स।।

संजम-तव-तुंबारयस्स, नमो सम्मत्त-पारियल्लस्स।

अप्पडिचक्कस्स जओ, होउ सया संघ-चक्कस्स।।

—नंदीसूत्र, मुनि मधुकर-5

851. कम्मजलविसोहिसमुभ्वस्स सुयरयणदीहनालस्स।

पंचमहव्वयथिरकणियस्स गुणकेसरालस्स।।

कम्मरय-जलोह-विणिग्गयस्स, सुय-रयण-दीहनालस्स।

पंचमहव्वय-थिरकन्नियस्स, गुण-केसरालस्स।।

—नंदीसूत्र, मुनि मधुकर-7

852. सावगजणमहुयरिपरिवुडस्स जिणसूरतेबुद्धस्स।

संघपउमस्स भद्दं समणगणसहस्सपत्तस्स।।

सावग-जण-महुअरि-परिवुडस्स, जिणसूरतेयबुद्धस्स।

संघ-पउमस्स भद्दं, समणगण-सहस्सपत्तस्स।।

—नंदीसूत्र, मुनि मधुकर-8

946. सोलसवासा मणुया पणत्तुए णत्तुए य दच्छिंति ।  
ऊणगछव्वरिसाओ तदा पयाहिंति महिलाओ ॥  
—सम्पादक कल्पित

986. तेण हरिया य रुक्खा तण—गुम्म—लया—वणप्फतीओ य ।  
अमियस्स किरणजोणी पंचत्तीसं अहोरत्ता ॥  
—सम्पादक कल्पित

1060. वरवरिया घोसिज्जइ किमिच्छगं दिज्जए बहुविहीयं ।  
सुरअसुर—देव—दाणव—नरिंदमहियाण निक्खमणे ॥  
वरवरिया घोसिज्जइ किमिच्छगं दिज्जए बहुविहीयं ।  
सुरअसुर—देव—दाणव—नरिंदमहियाण निक्खमणे ॥  
—आवश्यक निर्युक्ति, 219

1061. एगा हिरण्णकोडी अट्ठेव अणूणगा सयसहस्सा ।  
सूरोदयमाईअं दिज्जइ जा पायरासाओ ॥  
एगा हिरण्णकोडी अट्ठेव अणूणगा सयसहस्सा ।  
सूरोदयमाईअं दिज्जइ जा पायरासाओ ॥  
—आवश्यक निर्युक्ति, 217

1062. तिन्नेव य कोडिसया अट्ठासीइं च हुति कोडीओ ।  
असिइं च सयसहस्सा एअं संवच्छरे दिण्णं ॥  
तिन्नेव य कोडिसया अट्ठासीइं च हुति कोडीओ ।  
असिइं च सयसहस्सा एअं संवच्छरे दिण्णं ॥  
—आवश्यक निर्युक्ति, 220

1115. महापउमे 1 य सुरदेवे 2 सुपासे 3 य सयंपभे 4 ।  
सव्वाणुभूति अरहा 5 देवगुत्तो 6 य होहिही ॥

1116. उदगे 7 पेढालपुत्ते 8 य पोट्टिले 9 सयगे 10 त्ति य ।  
मुणिसुव्वते 11 यं अरहा सव्वभावविहंजणे 12 ॥

1117. अममे 13 निक्कसाए 14 य निप्पुलाए 15 य निम्ममे ।  
चित्तगुत्ते 16 समाहि 17 य आगमेसाए होहिति ॥
1118. संवरे 18 अणियट्ठी 19 य विवागे 20 विमले 21 त्ति य ।  
देवोववायए अरहा 22 अणंत 23 विजए 24 ति य ॥
1119. एते वुत्ता चउव्वीसं भरहे वासम्मि केवली ।  
आगमेसाए होहिति धम्मतिथस्स देसगा ॥  
महापउमे सूरेवे सूपासे य सयंपभे ।  
सव्वाणुभूर्इ अरहा देवस्सुए य होक्खई ॥  
उदए पेढालपुत्ते य पोटिटले सत्तकित्ति य ।  
मुणिसुव्वए य अरहा सव्वभावविऊ जिणे ॥  
अममे निक्कसाए य निप्पुलाए य निम्ममे ।  
चित्तउत्ते समाही य आगमिस्सेण होक्खइ ॥  
संवरे अणियट्ठी य विजए विमले ति य ।  
देवोववाए अरहा अणंतविजए इ य ॥  
एए वुत्ता चउव्वीसं भरहे वासम्मि केवली ।  
आगमिस्सेण होक्खंति धम्मतिथस्स देसगा ॥

—पांचों गाथाएं समवायांग, संपा.— मुनि मधुकर 667/74—78

1121. सिद्धत्थे 1 पुन्नघोसे 2 य केवली सुयसागरे 3 ।  
(?पुप्फकेऊ 4) य अरहा समाहिं पडिदिसंतु मे ॥
1122. सुमंगले 5 अत्थसिद्धे 6 यण नेव्वाणे 7 य महायसे 8 ।  
धम्मज्झए 9 य अरहा समाहिं पडिदिसंतु मे ॥
1123. सिरिचंदे 10 दढकेत्ते(?कित्ती) 11 महाचंदे 12 य केवली ।  
दीहपासे 13 य अरहा समाहिं पडिदिसंतु मे ॥
1124. सुव्वए 14 य सुपासे 15 य अरहा य सुकोसले 16 ।  
अणंतपासी 17 य अरहा समाहिं पडिदिसंतु मे ॥

(?पुण्णघोसे 18 महाघोसे 19 सव्वाणंदे 20 य केवली।  
सच्चसेणे 21 य अरहा समाहिं पडिदिसंतु मे।।)

1125. विमले 22 उत्तरे चेव अरहा य म(?हाब)ले 23।

देवाणंदे 24 य अरहा समाहिं पडिदिसंतु मे।।

सुमंगले य सिद्धत्थे णिव्वाणे य महाजसे।

धम्मज्झए य अरहा आगमिस्साण होक्खई।।

सिरिचंदे पुप्फकेऊ महाचंदे य केवली।

सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होक्खई।।

सिद्धत्थे पुण्णघोसे य महाघोसे य केवली।

सच्चसेणे य अरहा आगमिस्साण होक्खई।।

सूरसेणे य अरहा महासेणे य केवली।

सव्वाणंदे य अरहा देवउत्ते होक्खई।।

सुपासे सुव्वए अरहा अरहे य सुकोसले।

अरहा अणंतविजए आगमिस्साण होक्खई।।

विमले उत्तरे अरहा अरहा य महाबले।

देवाणंदे य अरहा आगमिस्साण होक्खई।।

एए वुत्ता चउव्वीसं एरवयमिम केवली।

आगमिस्साण होक्खंति धम्मतित्थस्स देसगा।।

—पांचों गाथाएं समवायांग, संपा. मुनि मधुकर, 674/89-95

1147. नंदी 1 य नंदिमित्ते 2 सुंदरबाहू 3 य तह महाबाहू 4।

अइबल 5 महब्बले 6 या भद्द 7 दिविट्ठू 8 तिविट्ठू 9 य।।

1148. कणहा उ, जयंति(तS)जिए1-2 (भद्दे 3) सुप्पभ4 सुदंसणे5चेव।

आणंदे 6 नंदणे 7 पउमे नाम 8 संकरिसणे 9 चेव।।

नंदे य नंदिमित्ते दीहबाहू तहा महाबाहू।

अइबले महाबले बलभद्दे य सत्तमे।।

दुविट्टू य तवट्टू आगमिस्साण वण्हणो ।

जयंते विजये भददे सुप्पमे य सुदंसणे ।।

आणंदे नंदणे पउमे संकरिसणे अ अपच्छिमे ।

—दोनों गाथाएं समवायांग, संपा. मुनि मधुकर, 672 / 85—86, 1/2

इस प्रकार अन्य ग्रंथों से तथा कल्पना से रचित कुल 30 गाथाएं शामिल किये जाने का उल्लेख प्राप्त होता है। इनको निकाल देने के बाद शेष गाथाओं की संख्या 1233 न रहकर 1231 ही होती है। इनकी गाथा संख्या के निर्धारण के लिए दूसरी दृष्टि से विचार करने पर समाधान प्रतीत होता है। तित्थोगाली प्रकीर्णक के गाथाओं की पुनरावृत्ति इसी ग्रंथ में अधिक हुई है। इसके अलावा अन्य प्रकीर्णकों में भी इसकी गाथाएं मिली हैं। तित्थोगाली प्रकीर्णक में इसकी 27 गाथाओं की पुनरावृत्ति हुई है। इनमें से एक 848वीं गाथा नंदीसूत्र से भी समान है। इसका उल्लेख पहले आ चुका है। इस प्रकार पुनरावृत्त गाथाओं की संख्या 26 है। मूलाचार की एक तथा तिलोयपण्णत्ति की एक गाथा तित्थोगाली में प्राप्त होती हैं। अन्य पूर्ववर्ती प्रकीर्णकों से इसमें 27 गाथाएं ली गई हैं। ये हैं— देवेन्द्रस्तव से 16, मरणविभक्ति से 5, तंदुलवैचारिक से 2, चंदावेज्जय से 3 तथा दीवसागरपण्णत्ति और महापच्चक्खाण से मिलाकर 1 गाथा है। आदि मंगल और अंतिम मंगल में कुल दस गाथाएं हैं जिसे इसमें से हटा देने पर कुल 95 गाथाएं कम हो जाती हैं। इसके बाद प्रस्तुत प्रकीर्णक में मूल रूप से कुल 1166 गाथाएं रह जाती हैं।

इन पुनरावृत्त व अन्य प्रकीर्णकों से आगत गाथाओं का विवरण निम्न प्रकार है—

56+1163. मणिगण 1 दीवसिहा 2 वि य तुडियंगा 3 भिंग 4 तह य कोवीणा 5 ।  
उरुस (?सु)ह 6 आमोय 7 पमोया 8 चित्तरसा 9 कप्परुक्खा 10 ।।

58+1165. कोवीणे आभरणं 5, उदूसुहे भोगवन्नगविहीओ 6 ।  
आमोएसु य व(म)ज्जं 7, मल्लविहीओ पमोएसु 8 ।।

59+1166. चित्तरसेसु य इट्ठा नाणाविहभक्ख—भोयणविहीओ 9 ।  
पेच्छामंडवसरिसा बोधव्वा कप्परुक्खा 10 य ।।

- 61+1168. दोगाउयमुव्विद्धा ते पुरिसा ता य होंति महिलाओ ।  
दोन्नि पलिओवमाइं परमाउं तेसि बोधव्वं ॥
- 67+1158. मूल-फल-कंद-निम्मलनाणाविहइट्ठगंध-रसभोगी ।  
ववगयरोगायंका सुरूव सुरदुंदुभि (भी) थणिया ॥
- 68+1159. सच्छंदवणवियारी ते पुरिसा, ता य होंति महिलाओ ।  
निच्चोउगपुप्फ-फला ते वि य रुक्खा गुणसहीणा ॥
- 134+1035 नाणारयणविचित्ता वसुधारा निवडिया कलकलंती ।  
गंभीरमहुरसद्दो य दुंदुभी तालिओ गगणे ॥
- 275+1048 असियसिरया सुनयणा बिंबोट्ठा धवलदंतपंतीया ।  
वरपउमगभगोरा फुल्लुपलगंधनीसासा ॥
- 373+377 चुलसीति 1 बावत्तरि 2 सट्ठी 3 पण्णास 4 चत्त 5 तीसा 6 य ।  
वीसा 7 दस 8 दो 9 एगं 10 च होंति पुव्वाण लक्खाइं ॥
- 535+549 एवमसीति जिणिंदा अट्ठमयट्ठाणनिट्ठवियकम्मा ।  
दससु वि खेत्तेसेए सिदिधगया पुव्वरत्तम्मि ॥
- 811+1151 एते खलु पडिसत्तू कित्तीपुरिसाण वासुदेवाणं ।  
सव्वे य चक्कजोही सव्वे वि हया सचक्केहिं ॥
- 656+684 किं तूरसि मरिउं जे निसंस! किं बाहसे समणसंघं ।  
सव्वं ते पज्जत्तं नणु कइवाहं पडिच्छामि" ॥
- 664+667+670 आलोइयनियसल्ला पच्चक्खाणेसु निच्चमुज्जुत्ता ।  
उच्छिप्पिहिंति साहू गंगाए अग्गवेगेणं ॥
- 666+669 'सामियसणंकुमारा! सरणं ता होहि समणसंघस्स' ।  
इणमो वेयावच्चं भणमाण्णं न वट्ठिहिति ॥
- 880+1044 रिदिधत्थिमियसमिद्धं भारहवासं जिणिंदकालम्मि ।  
बहुअइसयसंपण्णं सुरलोगसमं गुणसमिद्धं ॥
- 881+1045 गामा (य) नगरभूया, नगराणि य देवलोगसरिसाणि ।  
रायसमा य कुडुंबी, वेसमणसमा य रायाणो ॥

- 883+1105 धम्माधम्मविहन्नू विणयन्नू सच्च-सोयसंपन्नो ।  
गुरु-साहुपूयणरओ सदरनिरतो जणो तइया ॥
- 884+1106 अप्प(?ग्ध)इ य सविण्णाणो, धम्मे य जणस्स आयरो तइया ।  
विज्जापुरिसा पुज्जा, धरिज्जइ कुलं च सीलं च ॥
- 957+972 सेसं तु बीयमेत्तं होही सव्वेसि जीवजातीणं ।  
कुणिमाहारा सव्वे निसा(स्सा)ए संझकालस्स ॥
- 958+973 रहपहमेत्तं तु जलं होही बहुमच्छ-कच्छभाइण्णं ।  
तम्मि समए नदीणं गंगादीणं दसण्हं पि ॥
- 1026+1029 गय1 उसभ 2 सीह 3 अभिसेय 4 दाम 5 ससि 6 दिणयरं  
7 झयं 8 कुभं 9 ।  
पउमसर 10 सागर 11 भवणविमाण 12 रयणुच्चय 13  
सिहिं 14 च ॥
- 1027+1030 एते चोद्दस सुमिणे पासइ भद्दा सुहेण पासुत्ता ।  
जं रयणिं उववण्णो कुच्छंसि महायसो पउमो ॥
- 1050+1052 अह तं अम्मा-पितरो जाणित्ता अहियअट्ठवासागं ।  
कयकोउगऽलंकारं लेहायरियस्स उवणेति ॥
- 1162+67+71 जह जह वड्ढति कालो तह तह वड्ढति आउ-दीहादी ।  
उवभोगो य नराणं तिरियाणं चेव रुक्खेसु ॥

कुल 26 गाथाएं

अन्य प्रकीर्णकों से आगत गाथाएं

यहां तित्थोगाली की गाथाओं को पूरा दिया गया है जबकि अन्य प्रकीर्णक और उसकी मिलती गाथा की क्रम संख्या निर्देशित है ।

158. नंदुत्तरा 1 य नंदा 2 आणंदा 3 नंदिबद्धणा 4 चेव ।

विजया 5 य वेजयंती 6 जयंति 7 अवराइअट्ठमिया 8 ॥

दीवसागरपण्णत्ति 128

924. एव परिहायमाणे लोगे चंदो व्व कालपक्खम्मि ।  
जे धम्मिया मणुस्सा सुजीवियं जीवियं तेसिं ॥  
तंदुलवैचारिक 75
1193. जड्डाणं चड्डाणं निव्विण्णाणेण निव्विसेसाणं ।  
संसारसूयराणं कहियं पि निरत्थयं होइ ॥  
तंदुलवैचारिक 168
1200. सामण्णमणुचरंतस्स कसाया जस्स उक्कडा होंति ।  
मन्नामि उच्छुपुप्फं व निप्फलं तस्स सामइयं ॥  
चंदावेज्झय 142
1201. जं अज्जियं चरित्तं देसूणाए (वि) पुव्वकोडीए ।  
तं पि कसाइयमित्तो नासेइ नरो मुहुत्तेणं ॥  
चंदावेज्झय 143
1203. जह जह दोसोवरमो, जह जह विसएसु होइवेरगं ।  
तह नायव्वं तं खलु आसन्नं मे पदं परमं ॥  
मरणविभक्ति 632
1204. दुग्ग(ग्गे) भवकंतारे भममाणेहि सुइरं पणट्ठेहिं ।  
दुलभो जिणोवइट्ठो सोगइमग्गो इमो लद्धो ॥  
मरणविभक्ति 633
1205. इणमो सुगतिगतिपहो सुदेसिओ उज्जुओ जिणवरेहिं ।  
ते धन्नो जे एयं पहमणवज्जस्स मोतिण्णा ॥  
मरणविभक्ति 630
1206. जाहे य पावियव्वं इह परलोगे य होइ कल्लाणं ।  
ताहे जिणवरभणियं पडिवज्जइ भावतो धम्मं ॥  
मरणविभक्ति 631
- 1217 भट्ठेण चरित्तओ सट्ठुतरं दंसणं गहेयव्वं ।  
सिज्झंति चरणहीणा, दंसणहीणा न सिज्झंति ॥  
चंदावेज्झय 600

1223. जं अन्नाणी कम्मं खवेइ बहुयाहि वासकोडीहिं ।  
तं नाणी तिहि गुत्तो खवेइ ऊसासमेत्तेणं ॥  
मरणविभक्ति 135
1226. असरीरा जीवघणा उवउत्ता दंसणे य नाणे य ।  
सागारमणागारं लक्खणमेयं तु सिद्धाणं ॥  
देवेन्द्रस्तव 294
1228. निम्मलदगरयवन्ना तुसार-गोखीर-हारसरिवन्ना ।  
भणिया उ जिणवरेहिं उत्ताणगछत्तसंठाणा ॥  
देवेन्द्रस्तव 278
1230. पणयालीसं आयाम-वित्थडा होइ सतसहस्साइं ।  
तं पि तिगुणं विसेसं परीरओ होइ बोधव्वो ॥  
देवेन्द्रस्तव 279
1231. एगा जोयणकोडी बायालीसं च सयसहस्साइं ।  
तीसं च सहस्साइं दो य सया अउणवीसा(णपण्णा) उ ॥  
देवेन्द्रस्तव 280
1236. कहिं पडिहया सिद्धा ? कहिं सिद्धा पइट्ठिया ? ।  
कहिं बोदी चइत्ताणं कत्थ गंतूण सिज्झई ? ॥  
देवेन्द्रस्तव 285
1237. अलोए पडिहया सिद्धा, लोयग्गे य पइट्ठिया ।  
इहं बोदी चइत्ताणं तत्थ गंतूण सिज्झई ॥  
देवेन्द्रस्तव 286
1239. जं संठाणं तु इहं भवं चयंतस्स चरिमसमयम्मि ।  
आसी य पएसघणं तं संठाणं तहिं तस्स ॥  
देवेन्द्रस्तव 287
1242. चत्तारि य रयणीओ रयणितिभागूणिया य बोधव्वा ।  
एसा खलु सिद्धाणं मज्झिमओगाहणा भणिया ॥  
देवेन्द्रस्तव 290

1244. जत्थ य एगो सिद्धो तत्थ अणंता भवक्खयविमुक्का ।  
अन्नोन्नसमोगाढा पुट्ठा सव्वे य लोगंते ॥  
देवेन्द्रस्तव 293
1245. फुसइ अणंते सिद्धे सव्वपदेसेहिं नियमसो सिद्धो ।  
ते वि असंखेज्जगुणा देस-पदेसेहि जे पुट्ठा ॥  
देवेन्द्रस्तव 295
1246. केवलनाणुवउत्ता जाणंती सव्वभावगुणभावे ।  
पासंति सव्वओ खलु केवलदिट्ठीअ(हS)णंताहिं ॥  
देवेन्द्रस्तव 296
1247. न वि अत्थि माणुसाणं ते सोक्खं न वि य सव्वदेवाणं ।  
जं सिद्धाणं सोक्खं अवाबाहं उवगयाणं ॥  
देवेन्द्रस्तव 299
1248. सुरगणसुहं समत्तं सव्वद्धापिंडितं अणंतगुणं ।  
न वि पावइ मुत्तिसुहं णंताहि वि वग्गवग्गूहिं ॥  
देवेन्द्रस्तव 298
1249. सिद्धस्स सुहो रासी सव्वद्धापिंडिओ जइ हवेज्जा ।  
सोऽणंतभागभइओ सव्वागासे न माएज्जा ॥  
देवेन्द्रस्तव 300
1250. जह नाम कोइ मेच्छो नगरगुणे बहुविहे विजाणंतो ।  
न चएइ परिकहेउं उवमाए तहिं असंतीए ॥  
देवेन्द्रस्तव 301
1252. जह सव्वकामगुणितं पुरिसो भोत्तूण भोयणं कोई ।  
तण्हा-छुहाविमुक्को अच्छेज्ज जहा अमयतित्तो ॥  
देवेन्द्रस्तव 303
- कुल - 27 गाथाएं

## प्रकीर्णकेत्तर गाथाएं

तित्थोगाली गाथाएं पूर्ववत् दी गई हैं जबकि अन्य ग्रंथों का संकेत किया गया है।

448. सपडिक्कमणो धम्मो पुरिमस्स य पच्छिमस्स य जिणस्स ।  
मज्झिमयाण जिणाणं कारणजाए पडिक्कमणं ॥

मूलाचार 1/628

575. अट्ठेव गया मोक्खं, सुहुमो बंभो य सत्तमिं पुढविं ।  
मघवं सणंकुमारो सणंकुमारं गया कप्पं ॥

तिलोयपण्णत्ति 1410

कुल – दो गाथाएं

गाथा संख्या 1 से लेकर गाथा संख्या 6 तक आदि मंगल तथा गाथा 1258 से लेकर गाथा 1261 तक अंतिम मंगल

इस प्रकार कुल 95 गाथाएं कम करने पर बाकी 1166 गाथाएं शेष रहती हैं। इस समस्या के समाधान के लिए गाथा संख्या को निर्देशित करने वाली गाथा का अर्थ दूसरे तरह से किये जाने पर उपरोक्त 1166 संख्या पूरी हो जाती है। अंतिम 1261वीं गाथा का अर्थ इस प्रकार कर सकते हैं।

## गाथा

तेत्तीसं गाहाओ दोन्नि सता ऊ सहस्समेगं च ।

तित्थोगालीए संखा एसा भणिया उ अंकेण ॥

यहां अर्थ किया जा सकता है— तेत्तीसं गाहाओ दोन्नि अर्थात् तैंतीस गाथा का दोगुना 66 सता अर्थात् 100 और सहस्समेगं अर्थात् 1000 । इस प्रकार 1166 की संख्या पूरी हो जाती है।

इसके साथ एक तथ्य यह है कि जो गाथाएं दूसरे ग्रंथों से प्रक्षिप्त नहीं मानी गयी है उसे ग्रंथ में से कम नहीं किया जा सकता है। इस दृष्टि से विचार करने पर उपरोक्त गाथाओं में से केवल तित्थोगाली प्रकीर्णक में ही

पुनरावृत्त गाथाएं ही कम करने को बच जाती हैं। इनकी संख्या 27 हैं। (इनमें 848वीं गाथा की पुनरावृत्ति 1258वीं गाथा है जो एक बढ़कर 27

हो जाती हैं।) इसके साथ अंतिम गाथा जो संख्या का निर्देश करती हैं, मिलाकर 28 हो जाती हैं। इसे 1261 में से कम करने पर 1233 गाथाएं शेष रह जाती हैं। इस तरह ग्रंथ की अंतिम गाथा की पुष्टि की जा सकती है।

इस ग्रंथ का अनुवाद करते समय मुझे कई गाथाओं पर कई-कई दिनों तक अटकना पड़ा। गाथा के अर्थ ठीक से नहीं हो पा रहे थे या अर्थ जैन धर्म या परंपरा के उलट हो जा रहे थे। इसके बाद मैंने छन्दों के आधार पर जब दो-एक गाथाओं को परखा तो वे छंद में अधूरे सिद्ध हुए। जब उन गाथाओं के चारों चरणों को अलग कर उनके प्रत्येक पाद को छंद की दृष्टि से कसा तो कई के अर्थ ठीक हो गए। तब मैंने पूरे ग्रंथ के 1261 गाथाओं को छन्द की दृष्टि से अध्ययन किया। यह अध्ययन मुनि पुण्यविजय जी द्वारा संपादित संस्करण पर ही आधारित था, क्योंकि वर्तमान में संभवतः वही संस्करण प्रामाणिक और उपलब्ध भी है। इसके बाद पूरे ग्रंथ में 98 गाथाओं के किसी न किसी पाद में छंद उणाधिक थे। उन्हें ठीक करने से अनुवाद का श्रम काफी हल्का हो गया। इस पर आधारित एक लंबा शोध लेख मैंने तैयार किया। इसे अखिल भारतीय प्राच्य विद्या सम्मेलन, बड़ौदा में प्रस्तुत किया और यही शोध लेख पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी की शोध पत्रिका 'श्रमण' के जनवरी-मार्च 1999 अंक में प्रकाशित हुआ था। यहां मैं भूल सुधार के तौर पर उस लेख से गाथाओं की छन्द पूर्ति से संबंधित हिस्से का यहां उल्लेख करना समीचीन समझता हूं।

प्रस्तुत तित्थोगाली प्रकीर्णक में सर्वाधिक गाथाएं 'गाथा' छन्द में निबद्ध हैं। मात्र 20 पद्य अनुष्टुप छन्द की, 6 पद्य 'गाहू' छन्द की और 7 पद्य 'उद्गाथा' छन्द में निबद्ध हैं। इनमें अनुष्टुप की 20 पद्यों में से 5 (गाथा 1115 से 1119 तक) गाथाएं समवायांग में प्राप्त होती हैं, जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है। सात गाथाएं (1121 से 1127 तक) समवायांग सूत्र के आधार पर ही रची गयी प्रतीत होती हैं। शेष 1228 पद्य 'गाथा' छन्द में निबद्ध हैं। पर ये सभी मात्रा की दृष्टि से पूर्ण नहीं हैं। इनमें मात्र 521

गाथाएं ही मात्रा की दृष्टि से पूर्ण हैं। अर्थात् इनके पूर्वार्द्ध में 30 मात्राएं और उत्तरार्द्ध में 27 मात्राएं हैं। शेष 382 गाथाएं ऐसी हैं। जिनके पूर्वार्द्ध

या उत्तरार्द्ध में एक मात्रा कम है, 103 गाथाओं के पूर्वार्द्ध या उत्तरार्द्ध में एक मात्रा अधिक है। 15 गाथाओं के पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध दोनों में एक-एक मात्रा अधिक है। 77 गाथाओं के दोनों अर्द्धालियों में एक-एक मात्रा कम है तथा 32 गाथाओं के पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध में से एक में एक मात्रा कम तथा दूसरे में एक मात्रा अधिक है। इन गाथाओं में अंतिम गण के अंत लघु को गुरु कर या अंत गुरु मात्रा को लघु कर छंद की मात्रा पूरी कर ली गयी है। ऐसी कुल (382+103+15+77+32) 609 गाथाएं हैं। इस प्रकार (521+609) अर्थात् 1130 गाथाएं पूर्ण हैं। इनमें अनुष्टुप के 20, ग्राहू के 6 और उद्गाथा के 7 पद्य जोड़ देने पर 1163 पद्य छन्द की दृष्टि से पूर्ण हो जाते हैं। इनमें ग्राहू के 2 और उद्गाथा के 2 पद्य में भी अंतिम लघु का गुरु कर मात्रा पूरी की गयी है। इसके पश्चात शेष बचे हुए 98 गाथा के पाठ मात्रा की दृष्टि से अपूर्ण है। इन्हें छन्दों के आधार पर पुनिर्निर्धारित किया गया है। ये गाथाएं हैं—

56. मणिगण 1 दीवसिहा 2 वि य तुडियंगा 3 भिंग 4 तह य कोवीणा 5 ।  
उरुस (?सु)ह 6 आमोय 7 पमोया 8 चित्तरसा 9 कप्परुक्खा 10 ।।  
प्रस्तुत गाथा के उत्तरार्द्ध में 27 की जगह 28 मात्राएं हैं और अंतिम लघु है जिसे कम नहीं किया जा सकता। यहां पमोया शब्द की जगह पमोय कर देने से 27 मात्रा पूर्ण हो जाती हैं।
67. मूल—फल—कंद—निम्मलनाणाविहइट्ठगंध—रसभोगी ।  
ववगयरोगायंका सुरुव सुरदुंदुभि (भी) थणिया ।।  
प्रस्तुत गाथा के उत्तरार्द्ध के कोष्ठक के पाठान्तर भी को भि की जगह रखने से मात्रा पूर्ण हो जाती हैं।
70. ओसप्पिणीइमीए तइयाए समाए पच्छिमे भाए ।  
पलिओवमट्ठभागे सेसम्मि उ कुलगरुप्पत्ती ।  
यहां पूर्वार्द्ध के तइयाए समाए के दोनों ए को विकल्प से लघु मान लेने पर मात्रा पूर्ण हो जाती है।
92. ओसप्पिणीइमीसे तइयाए समाए पच्छिमे भागे ।  
चइरुण विमाणओ उत्तरसाढाहिं नक्खत्ते ।।

यहां भी पूर्वार्द्ध के तइयाए समाए के ए को लघु तथा उत्तरार्द्ध के विमाणाओ के ओ को लघु कर देने पर मात्रा पूर्ण हो जाती है। यहां यह ध्यान देने की बात है कि सानुस्वार इकार तथा हिकार एवं शुद्ध अथवा व्यंजनयुक्त एकार, ओकार संयुक्त रेफ तथा हकार से पूर्व का वर्ण—ये सभी विकल्प से गुरु होते हैं।<sup>4</sup>

151. तो तं दसद्धवण्णं पिंडग (?भू) यं छमायले विमले।  
सोहइ नवसरयम्मि व सुनिम्मलं जोइसं गयणे।।  
इसमें 'यं' के पहले के कोष्ठक के 'भू' को जोड़ देने पर अर्थ की स्पष्टता और मात्रा की पूर्णता हो जाती है इसी प्रकार 152वीं गाथा के पूर्वार्द्ध के मूल 'क' को हटा कर कोष्ठक के 'य' और 'क्कं' को मूल गाथा में लाकर 'दिसियक्कं' कर देने से अर्थ स्पष्ट होने के साथ मात्रा भी पूर्ण होती है। वर्तमान का 'दिसिक' शब्द अर्थ की दृष्टि से अप्रासंगिक है। कोष्ठक का 'मघ' शब्द यहां अप्रासंगिक लगता है। गाथा इस प्रकार है।
152. तह कालागरु—कुंदुरुयधूवमघ (मघ) मघंतदिसि (?य) कं (क्कं)।  
काउं सुरकण्णाओ चिट्ठंति पगायमाणीओ।।  
यह 'गाहू' छन्द के अंतर्गत आता है।
159. तत्तो अलंबुसा 1 मिसकेती (सी) 2 तह पुंडरि (री)गिणी 3 चेव।  
वारुणि 4 आसा 5 सव्वा 6 सिरी 7 हिरी 8 चेव उत्तरओ।।  
यहां पूर्वार्द्ध के री शब्द को मूल के 'रि' के स्थान पर रखने पर और अंतिम मात्रा को गुरु कर देने से 30 मात्रा हो जाएगी।
225. छज्जंति सुरवरिदा उच्छंगगए जिणे धरेमाणा।  
अभिणवजाए कंचणदुमे व्व पवर (?रे) धरेमाणा।।  
यहां उत्तरार्द्ध में अंत गुरु मात्रा होने से 'पवर' शब्द के र के स्थान पर रे रखकर मात्रा पूर्ण की गयी है।
229. सव्वोसहि—सिद्धत्थग—हरियालिय—कुसुमगंधचुण्णे य।  
आणेंति ते पवित्तं दह—नइ—तडमहि(टिट)यं च सुरा।।

प्रस्तुत गाथा के उत्तरार्द्ध के 'नइ' का वैकल्पिक रूप 'नई' या नदी रखने पर गाथा पूर्ण होती है।

231. अभिसिंचइ दस वि जिणे सपरि(री)वारो पहट्टमुहकमलो।  
पहयपडुपडह-दुंदुहि-जयसद्दुग्घोसणरवेणं॥

प्रस्तुत गाथा के पूर्वार्द्ध में 'सपरिवारो' शब्द के रि की जगह री रख देने से पाठ पूर्ण हो जाता है।

242. ससुरासुरनिग्घोसो कहकह-उक्कडि(टिठ) कलयलसणाहो।  
सुव्वइ दससु दिसासुं पक्खुहियमहोदहिसरिच्छो॥

यहां पूर्वार्द्ध में 'उक्कडि' (छिन्न) के बदले प्रसंगानुसार 'उक्कटिठ (हर्षध्वनि) शब्द उचित है तथा छन्द भी पूरा हो जाता है।

261. सुट्टुयरं जेसिं पुण कुसु (स्सु)इपुण्णा निरंतरं कण्णा।  
भावेण भण्णमाणं निसुणंतु सुराऽसुरा सव्वे॥

यहां पूर्वार्द्ध में कुसइ कुश्रुति का व्याकरणसम्मत प्राकृत रूप नहीं है। 'श्रु' के र् का सर्वत्रलवरांवन्द्रे<sup>5</sup> सूत्र से लोप होने के बाद अनादौशेषादेशौद्वित्वं<sup>6</sup> सूत्र से शेष स' होकर कुस्सुई होना चाहिए। यहां पाठान्तर का कुस्सुई पाठ उचित लगता है।

268. चुण्णं नाणावण्णं वत्थाणि य बहुविहप्पगाराइं।  
मुक्काइं सहरिसेहिं सुरेहिं रयणाणि य बहूणि॥

यहां उत्तरार्द्ध के तृतीय बहुवचन के रूप 'सहरिसेहिं सुरेहिं' के अनुस्वार रहित रूप 'सहरिसेहि सुरेहि' का अन्त लघु को गुरु किया गया।

308. हेट्ठिमगेवेज्जाओ संभव, पउमप्पहं उवरिमाओ।  
मज्झिमगेवेज्जचुयं वंदामि जिणं सुपासरिसिं॥

उपरोक्त गाथा के उत्तरार्द्ध में गेज्ज शब्द अप्रासंगिक है। यहां विमान से च्युत होने का प्रसंग है। 'ग्रैवेयक' का प्राकृत रूप 'गेवेज्ज' होता है। इससे छन्द पूर्ति भी हो जाती है।

314. उसभो य भरहवासे, (?य) बालचंदाणणो य एरवए ।  
एगसमएण जाया दस वि जिणा विस्सदेवाहिं॥

उपरोक्त गाथा के पूर्वार्द्ध के कोष्ठक के य शब्द को मूल गाथा में शामिल कर देने से पादपूर्ति हो जाती है।

349. उंसभो य भरहवासे, (? य) बालचंदाणणो य एरवए।  
अजिओ य भरहवासे, एरवयम्मि य सुचंदजिणो।।  
उपरोक्त गाथा में कोष्ठक के य को मूल में शामिल कर पादपूर्ति कर दी गयी है।
373. चुलसीति 1 बावत्तरि 2 सट्ठी 3 पन्नास 4 चत्त 5 तीसा 6 य।  
वीसा 7 दस 8 दो 9 एगं 10 च हुंति पुव्वाण लक्खाइं।।  
इसमें पूर्वार्द्ध के 'सट्ठी' शब्द का प्रतिपाठ सट्ठि त्ति है जिसे मूल में ले आने पर छन्द पूर्ण हो जाता है।
374. चुलसीति 11 बावत्तरि 12 (?य) सट्ठि 13 तीस 14 दस 15 पंच 16 तिन्नेव 17।  
एगं च सयसहस्सं 18 वासाणं होति विन्नेयं।।  
यहां पूर्वार्द्ध में कोष्ठक के य शब्द को मूल गाथा में शामिल कर छन्द पूरा किया गया है।
382. चुलसीती 1 बावत्तरि 2 (?य) सट्ठि 3 तीस 4 दस वासलक्खाइं 5।  
पण्णट्ठि सहस्साइं 6 छप्पन्ना 7 बारसेगं 8-9 च।।  
इसमें पूर्वार्द्ध में कोष्ठक के य को मूल गाथा में शामिल कर पादपूर्ति की गयी है।
400. सुमइत्थ निच्चभत्तेणं निग्गओ, वासुपुज्जो जिणे चउत्थेण।  
पासो मल्ली वि य अट्ठमेण, सेसा उ छट्ठेणं।।  
इसमें पूर्वार्द्ध के सभी ओकार और एकार को विकल्प से लघु मात्रा मान ली गयी है।
411. चंपग 20 बउले 21 वेडस 22 धावोडग (? धायइरुक्खे य) 23 सालते 24 चव।  
नाणुप्पयाय रुक्खे जिणेहिं एए अणुग्गहिया।।  
इस गाथा में 'धावोडग' के बदले कोष्ठक में उल्लिखित प्रतिपाठ 'धायइरुक्खे य' रखने से 29 मात्रा होती है। अंत के एक लघु को

गुरु मानकर छन्द पूरा किया गया है। दूसरे धायवृक्ष के लिए धायइरुक्खे<sup>०</sup> प्राकृत में मिलता है। उत्तरार्द्ध के अंतिम मात्रा को लघु कर 27 मात्रा कर दी गयी है।

416. एक्कारसि 1 एक्कारसि 2 पंचमि 3 चाउद्दसी 4 य एक्करसी 5 ।  
पुन्नि 6 छट्ठी 7 पंचमि 8 (पंचमि 9) तह सत्तमी 10 नवमी 11 ॥

यहां उत्तरार्द्ध पंक्ति विषय वर्णन की दृष्टि से अपूर्ण है। यहां कोष्ठक में उपलब्ध पंचमि को मूल गाथा में शामिल कर पादपूर्ति की गयी है।

427. तत्तो य समंतेणं कालागुरु—कुंदुरुक्कमीसेणं ।

गंधेण मणहरेणं (?च) धूवघडियं विउव्वेति ॥

यहां उत्तरार्द्ध में कोष्ठक के च को गाथा में शामिल कर लेने पर तथा अंतिम मात्रा को गुरु कर पादपूर्ति की गयी है।

443. जे भवणवई देवा अवरद्दारे तओ (?य) पविसंति ।

तेणं चिय जोइसिया देवा दइयाजणसमग्गा ॥ पच्छिमदारं ॥

यहां पूर्वार्द्ध में कोष्ठक के य को शामिल कर तथा अंतिम मात्रा को गुरु कर 30 मात्रा पूरी की गयी है।

451. एवं नवसु वि खेत्तेसु पुरिम—पच्छिम(ग)—मज्झिमजिणाणं ।

वोच्छं गणहरसंख जिणाण, नामं च पढमस्स ॥

यहां पूर्वार्द्ध के कोष्ठक के य को पादपूर्ति के लिए लिया गया है।

452. उसभजिणे चुलसीती(य) गणहरा उसभसेणआदीया 1 ।

अजियजिणिंदे नउतिं तु, सीहसेणो भवे आदी 2 ॥

यहां पूर्वार्द्ध के कोष्ठक के य को पादपूर्ति के लिए लिया गया है।

500. दसकोडि (सय) सहस्साइं अंतरं जस्स उदहिनामाणं ।

तं संभवाओ अभिणंदणं विणीयाए उप्पण्णं ॥

इस गाथा के पूर्व और बाद की गाथा में 'सयसहस्साइं' शब्द है।

विषय की क्रमबद्धता की दृष्टि से इसमें भी 'सयसहस्साइं' शब्द होना चाहिए। यहां सय कोष्ठक में है जिसे मूल गाथा में शामिल किया

गया तथा दोनों अर्द्धालियों के अंतिम गुरु को लघु कर छन्द पूरा किया गया। उत्तरार्द्ध के एक की लघुगणना भी की गयी है।

503. पउमाभाओ सुपासं वाणरसिउत्तमं समुप्पणं।

तं सागरोवमाणं कोडि सहस्सेहिं नवहिं जिणं।।

यहां पूर्वार्द्ध में अंतिम गुरु को लघु कर तथा उत्तरार्द्ध में 'सहस्सेहिं नवहिं' शब्द के अनुस्वार को हटाकर मात्रा पूर्ण की गयी है।

506. कोडीहिं नवहिं भदिदलपुरम्मि सीयलजिणं समुप्पणं।

रयणागरोवमाणं वियाण तं पुप्फदंताओ।।

यहां पूर्वार्द्ध के 'कोडीहिं नवहिं' शब्द से अनुस्वार को विकल्प से हटा देने से पाद पूर्ण हो जाता है। प्राकृत में तृतीय बहुवचन के रूप में अनुस्वार का विकल्प व्याकरण सम्मत है।

511. नवहि वियाणसु नवचंपगप्पभं सागरोवम (?सागरा) समुप्पणं।

तमणंतमउज्जाए विमलाओ गतिगयं विमलं।।

यहां 'सागरोवम' के ओकार को लघु तथा अंत गुरु को लघु कर देने से पादपूर्ति हो गयी है।

520. तेसीयसहस्सेहिं सएहिं अद्धट्टमेहिं वरिसेहिं।

नेमीओ समुप्पणं वाराणसिसंभवं पासं।।

यहां पूर्वार्द्ध के 'सएहिं' के ए को लघु कर तथा दोनों अर्द्धालियों के अंतिम गुरु को लघु कर मात्रा पूर्ण की गयी है।

521. वाससएहिं वियाणह अड्ढाइज्जेहिं नाइकुलकेउं।

पासाओ समुप्पणं कुंडपुरम्मी महावीरं।।

यहां पूर्वार्द्ध में तृतीया के रूप क्रमशः 'सएहिं' और अड्ढाइज्जेहिं के अनुस्वार को विकल्प से हटाकर तथा उत्तरार्द्ध के अंत गुरु को लघु कर छन्द पूर्ण किया गया है।

527. उसभो य भरहवासे, बालचंदाणणो य एरवए।

दस वि य उत्तरसाढाहि पूव्वसूरम्मि सिद्धिगया।।

यहां पूर्वार्द्ध में सभी शब्द पूर्ण होने के बावजूद 29 मात्रा है। उत्तरार्द्ध में पूर्व गलत प्रयोग है। यहां 'पूर्व' रूप स्थापित कर देने से 27 मात्रा पूर्ण हो जाती हैं।

579. पुत्तो पयावतिस्सा मियावईकुच्छि संभवो भयवं।  
नामेण(?नामा) तिविट्ठविण्हू आदी आसी दसाराणं॥  
यहां उत्तरार्द्ध के 'तिविट्ठूविण्हू' शब्द की जगह प्रसंग से संबद्ध और ग्रंथ के पाद-टिप्पण में दिये गये पाठान्तर 'तिविहदुविहू' शब्द उचित है। इससे पादपूर्ति भी हो जाती है।
591. अचलस्स वि अमरपरिग्गहाइं एयाइं पवररयणाइं।  
सत्तूणं अजियाइं समरगुणपहाणगेयाइं॥  
यहां पूर्वार्द्ध के 'एयाइं' के ए को तथा अंतिम मात्रा को लघु मानकर मात्रा पूर्ण की गयी हैं।
632. चोरा रायकुलभयं, गंध-रसा जिज्झिहिंति अणुसमयं।  
दुब्भिक्खमणावुट्ठी य नाम प(?ब)लियं पवज्जि(?ज्जी)ही (?)॥  
यहां उत्तरार्द्ध में 'पवज्जिही' शब्द के 'ज्जि' के वैकल्पिक कोष्ठक के 'ज्जी' को रखने पर पाद पूर्ण हो जाता है।
670. आलोइयनिस्सल्ला समणीओ पच्चक्खाइऊण उज्जुत्ता।  
उच्छिप्पिहिंति धणियं गंगाए अग्गवेगेणं॥  
यहां पूर्वार्द्ध में ओकार को लघु मानकर तथा 'पच्चक्खाइऊण' की जगह पच्चक्खाणेसु कर तथा अंत गुरु को लघु मान पादपूर्ति की गयी है।
682. पाडिवतो नामेणं अणगारो ते य सुविहिया समणा।  
दुक्खपरिमोयणट्ठा छट्ठऽट्ठमत(वे) वि काहिंति॥  
यहां उत्तरार्द्ध में कोष्ठक के वे को गाथा में शामिल करने से भाव के बिना परिवर्तन हुए छन्द पूर्ण हो जाता है।
683. रोसेण मिसिमि(संतो) सो कइवाहं तहेव अच्छी य।  
अह नगरदेवयाओ अप्पणिया वित्तिवेसिया (बेंति ' हे राय!)।

यहां पूर्वार्द्ध के कोष्ठक के 'संतो' शब्द को 'मिसिमि' के साथ जोड़ देने और उत्तरार्द्ध के कोष्ठक के (बेंति 'हे राय!) वाक्यांश को 'वित्तिवेसिया' के स्थान पर रखने से अंत लघु को गुरु कर छन्द को पूरा करने के साथ गाथा का अर्थ भी प्रसंगानुसार सुसंगत हो जाता है।

688. सो दाहिणलोगपती धम्माणुमती अहम्मदुट्ठमती ।

जिणवयणपडि(डी)कुट्ठं नासेहिति खिप्पमेव तयं ।।

यहां उत्तरार्द्ध में 'पडि' के स्थान पर कोष्ठक का डी शब्द रखकर 'पडीकुट्ठं' बना देने से छन्द पूरा हो जाता है।

717. केहि वि विराहणाभीरुएहिं अइभीरुएहिं कम्माणं ।

समणेहि संकिलिट्ठं पच्चक्खायाइं भत्ताइं ।।

यहां पूर्वार्द्ध में ए को लघु मानकर तथा उत्तरार्द्ध में तृतीया रूप समणेहिं के एकार को और अंत गुरु को लघु मानकर छन्द पूरा हुआ।

728. सो भणति एव भणिए असि (?लि)ट्ठकिलिट्ठएण वयणेणं ।

“न हु ता अहं समत्थो इण्हिं भे वायणं दाउं” ।।

पूर्वार्द्ध कोष्ठक के लि को गाथा में शामिल करने से पूर्ण हो जाती है।

733. बारसविहसंभोगे (य) वज्जए तो तयं समणसंघो ।

‘जं ने जाइज्जंतो न वि इच्छसि वायणं दाउं’ ।।

यहां पूर्वार्द्ध के कोष्ठक के य को पादपूर्ति रूप में ग्रहण किया गया।

736. पारियकाउस्सग्गो भत्तट्ठतो (? ट्ठओ) व अहव सज्जाए ।

व अइंतो वा एवं भे वायणं दाहं” ।।

यहां 'ट्ठतो' की जगह कोष्ठक के ट्ठओ को रखकर भत्तट्ठतओ रूप रखने से मात्रा पूर्ण हो जाती है।

741. उज्जुत्ता मेहावी सदधाए वायणं अलभमाणा ।

अह ते थोवथो(त्थो)वा सब्बे समणा विनिस्सरिया ।।

यहां थोवथो की जगह थोवत्थो करने से छन्द पूर्ण हुआ।

744. सुंदरअट्ठपयाइं अट्ठहिं वासेहिं अट्ठमं पुव्वं ।  
 भिंदति अभिण्णहियतो आमेलउं अह पवत्तो ॥  
 यहां तृतीया रूप अट्ठहिं वासेहिं को अनुस्वार रहित रूप बना दिए जाने से छन्द पूरा हो गया ।
748. एकं ता भे पुच्छं 'केत्तियमेत्तं मि सिक्खितो होज्जा ? ।  
 केत्तियमेत्तं च गयं ? अट्ठहिं वासेहिं किं लद्धं ?' ॥  
 यहां भी तृतीया रूप अट्ठहिं वासेहि को अनुस्वार रहित रूप करने से छन्द पूर्ण होता है ।
750. सो भणति एव भणिए 'भीतो न वि ता अहं समत्थो मि ।  
 अप्पं च महं आउं बहू (य) सुयमंदरो सेसो' ॥  
 यहां उत्तरार्द्ध के कोष्ठक युक्त य को गाथा में शामिल कर 'बहूय' रूप बनाने से छन्द पूर्ण हो जाता है ।
761. 'नत्थेत्थ कोइ सीहो, सो चेव य एस भाउओ तुब्भं ।  
 इड्ढीपत्तो जातो (तो) सुयइड्ढिं पयंसेइ' ॥  
 यहां उत्तरार्द्ध में कोष्ठक के तो को गाथा में शामिल कर अंत लघु को गुरु करने से छन्द पूर्ण हुआ ।
764. दुपु(?उग्घु)ट्ठमहुरकंठं सो परियट्ठेइ ताव पाढमयं ।  
 भणियं च नाहिं 'भाउग ! सीहं दट्ठूण ते भीया' ॥  
 यहां पूर्वार्द्ध में दुपुट्ठ की जगह उग्घुट्ठ करने से छन्द पूर्ण हो जाता है ।
771. एतेहि नासियव्वं सए वि णाए वि तह(?) सासणे भणियं ।  
 जं पुण मे अवरद्धं एय पुण डहति सव्वंगं ॥  
 यहां पूर्वार्द्ध के द्वितीय चरण में दोनों एकार को लघु कर छन्द पूरा किया गया है ।
785. अह भणइ थूलभद्दो गणियापरिमलसमप्पियसरीरो ।  
 'सामी ! कयसामत्थो पुणो (वि) भे विण्णवेसामि' ॥  
 यहां कोष्ठक के वि को पादपूर्ति रूप में शामिल किया गया है ।

807. एयस्स पुव्वसुयसायरस्स उदहि व्व अपरिमेयस्स ।  
सुणसु जह अथ(?इत्थ) काले परिहाणी दीसते पच्छा ।  
यहां 'अथ' के स्थान पर 'इत्थ' शब्द रखने पर अर्थ और मात्रा दोनों पूर्ण हो जाती है ।
814. समवायववच्छेदो तेरसहिं सतेहिं होहि वासाणं ।  
माढरगोत्तस्स इहं संभूतजतिस्स मरणम्मि ।।  
यहां तृतीया बहुवचन रूप तेरसहिं सतेहिं को अनुस्वार रहित कर देने से मात्रा पूर्ण हो जाता है ।
824. चंकमिउं वरतरं (?तरयं) तिमिसगुहाए व मंधकाराए ।  
न य तइया समणाणं आयारसुत्ते पणट्ठमि ।।  
यहां पूर्वार्द्ध में 'वरतरं' को 'वरतरयं' करने पर मात्रा पूर्ण हो जाती है ।
826. वीसाए सहस्सेहिं पंचहिं य सतेहिं होइ वरिसाणं ।  
पूसे वच्छसगोत्ते वोच्छेदो उत्तरज्झाए ।।  
यहां तृतीय बहुवचन के रूपों 'सहस्सेहिं, पंचहिं, सतेहिं' को अनुस्वार रहित करने से मात्रा पूर्ण हो जाती है ।
827. वीसाए सहस्सेहिं वरिससहस्सेहिं (?वरिसाण सएहिं) नवहिं वोच्छेदो ।  
दसवेतालियसुत्तस्स दिण्णसाहुम्मि बोधव्वो ।।  
यहां 'वरिस सहस्सेहिं' शब्द अर्थहीन है । उसकी जगह 'वरिसाण सएहिं' विषय क्रमसंगत है । इसमें तृतीय बहुवचन के रूपों सहस्सेहिं, सएहिं और नवहिं को अनुस्वार रहित रूप में कर देने से छन्द पूर्ण हो जाता है ।
836. धम्मो य जिणाणुमतो राया य जणस्स लोयमज्जाया ।  
ण(तो) ते हवंति खीणा जं सेसं तं निसामेह ।।  
यहां उत्तरार्द्ध में कोष्ठक के तो को गाथा में शामिल करने से अर्थपूर्ण होने के साथ छन्द भी पूर्ण हो जाता है ।

- 837.** सावगमिहुणं समणो समणी राया तहा अमच्चो य ।  
एते हवन्ति सेसं अण्णो (य) जणो बहुतरातो ॥  
यहां उत्तरार्द्ध में कोष्ठक के य को पादपूरण अर्थ में रखने से मात्रा पूर्ण हो जाती है ।
- 846.** छट्ठ चउत्थं च तया होही उक्कोसयं तव्वोकम्मं ।  
(?दुप्पसहो आयरिओ) काही किर अट्ठमं भत्तं ॥  
यहां उत्तरार्द्ध में प्रथम चरण ही नहीं है । इसकी जगह वहीं कोष्ठक के दुप्पसहो आयरियो को चरण मान लिया गया है ।
- 881.** गामा (य) नगरभूया, नगराणि य देवलोगसरिसाणि ।  
रायसमा य कुडुंबी, वेसमणसमा य रायाणो ॥  
यहां प्रथम चरण में कोष्ठक के य को गाथा में शामिल कर लेने पर अर्थ और छन्द दोनों पूर्ण जाते हैं ।
- 885.** भंग-त्तासविरहितो डमरुल्लोल'भय-डंडरहितो य ।  
दुब्भिव्व-ईति-तक्कर-करभर(य)जिवज्जिओ लोगो ॥  
यहां चतुर्थ चरण के कोष्ठक के य को मूल गाथा में शामिल कर पाद पूर्ण किया गया है ।
- 909.** सीसा वि न पूइंती आयरिए दूसमाणुभावेणं ।  
आयरिया (उ) सुमणसा न देंति उवदेसरयणाहं ॥  
यहां तृतीय चरण में कोष्ठक के उ को पाद पूरण अर्थ में ग्रहण किया गया है ।
- 912.** सयणे निच्चविरुद्धो निसोहियसाहिवासमित्तेहिं(?) ।  
चंडो दुराणुयत्तो लज्जारहितो जणो जातो ॥  
यहां पूर्वार्द्ध के द्वितीय चरण के अंत में य जोड़कर पादपूर्ति की जा सकती है ।

914. सहपंसुकीलिय(?र)सा अणवरयं गरुयनेहपडिबद्धा ।  
भित्ता दरहसिएहिं लुब्भंति वयंसमज्जासु ॥  
यहां प्रथम चरण में केवल सा शब्द अर्थहीन है। 'रसा' शब्द का ग्रहण कर लेने पर अर्थसंगति और छन्द पूर्ति दोनों हो जाती है।
926. तिहिं वासेहिं गतेहिं गएहिं मासेहि अद्धनवमेहिं ।  
एवं परिहायंते दूसमकालो इमो जातो ॥  
यहां पूर्वार्द्ध के प्रथम चरण के दोनों एकार को लघु तथा द्वितीय चरण के अंत गुरु को लघु कर छन्द को पूरा किया गया है।
928. होही हाहाभूतो (य) दुक्खभूतो य पावभूतो य ।  
कालो अमाइपुत्तो गोधम्मसमो जणो पच्छा ॥  
यहां द्वितीय चरण के प्रारंभ में य को पादपूर्ति के लिए रखकर अंत लघु को गुरु किया गया है।
936. होही सुसिरा भूमी पडंतइंगालमुम्मुरसरिच्छा ।  
अग्गी हरियतणाणि य नवरं सो तीहि सोविही (ऊ?) ॥  
यहां चतुर्थ चरण में तृतीया बहुवचन रूप तीहि को अनुस्वार युक्त कर देने से छन्द पूरा हो जाता है।
949. भ(?भे)सुंडियरूवगुणा सव्वे तव-नियम-सोयपरिहीणा ।  
उक्कोसरयनिमित्ता मेत्तीरहिया य होहिंति ॥  
यहां प्रथम चरण में भसुंडिय की जगह भेसुंडिय करने से अर्थ और छन्द दोनों संगत हो जाते हैं।
951. इंगालमुम्मुरसमा (य) छारभूया भविस्सती धरणी ।  
तत्त कवल्लुगभूता तत्तायसजोइभूया य ॥  
यहां द्वितीय चरण के प्रारंभ में य पादपूरण अर्थ में शामिल किया है।
952. धूली-रेणूबहुला धणचिक्कणकद्दमाउला धरणी ।  
चंकम(म्म)णे य असहा सव्वेसिं मणुयजातीणं ॥

यहां तृतीय चरण में चंकमणे की जगह म्म जोड़कर चंकम्मणे करने से छन्द पूरा हो जाता है।

955. नट्ठगिहोमसक्कर(?य) भोइणो सूरपक्कमंसासी।

अणुगंगसिंधु-पव्वयबिलवासी कूरकम्मा य।

यहां य पादपूरण अर्थ में शामिल किया गया है।

967. -----

-----मेत्तीरहिया उ होहिंति।।

मुनि पुण्यविजय के अनुसार, यहां सभी प्रतियों में तीन चरण नहीं हैं।

972. सेसं तु बीयमेत्तं होही सव्वेसि जीवजातीणं।

कुणिमाहारा सव्वे निसा(स्सा)ए संझकालस्स।।

यहां स्सा को सा के स्थान पर रखकर तथा अंत लघु को गुरु कर छन्द पूर्ण किया जा सकता है।

977. ओसप्पिणीइमाए जो होही (?होहऽइ) दुस्समाए अणुभावो।

सो चेव (य) अणुभावो उस्सप्पिणिपट्ठवणगम्मि।।

प्रस्तुत गाथा के तृतीय चरण में य पादपूरण के लिए शामिल कर अंत लघु को गुरु किया गया है।

980. अवसप्पिणीए अद्धं अद्धं उस्सप्पिणीए तहिं (?ह) होइ।

एयम्मि गते काले होहिंति उ पंच मेहा उ।।

यहां पूर्वार्द्ध के दोनों चरणों के ए को लघु किया गया।

1000. सणसत्तरसं धण्णं फलाइं मूलाइं सव्वरुक्खाणं।

खज्जूर-दक्ख-दाडिम-फणसा तउसा य वड्ढंति।।

यहां फलाइं मूलाइं को अनुस्वार रहित रूप करने से मात्रा पूर्ण हो जाती है।

1005. पढमेत्थ विमलवाहण 1 सुदाम 2 संगम 3 सुपासनामे 4 य।

दत्ते 5 सुनहे 6 तसमं (?वसुमं) इय (ते) सत्तेव निदिदद्ठा।।

प्रस्तुत गाथा के उत्तरार्द्ध में ते जोड़कर मात्रा पूर्ण की जा सकती है।

1006. उस्सप्पिणीइमीसे बितियाए समाए गंग-सिंधूणं ।  
एत्थ बहुमज्झदेसे उप्पण्णा कुलगरा सत्त ।।  
यहां द्वितीय चरण के दोनों ए की गणना लघु करने पर छन्द पूर्ण हो जाता है ।
1045. गामा (य) नगरभूया, नगराणि य देवलोगसरिसाणि ।  
रायसमा य कुडुंबी, वेसमणसमा य रायाणो ।।  
यहां प्रथम चरण का य पादपूर्ति के रूप में लेकर अंत लघु को दीर्घ किया जाना चाहिए ।
1057. सो देवपरिग्गहिओ तीसं वासाइं वसति गिहवासे ।  
अम्मा-पितीहिं भगवं देवत्ति(?त्त)गतेहिं पव्वइतो ।।  
उत्तरार्द्ध पितीहिं को अनुस्वार रहित और अंत गुरु को लघु किया गया ।
1068. मणपरिणामो य कतो अभिणिक्खमणम्मि जिणवरिदेणं ।  
देवेहि य देवीहि य समंतओ उव(?ग)यं गयणं ।।  
यहां उत्तरार्द्ध में ग जोड़कर उवगयं बना देने से अर्थ और छन्द पूर्ण हो जाते हैं ।
1084. एवं सदेवमणुयासुराए परिसाए परिवुडो भयवं ।  
अभिथुव्वंतो गिराहिं मज्झमज्झेण सतवारं ।।  
यहां द्वितीय चरण के ए और डो को लघु मात्रा माना गया है ।
1086. ईसाणाए दिसाए ओइण्णो उत्तमाओ सीयाओ ।  
सयमेव कुणइ लोयं, सक्को से पडिच्छई केसे ।।  
यहां प्रथम चरण के अंतिम ए और द्वितीय चरण के अंतिम गुरु को लघु मान कर छन्द पूरा किया जा सकता है ।
1090. तिहिं नाणेहिं समग्गा तित्थयरा जाव होंति गिहवासे ।  
पडिवण्णम्मि चरित्ते चउनाणी जाव छउमत्था ।।

प्रस्तुत गाथा में प्रथम चरण के तृतीय बहुवचन रूप तिहिं नाणेहिं को अनुस्वार रहित रूप कर देने से छन्द पूरा होता है।

1128. भरहे 1 य दीहदंते 2 य गूढदंते 3 य सुद्धदंते 4 य।

सिरिचंदे 5 सिरिभूमी (ती) 6 सिरिसोमे 7 य सत्तमे॥

यहां उत्तरार्द्ध में 16 वर्ण है जबकि पूर्वार्द्ध में 19। इसमें तीन य पादपूर्ति रूप में हैं। इसके पूर्व की 7 गाथाएं अनुष्टुप छन्द की हैं।

1144. एते(य) नव निह(ही)तो पभूयधण- कणग- रयणपडिपुण्णा।

अणुसमयमणुवयंती चक्कीणं सततकालं पि॥

यहां प्रथमार्द्ध में य को पादपूरण में तथा निह की जगह निही रखने पर छन्द पूरा हो जाता है।

1148. कणहा उ, जयंति(तऽ)जिए 1-2 (भद्दे 3) सुप्पभ 4 सुदंसणे 5 चेव।

आणंदे 6 नंदणे 7 पउमे नाम 8 संकरिसणे 9 चेव॥

यहां पूर्वार्द्ध में भद्दे शामिल कर तथा उत्तरार्द्ध के चेव के चे की लघु गणना करने से छन्द पूर्ण हो जाती है।

1153. तेसीति लक्ख णव उ तिसहस्सा नव सता य पणनउया।

मासा सत्तऽद्धऽट्ठमदिणा य धम्मो चउसमाए॥

यहां प्रथम चरण के अंतिम उ को दीर्घ कर दिया गया है।

1163. मणिगणि 1 दीवसिहा 2 तुडियंगा 3 भिंग 4 कोविण 5 उदुसुहा 6 चेव।

आमोदा 7 य पमोदा 8 चित्तरसा 9 कप्परुक्खा 10 य॥

यहां द्वितीय चरण के चेव के चे को लघु मानने से मात्रा पूर्ण होती है।

1195. सोऊण महत्थमिणं निस्संदं मोक्खमग्गसुत्तस्स।

-----यत्ता मिच्छत्तपरम्मुहा होइ॥

मुनि पुण्यविजय जी के संस्करण में यहां तृतीय चरण अनुपलब्ध है।

1201. जं अज्जियं चरित्तं देसूणाए (वि) पुव्वकोडीए।

तं पि कसाइयमित्तो नासेइ नरो मुहुत्तेणं॥

यहां वि को पादपूर्ति के रूप में रखने से गाथा पूर्ण हो जाती है।

1204. दुग्ग(ग्गे) भवकंतारे भममाणेहि सुइरं पणट्ठेहिं।  
दुलभो जिणोवइट्ठो सोगइमग्गो इमो लद्धो।।  
प्रथम चरण में दुग्ग के स्थान पर दुग्गे करने से मात्रा पूर्ण होती है।
1211. जा जिणवरदिट्ठाणं भावाणं सददहणया सम्मं(?)।  
अत्तणओ बुद्धीय य सोऊण य बुद्धिमंताणं।।  
यहां भी पूर्वार्द्ध के तीन य को हटा देने से पद्य अनुष्टुप छन्द का हो जाता है। यहां द्वितीय चरण के अंत में सम्मं की जगह सम्मत्तं करने से अर्थ स्पष्ट होने के साथ छन्द भी पूर्ण हो जाता है।
1218. एत्थ ए संका कंखा वितिगिच्छा अन्नदिट्ठयपसंसा।  
परतित्थिओवसेवा पंच (उ) हासेंति सम्मत्तं।।  
यहां उत्तरार्द्ध में उ को शामिल कर मात्रा पूर्ण की जा सकती है।
1219. संकादिदोसरहितं जिणसाणकुसलयादिगुण (? जुत्तं)।  
एयं तं जं भणितं मूलं दुविहस्स धम्मस्स।।  
यहां पूर्वार्द्ध के अंत में जुत्तं शामिल कर लेने से अर्थ और छन्द पूर्ण हो जाते हैं।
1224. नाणाहिंतो चरणं पंचहिं समितीहिं तीहिं गुत्तीहिं।  
एयं सीलं भणितं जिणेहिं तेलोक्कदंसीहिं।।  
यहां द्वितीय चरण में समितीहिं और तीहिं को समितिहि और तिहि कर देने से तथा अंत गुरु कर देने से मात्रा पूर्ण हो जाती है और अर्थ भी पूर्ववत् बना रहता है।

इस प्रकार उपरोक्त गाथाओं के पाठ का पुनर्निर्धारण करने का प्रयास किया गया है। इन पुनर्निर्धारित गाथाओं में जहां अंत लघु के बाद प्रथमार्द्ध में 29 मात्रा और उत्तरार्द्ध में 26 मात्रा तथा अंत गुरु के बावजूद प्रथमार्द्ध में 31 और उत्तरार्द्ध में 28 मात्रा है, उसे सामान्य मानते हुए चर्चा नहीं की गयी है। वहां विकल्प से आवश्यकतानुसार अंत में गुरु को लघु या लघु को गुरु मानना चाहिए।

इस ग्रंथ के मेरे पीएचडी का विषय बनने और इसके अनुवाद की अपनी ही कहानी है। जैन विश्व भारती, लाडनूं से 1994 में प्राकृत भाषा एवं साहित्य में एम.ए. पास करने के बाद 1995 में मैं विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की जूनियर रिसर्च फेलोशिप के तहत पीएचडी के लिए आवेदन करने वाराणसी पहुंचा। वहां पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध संस्थान (अब पार्श्वनाथ विद्यापीठ) में निदेशक डॉ. सागरमल जैन के पास गया। दो दिन वहां ठहरने के बाद जैन साहब बाहर से आए। कुछ दिनों की ऊहापोह के बाद काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्कृत विद्या धर्म विज्ञान संकाय के बौद्ध-जैन दर्शन विभाग में डॉ. कमलेश कुमार जैन के निर्देशन में पीएचडी के लिए आवेदन किया जो स्वीकृत हो गया।

सागरमल जी ने कहा कि अगर किसी प्राकृत के मूल ग्रंथ पर काम करो तो विषय की सार्थकता सिद्ध होगी। लेकिन प्राकृत का कौन मूल ग्रंथ लिया जाए, यह निश्चित नहीं था। फिर सागरमल जी ने ही सुझाया कि अब तक जो वृहत्तर रूप में प्रकीर्णक हैं, उनमें तित्थोगाली सबसे बड़ा है और इसमें विलक्षण विषय समाहित हैं। मसलन आगम लोप की मीमांसा जो श्वेताम्बर संप्रदाय में मान्य नहीं हैं। दूसरी ओर यह अर्द्धमागधी में निबद्ध है जो दिगंबर परंपरा के अनुकूल नहीं है। इसके अलावा इस ग्रंथ में इतिहास की कई परतें छिपी हैं। अगर इस पर काम करो तो बहुत अच्छा रहेगा। उन्होंने यह भी कहा कि अगर अनुवाद कर लो तो शोध प्रबंध लिखने में भी बहुत आसानी हो जाएगी। प्रश्न था कि यह मूल ग्रंथ प्राकृत में ही है। हिन्दी में इसका अनुवाद उपलब्ध नहीं है। सागरमल जी ने प्रोत्साहित किया कि पांच साल की फेलोशिप है, इसमें से दो ढाई साल में इसका अनुवाद कर डालो। मैं घबराया। प्राकृत दो साल ही एम.ए. में पढ़ा था, वह भी अधिकांश अनुवाद की सहायता से। वैसे, सिद्धहेमशब्दानुशासन के सूत्र इतना कंठस्थ थे किसी शब्द पर उन सूत्रों को घटित कर सकता था। लाडनूं में प्राकृत का माहौल भी सहायक था ही। उस पर से सागरमल जी ने साहस दिया कि यहीं रहकर अनुवाद करो और जहां कहीं भी परंपरा, अर्थ और अन्य किसी तरह की उलझन आएगी तो मैं तो हूँ ही। अगर इससे भी कहीं स्पष्ट न हो तो लाडनूं में प्राकृत के अनेक विद्वान साधु-संत हैं।

उनसे भी काफी सहायता मिल जाएगी। मैंने यह काम लेने का निश्चय कर लिया और तत्काल इस ग्रंथ के अनुवाद का काम शुरू कर दिया।

1995 के जून-जुलाई से यह काम जो शुरू हुआ तो 1998 तक चलता रहा। इस बीच 1997 में सागरमल जी भी सेवानिवृत्त होकर अपने गृहनगर मध्य प्रदेश के शाजापुर चले गए। लेकिन तब तक मूल का अनुवाद हो चुका था। उसे अंतिम तौर पर लिखना और बाकी संपादन आदि के कार्य शेष रह गए थे। अनुवाद के दौरान कई गाथाओं और प्रसंगों पर कई-कई दिनों तक रुकना पड़ जाता था। फिर भी कई जगह काफी असमंजस और शंका बनी रही। इनके समाधान के लिए मैं दिसंबर 1998 में कुछ दिनों के लिए लाडनूं गया। यहां पर मुनिश्री दुलहराज जी और प्रो. महेन्द्र कुमार जी से कई गाथाओं पर लंबी चर्चा की। दुलहराज जी ने एम.ए. के दौरान मुझे और मेरे सहपाठियों को प्राकृत पढ़ाया था। भाषा संबंधी कई मुद्दों पर प्रो. जगतराज भट्टाचार्य जी की हार्दिक सहयोग प्राप्त हुआ। आखिर काम पूरा हो गया और इसी आधार पर मैंने शोध प्रबंध भी 31 दिसंबर 1999 को पूरा करके विश्वविद्यालय में प्रस्तुत कर दिया। लेकिन कुछ व्यवधानों और सुयोग के अभाव में इसके प्रकाशन की व्यवस्था लंबे समय तक नहीं हो पायी। इस बीच लाडनूं की तत्कालीन कुलपति समणी मंगलप्रज्ञाजी से संपर्क किया। उन्होंने ग्रंथ को कंपोज कराकर भेजने को कहा।

इस बीच, जुलाई 2009 में लाडनूं में 'संस्कृत नाट्य परंपरा और प्राकृत' विषय पर आयोजित सेमिनार में शोधपत्र पढ़ने के लिए आदरणीय प्रो. जगतराम भट्टाचार्य जी का आमंत्रण मिला। वहां पहुंचा तो समणी जी से बातचीत हुई। उन्होंने इस जल्द कंपोज कराकर भेजने को कहा। लेकिन तत्काल जापान के आम चुनाव को देखने और वहां की लोकतांत्रिक प्रक्रिया को कवर करने के लिए वहां जाने का अवसर मिला। करीब एक महीना तो वहां जाने और आने के बाद व्यवस्थित होने में लग गए। बाद में भी कुछ व्यक्तिगत व्यवधान आ जाने से यह काम समय पर पूरा नहीं हो सका और समय बीत गया। तब तक समणी चारित्र्य प्रज्ञा जी वहां की कुलपति हो गयीं। मैंने चारित्र्य प्रज्ञा जी की अनुमति मिलने पर ग्रंथ को कंपोज कराकर ईमेल कर दिया। दिल्ली में फिर संस्कृत के एक मित्र विद्वान के

साथ इस पर चर्चा के बाद अनुवाद में आवश्यक संशोधन किए गए हैं। इस प्रकार इस ग्रंथ ने अपनी विशालता और विविधता को चरितार्थ करते हुए प्रकाशन में लंबा समय लिया और अब यह ग्रंथ अपनी लंबी यात्रा के बाद आपके हाथ में है। वैसे तो इसके अनुवाद में पूरी सतर्कता बरती गयी है, लेकिन इसके बाद भी कोई त्रुटि रह गयी हो तो इसके लिए क्षमाप्रार्थी हूं। ग्रंथ के पूरा होने में मेरे सभी गुरुजनों का आशीर्वाद है जिससे कि यह काम निर्बाध पूरा हो सका है। इस अवसर पर मैं उन सबको प्रणाम करता हूं।

डॉ. अतुल कुमार प्र. सिंह  
15 जनवरी, 2012  
नई दिल्ली

## तित्थोगालीपङ्क्तयं

नमः<sup>1</sup> सर्वज्ञाय

(गा. 1-6. मंगलमभिधेयं च)

1. जयइ ससिपायनिम्मलतिहुयणवित्थिण्णपुण्णजसकुसुमो ।  
उसमो केवलदंसणदिवायरो दिट्ठदट्ठव्वो ॥
2. बावीसइं च निज्जियपरीसहकसायविग्घसंधाया ।  
अजियाईया भवियारविंदरविणो जयंति जिणा ॥
3. जयई सिद्धत्थनरिंदविमलकुलनहयल (म्मि व) मियंको ।  
महिपाल-ससि-महोरग-महिंदमहिओ महावीरो ॥
4. नमिऊण समणसंधं सुनायपरमत्थपायडं वियडं ।  
वोच्छं निच्छययत्थं तित्थोगालीए संखेवं ॥
5. रायगिहे गुणसिलए भणिया वीरेण गणहराणं तु ।  
पयसयसहस्समेगं वित्थरओ लोगनाहेणं ॥
6. अइसंखेवं मोत्तुं, मोत्तूण पवित्थरं अहं भणिमो ।  
अप्पक्खरं महत्थं जह भणियं लोगनाहेणं ॥

(गा. 7-9 कालसरुवं)

7. कालो उ अणाईओ पवाहरूवेण होइ नायव्वो ।  
निहणविहूणो सो च्चिय बारसअरगेहिं निदिदट्ठो ॥

1. 'नमः सर्वज्ञाय' इति ग्रन्थप्रारम्भे लेखकैर्लिखितं मंगलमस्ति ॥

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

सर्वज्ञों को नमस्कार है

मंगल और अभिधेय

1. जिनका पुण्य रूपी यशकुसुम त्रिभुवन में निर्मल शशिकिरणों की तरह विस्तृत है, वैसे दृष्ट विषयों के द्रष्टा (संसार के समस्त चर-अचर, रूपी-अरूपी पदार्थों को देखने जानने वाले) केवल दर्शन रूपी सूर्य, ऋषभदेव की जय हो।
2. परिषद, कषाय तथा अन्तरायादि के समूह को परामृत करनेवाले और भव्य जन रूपी कमलों के लिए सूर्य के समान (जिनसे कमल खिल जाते हैं) अजित आदि बाईस तीर्थकर जयवन्त हों।
3. राजा सिद्धार्थ के कुल रूपी नममंडल में पूर्ण चन्द्र की भांति उदित और महिपाल-चंद्र-महोरग तथा इन्द्र द्वारा पूजित महावीर जयवन्त हों।
4. सुज्ञात परमार्थ रूपी विशाल प्रामृत (आगमों) के ज्ञाता श्रमण संघ को नमस्कार कर इस तित्थोगाली (धर्मसंघ के उदभव और क्षरण या तीर्थों ओगगालों अर्थात् धर्मतीर्थ के दस क्षेत्रों में प्रवाह) के निश्चयार्थ को संक्षेप में कहूंगा।
5. लोकनाथ प्रभु महावीर ने राजगृह के गुणशील चैत्य में गणधरों को एक लाख पदों के विस्तार में इसका वर्णन किया था।
6. अति विस्तार और उसके अति संक्षेप रूपों को छोड़कर मैं थोड़े शब्दों में उसके महान अर्थ को वैसे ही कहूंगा, जैसा कि स्वयं भगवान महावीर ने कहा था।

(काल-स्वरूप गाथा 7-9)

7. काल अनादि है तथा प्रवहमान (नदी के समान) होता है, ऐसा जानना चाहिए। वह अन्तरहित है। उसे बारह आरों में निर्दिष्ट किया गया है।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

8. दव्वट्टाए निच्चो, होइ अणिच्चो य नयमए बीए।  
एगंतो मिच्छत्तं, जिणाण आणा अणयंतो।।
9. ओसप्पिणी य उस्सप्पिणी य भरहे तहेव एरवए।  
परियत्तति कमेणं, सेसेसु अवट्ठओ कालो।।

### (गाथा 10-15. ओसप्पिणि-उस्सप्पिणिपमाणं)

10. ओसप्पिणीपमाणं भणंति लोगुत्तमा विगयमोहा।  
सव्वण्णुजिणवरिदा समासओ तं निसामेह।।
11. जोयणवित्थिण्णो खलु पल्लो एगाहियप्परूढाणं।  
भरिओ असंखखंडियकयाण वालग्गकोडीणं।।
12. वाससए वाससए एक्केक्के<sup>1</sup> अवहडम्मि जो कालो।  
सो कालो बोधव्वो उवमा एक्कस्स पल्लस्स।।
13. एतंसिं पल्लाणं कोडाकोडी हवेज्ज दसगुणि या।  
तं सागरोवमस्स उ एक्कस्स भवे परीमाणं।।
14. दस कोडाकोडीओ सागरनामाण हुंति पुण्णाओ।  
ओसप्पिणीपमाणं तं चेषुस्सप्पिणीए वि।।
15. ओसप्पिणी य उस्सप्पिणी य दोन्नि वि अणाइनिहणाओ।  
न वि होही अतिकालो, न वि होही सव्वसंखेवो।।

1. एक्केक्के सं. विना।।

## हिन्दी अनुवाद

8. यह काल द्रव्यार्थिक नय से नित्य होता है तथा दूसरे नयमत (पर्यायार्थिक नय) से अनित्य या विनाशशील है। इसे एकांत दृष्टि से नित्य या अनित्य रूप में देखना मिथ्यात्व है क्योंकि जिनों की आज्ञा अनेकांतवाद के सिद्धांत को अपनाने की है।
9. (ढाई द्वीप के पांच) भरत क्षेत्रों में तथा (पांच) ऐरावत क्षेत्रों में काल अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी रूप में क्रमशः परिवर्तित होता रहता है। शेष क्षेत्रों में यह सदा एकसमान स्थिर रहता है।

### (अवसर्पिणी- उत्सर्पिणी का प्रमाण गाथा 10-15)

10. जिन्होंने मोह को नष्ट कर दिया है, ऐसे लोकोत्तम और सर्वज्ञ जिनेन्द्र देव ने अवसर्पिणी का जो प्रमाण कहा है, उसे संक्षेप में सुनिये।
- 11-12. एक योजन विस्तृत (अर्थात् एक योजन लंबा, एक योजन चौड़ा और एक योजन गहरा) पल्य (कुएं) को सद्यः प्रसूत (एक दिन के) बच्चे के असंख्य बालों को करोड़ों-करोड़ टुकड़े कर तूंस-तूंस कर भरना चाहिए। फिर सौ-सौ वर्ष के अन्तराल पर एक-एक टुकड़े को निकालना चाहिए। इस तरह एक-एक बाल के निकालते रहने पर कुआं खाली करने में जितना समय लगता है, उसे एक पल्य समझना चाहिए।
13. ऐसे दस कोटाकोटी (करोड़ पल्य गुना करोड़ पल्य) पल्योपम का एक सागरोपम प्रमाण होता है।
14. दस कोटाकोटी सागरोपम पूर्ण होने पर एक अवसर्पिणी प्रमाण होता है तथा इतना ही समय उत्सर्पिणी का भी है।
15. अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी-ये दोनों ही अनादि निधन (इनका आदि और अंत नहीं है) निरंतर चले आ रहे हैं। यह काल कभी भी न तो इससे अधिक होता है और न इससे कम।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

(गाथा 16-22 ओसपिणि-उस्सपिणीसु छ अरया)

16. ते चेव कालसमया, तासिं वोच्छामहं समासेणं।  
ओसपिणी अणुलोमा, पडिलोमुस्सपिणी भणिया ॥
17. छ च्चेव कालसमया हवन्ति ओसपिणीए भरहम्मि।  
तासिं नामविभत्तिं अहक्कमं कित्तइस्सामि ॥
18. सुसमसुसमा य 1 सुसमा 2 तइया पुण सुसमदूसमा होइ 3।  
दूसमसुसम चउत्थी 4 दूसम 5 अतिदूसमा छट्ठी 6 ॥
19. एते चेव विभागा नवरं उस्सपिणीए छ च्चेव।  
पडिलोमा परिवाडी एतेसिं होइ नायव्वा ॥
20. सुसमसुसमाए कालो चत्तारि हवन्ति कोडिकोडीओ 1।  
तिन्नि सुसमाए कालो 2 दो सूसमदूसमाए उ 3 ॥
21. एक्का कोडाकोडी बायालीसाए तह सहस्सेहिं।  
वासाण होइ ऊणा दूसमससमाए सो कालो 4 ॥
22. अह दूसमाए कालो वाससहस्साइं एक्कवीसं तु 5।  
तावइओ चेव भवे कालो अइदूसमाए वि 6 ॥

(गाथा 23-25. अकम्मभूमि-कम्मभूमीणं  
चरित्तधम्मविरहस्स य कालमाणं)

23. नवसागरोवमाणं कोडाकोडीओ होंति दुगुणाओ।  
जा होई ? उद्ध कम्मभूमी भरहेरवएसु वासेसु ॥
24. तवट्ठिं च सहस्सा निययं वासाण होंति नट्ठस्स।  
जा होइ कम्मभूमी भरहेरवएसु वासेसु ॥

## हिन्दी अनुवाद

(अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी में छह-छह आरा, गाथा 16-21)

16. इस काल चक्र के विभाग के विवरण को मैं समान रूप में कहूंगा।  
अवसर्पिणी काल अनुलोम (ह्रासमान) तथा उत्सर्पिणी प्रतिलोम (वर्द्धमान)  
कहा गया है।
17. भरतक्षेत्र में अवसर्पिणी में छह काल-समय (आरा) होते हैं। उनकी  
नामों और विभागों को मैं यथाक्रम से कहूंगा।
18. पहला सुषम-सुषमा, दूसरा सुषमा, तीसरा सुषम-दुषमा, चौथा दुषम-सुषमा,  
पांचवां दुषमा तथा छट्ठा अतिदुषमा आरा होता है।
19. यही छह विभाग पुनः उत्सर्पिणी में भी होते हैं। इसे अवसर्पिणी के  
विपरीत क्रम अर्थात् उल्टे क्रम से जानना चाहिए।
20. प्रथम सुषम-सुषमा काल चार कोडाकोडी सागरोपम काल का होता  
है। दूसरा सुषमा आरा तीन कोडाकोडी सागरोपम का तथा तीसरा  
सुषम-दुषमा नामक आरा दो कोडाकोडी सागरोपम काल का होता है।
21. चौथा दुषम-सुषमा काल बयालीस हजार वर्ष कम एक कोडाकोडी  
सागरोपम काल का होता है।
22. पांचवां दुषमा काल इक्कीस हजार वर्ष का तथा इतने ही समय का  
छट्ठा अतिदुषमा काल भी होता है।

(अकर्मभूमि-कर्मभूमि से चारित्र धर्म का लोप तथा कालमान, गाथा 23-25)

23. भरत और ऐरावत क्षेत्रों में नौ कोडाकोडी सागरोपम के दुगुने समय तक  
(अर्थात् अठारह कोडाकोडी सागरोपम) तक चारित्र धर्म का अभाव  
रहता है। (यहां अकर्मभूमि अर्थात् भोगभूमि होती है)।
24. भरत और ऐरावत क्षेत्रों में अवसर्पिणी के दुषम-दुषमा के उत्तरार्द्ध और  
उत्सर्पिणी के दुषम-दुषमा के पूर्वार्द्ध के वैतादय वास यानी गिरि  
कंदराओं में वास के 21 हजार वर्ष और अवसर्पिणी के दुषमा काल के  
उत्तरार्द्ध और अवसर्पिणी के दुषमा के पूर्वार्द्ध के कुल 21 हजार वर्ष  
और अवसर्पिणी के दुषम-दुषमा के पूर्वार्द्ध और उत्सर्पिणी के दुषम-दुषमा  
के उत्तरार्द्ध के कुल 21 हजार वर्ष यानी कुल मिलाकर 63 हजार वर्ष  
कम दो कोडाकोडी सागरोपम तक कर्मभूमियां होती हैं।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

25. एसो य ठितिविरहिओ कालो पुण होइ धम्मचरणस्स ।  
एत्तो परं तु वोच्छं छव्विहमणु माणओ कालं ।।

### (गाथा 26-54. पढमसुसमसुसमाअरयभावाणं वित्थरओ परुवणं)

26. दससु वि कुरुण सरिसं भरहमिणं आसि सुसमसुसमाए ।  
नवरिमणट्ठियकालो एरवयादीण<sup>1</sup> वि तहेव ।।
27. एतेसिं खेत्ताणं मणि-कणगविभूसियाओ भूमीओ ।  
रयण-मणिपंचवण्णिय सोहंति<sup>2</sup> हि भत्तिचित्ताओ ।।
28. वावी-पुक्खरणीओ देसे देसेऽत्थ दीहियाओ य ।  
पेच्छणगसंकुलाओ सयणाऽऽसणमंडियत (स) हाओ ।।
29. महु-घय-इक्खुरसोगदग-खीरासव-पवरवारुणिजलाओ ।  
काओ<sup>3</sup> य पगइपाणियफलिहसरिच्छऽच्छभरियाओ ।।
30. जाओ<sup>4</sup> रयणवेइयपरिगयाओ सोवाणसुहविहाराओ ।  
तामरस-कमल-कुवलय-नीलुप्पलसोहियजलाओ ।।
31. तासिं च डोलखडहडगविविहउप्पायजगइपव्वयगा ।  
इंदियसुहोवभोगा सभावजाया रयणचित्ता ।।
32. देसे देसे य सुहा केलि-लयाहरग केयइघरा य ।  
तेसु वि य रयणचित्ता मणि-कणगसिलातला रम्मा ।।

1. 0यादीणि वि ला0 विना ।।

2. 0तिह भ0 सं0 ।।

3. काओ इ प0 सं0

4. जाओ विरमण0 सर्वासु प्रतिषु ।।

## हिन्दी अनुवाद

25. यह (63 हजार वर्ष का काल) धर्माचरण से रहित काल होता है। इसके आगे छह प्रकार के काल समय का अनुक्रमशः वर्णन करूंगा।

### (प्रथम सुषम-सुषमा आरा भाव का विस्तृत प्ररूपण, गाथा 26-54)

26. दसों कुरुओं के सदृश्य भरत और ऐरावत क्षेत्रों में सुषम-सुषमा काल अपरिवर्तित और सुखपूर्ण होता है।
27. सुषम-सुषमा आरा में दसों क्षेत्रों (पांच भरत और पांच ऐरावत) की भूमि स्वर्ण से विभूषित होती हैं। उसकी मनोहर भित्तियां पंचवर्ण के रत्नों एवं मणियों से जटित सुशोभित होती हैं।
28. उसके प्रत्येक भाग में स्थान-स्थान पर देखने योग्य मनोरम दृश्यों से युक्त सुंदर वापियां, पुष्करणियां स्थित होती हैं। वे वापियां और पुष्करणियां और दीर्घकाएं शय्या-आसनों से सुसज्जित एवं मंडित होती हैं।
29. उन वापियों का जल मधु-घृत-इक्षुरस-क्षीर, आसव और वारुणि की तरह स्वादिष्ट है तथा कोई-कोई वापियां स्वच्छ स्फटिक सदृश्य प्राकृतिक जल से भरी होती हैं।
30. रत्नमणि आदि से परिवेष्टित उन वापियों का जल सुखपूर्वक विहार करने योग्य है तथा उनके जल में तामरस-कमल, कुवलय, नीलोत्पल आदि सुशोभित होते रहते हैं।
31. उन वापियों, पुष्करणियां और दीर्घिकाओं के चारों ओर दर्शनीय विविध प्रकार के रत्नों से जड़ित सुंदर और प्राकृतिक प्रकार होते हैं। उन जगतां पर विविध प्रकार के डोल और खडहडक (तृण विशेष) उगे होते हैं, जो इंद्रियों के उपभोग लायक, स्वाभाविक रूप से उत्पन्न और चित्र-विचित्र स्वरूप वाले हैं।
32. उसके प्रत्येक भाग में स्थान-स्थान पर सुरम्य लताओं से बने केलि कुंज, लतागृह, केतकीगृह आदि शोभित होते रहते हैं। उन कुंजों और गृहों में चित्रित सुंदर कमनीय मनोरम मणिरत्नों से सुशोभित रम्य मणि और स्वर्ण की शिलाएं जमीन पर जड़ी होती हैं।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

33. एतेसु य अन्नेसु य पहाणभोगोवभोगपउरेसु।  
विविहे पुण्ण?फफद्ध-फलरसे असक्कसारे? मणुभवन्ति।।
34. गाम-नगराऽऽगराई पिउपिंडनिवेयणा य जम्मफला।  
एते न संति भावा एतेसु सुरालयनिभेसु।।
35. असि-मसि-किसिवाणिज्जं ववहारो नत्थि रायधम्मो वा।  
तेसिं मिहणाण तथा दासो वेसो व पेसो वा।।
36. पउमुप्पलनीसासा निरुयतणु<sup>1</sup> निम्भया निरुवलेवा।  
चम्मवलि-पलियरहिया एतेसु नरा तथा सुहिया।।
37. गंभीर-निद्धघोसा साणुक्कोसा अमच्छरसहावा।  
अणुलोमवाउवेगा अपरिमियपरक्कमबलोघा।।
38. कस्सइ अणाभिओगा अहमिंदा वज्जरिसभसंघयणा।  
माणुम्माणुववेया पसत्थसव्वंगसंघयणा।।
39. ते नरगणा सुरुवा सुभगा सुहभागिणो सुरभिगंधा।  
मिगरायसरिसविककम वरवारणमत्त्सरिसगई।।
40. पगईपयणुकसाया अप्पिच्छा अणिहिसंचय<sup>2</sup> अचंडा<sup>3</sup>।  
बत्तीसलक्खणधरा पुढवी-पुप्फ-फ्लाराहारा।।

1. निरुवतणुं सं०। निरुवितणुं की०। निरुवतणु ला०।।

2. ०संखय की० हं०।।

3. अदंडा ला०।।

## हिन्दी अनुवाद

33. यहां (भरत क्षेत्रों) व अन्य क्षेत्रों (ऐरावत, देवकुरु, उत्तर कुरु आदि क्षेत्रों) में श्रेष्ठ भोगोपभोग के प्रचूर साधन होते हैं। इन भोगोपभोग प्रधान क्षेत्रों में वे (यौगलिक मनुष्य) अपने पुण्य प्रभाव से विविध प्रकार के पुष्प-फल, रस आदि का उपभोग इन्द्र के सदृश करते हैं।
34. यहां ग्राम-नगरों के समूह, मृतक के श्राद्ध आदि कर्मकांडों एवं जन्मफल (शुभाशुभ अवस्था) का भाव नहीं होता। यहां सब देवलोक सदृश होता है।
35. वहां के यौगलिकों के बीच सैन्यकर्म-लेखनकर्म-कृषिकर्म-वाणिज्यकर्म तथा राजधर्म का व्यवहार नहीं होता। इसी प्रकार वहां मालिक-दास, क्रेता-विक्रेता तथा प्रेषक-प्रेष्य का भी व्यवहार नहीं होता है।
36. उस समय वहां पर लोग पद्मोत्पल के गंध जैसे उच्छवास-निश्वासवाले, रोगरहित शरीरवाले, निर्भय, छल-छद्म आदि में अलिप्त, झूरियों व श्वेत केशों से रहित (वृद्धावस्था से मुक्त) होकर सुखपूर्वक रहते हैं।
37. वे यौगलिक लोग गंभीर और स्निग्ध आवाजवाले, दयालु तथा निर्दोष स्वभाव वाले, समान विचार वाले, कलहररहित, अपरिमित पराक्रमी तथा बुद्धिमान होते हैं।
38. वे लोग क्षीणकषायी यानी सबके प्रति अभियोग से रहित, अहमिन्द्र यानी मैं इन्द्र हूं जैसी भाव रखने वाले, वज्रऋषभनाराच संघनन, हीनाधिक परिमाप से रहित सुडौल शरीरवाले तथा उत्तम व सुगठित शरीर वाले होते हैं।
39. वे यौगलिक नर-नारी गण सुरूप, सौभाग्यशाली, सुखसेवी, सुन्दर गंध से युक्त, सिंह के सदृश पराक्रमी, श्रेष्ठ गजराज की तरह मदमत्त गतिवाले होते हैं।
40. वे लोग स्वभाव से क्षीणकषाय, अल्प इच्छावान, संपत्ति मोह से मुक्त, अचंड, बत्तीस लक्षणों के धारक तथा मिट्टी से उत्पादित एवं फल-फूलों के आहारी होते हैं।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

41. पुढविरसो य सुसाओ मच्छंडिय-खंडसक्करसमाणो।  
'पुफपगरुत्तरसतरा-अणुवम (?य) रसाओ सादुतमो ॥
42. पुफ्फ-फलाणं च रसं अमयरसइट्ट (?रसिट्ट) तरंग जिणा विति।  
संवच्छरपरिस<sup>१</sup>ज्जियनवनिहिपइभोयणधरा उ ॥
43. भरहाइ दस वि खेत्ता देवकुराई वि तत्तिया चेव।  
एते वीसं खेत्ता वियाण पढमिल्लुए अरए ॥
44. आउ-सरीरुसेहो सागरकोडीओ जाव चत्तारि।  
पलिओवमाइं तिण्णि उ, तिण्णि य<sup>३</sup> कोसा समाभणिया ॥
45. एतेसु य खेत्तेसुं तेसिं मणुयाण पुव्वसुकएणं।  
दसविहदुमा उ तइया उवभोगसुहा उवणमंति ॥
46. \*मत्तंगया 1 य भिंगा 2 तुडियंगा 3 दिव्व (?दीव) 4 जोइ 5 चित्तंगा 6।  
चित्तरसा 7 मणियंगा 8 गेहागारा 9 अणियण 10 य ॥
47. मत्तंगएसु मज्जं सुहवेज्जं 1 भायणाइं भिंगेसु 2।  
तुडियंगेसु य संगयतुडियाइं बहुप्पगाराइं 3 ॥
48. दीवसीहा जोइसनामगा य एते करितिं उज्जोयं 4-5।  
चित्तंगेसु य मल्लं 6 चित्तरसा भोयणट्टाए 7 ॥
49. मणियंगेसु य भूसणवराइं 8 भवणाइं भवणरुवेसु 9।  
आइण्णेसु य धणियं वत्थाइं बहुप्पगाराइं 10 ॥

1. पफपगरु की० ॥

2. ०पडिसो की० ॥

3. उ हं० की० ॥

4. अग्रे 56 तः 59 तथा 1163 तः 1166 गाथासु च कल्पवृक्षनामभेदोऽप्यस्ति ॥

## हिन्दी अनुवाद

41. उस समय की मिट्टी का स्वाद रस, मधु एवं खंड शक्कर के समान स्वादिष्ट तथा पुष्पकुल रसयुक्त और श्रेष्ठ रूप से स्वादिष्ट होते हैं कि उनकी उपमा संसार में नहीं।
42. जिनों के अनुसार, वहां के फूलों-फलों के रस अमृतरस के समान होते हैं। उनके घरों का भोजन नवनिधिपति चक्रवर्ती की रसोई में साल भर के परिश्रम के बाद तैयार भोजन से भी उत्तम अर्थात् स्वादिष्ट होता है।
43. इस तरह से भरत, ऐरावत के दस क्षेत्रों तथा उतना ही देवकुरु और उत्तर कुरु के दस क्षेत्रों- कुल बीस क्षेत्रों में प्रथम आरा सुषम-सुषमा में इस तरह की स्थिति जानना चाहिए।
44. इस चार कोटाकोटी सागरोपम प्रमाण के आरे में वहां के यौगलिक लोगों की आयु तीन पल्योपम प्रमाण तथा शरीर की ऊंचाई तीन कोस (छह हजार धनुष) प्रमाण कही गयी है।
45. इन क्षेत्रों में इन लोगों के पूर्व सुकृत कर्मों से दस प्रकार के कल्प वृक्ष वहां उपभोग सुख तत्काल प्रदान करते हैं। अर्थात् उनकी इच्छा करते ही इच्छित वस्तुओं की आपूर्ति कर देते हैं।
46. ये वृक्ष हैं - 1. मतङ्ग, 2. भृंग, 3. त्रुटितांग, 4. दीप, 5. ज्योतिष, 6. चित्तांग, 7. चित्तरस, 8. मणियंड, 9. गृहाकार एवं 10. अनग्गक।
47. मतङ्ग कल्पवृक्ष से मद्य की सुखपूर्वक आपूर्ति होती है, भृंग नामक वृक्ष से भोजन आदि के पात्र की प्राप्ति होती है, तथा त्रुटितांग से विविध प्रकार के संगीत गान के लिए वाद्य यंत्र प्राप्त होते रहते हैं।
48. दीपशिखा तथा ज्योतिष नामक वृक्ष से यथेष्ट प्रकाश की प्राप्ति होती है। चित्रांग नामक कल्पवृक्ष से पुष्पमाला, हार आदि प्रसाधन तथा चित्ररस नामक वृक्षों भोजन आदि की सामग्री प्राप्त होती है।
49. मणियंग नामक वृक्ष सभी प्रकार के श्रेष्ठ आभूषणों की आपूर्ति करता है, भवन रूप गृहागार में भवन आदि का प्रदान करने का सामर्थ्य है तथा अनग्गक वृक्ष से विभिन्न प्रकार के वस्त्र उपलब्ध होते हैं।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

50. एतेसु य अन्नेसु य नर-नारिगणाण ताण उवभोगो ।  
देवकुराइसु नियओ, भरहाइ असासओ होइ ॥
51. ते किंचिसावसेसम्मि आउए मिहुणगाइं पसवित्ता<sup>1</sup> ।  
कालगया य सुहेणं अइरा य सुरालयमुवेति ॥
52. मउआ सदारनिरया उज्जुसहावा अकोहण मलुद्धा ।  
तव-संजमेण वि विणा लहंति एयाइं ठाणाइं ॥
53. तव-संजम-नियमेण उ मुच्चइ सव्वेसि चव दुक्खस्स ।  
अमरवरेसु य पावइ विसिट्ठतरयं विसयसोक्खं ॥
54. सुसमसुसमा य एसा समासओ वन्निया मणूसाणं ।  
उवभोगविहिसमग्गा सुसमा एत्तो परं वोच्छं ॥

### (गा. 55-62. बिइयसुसमाअरयभावाणं परुवणं)

55. हरिवरिसाई खेत्ता दस भरहादी य तत्तिया चव ।  
आसि समासुसमाए बीए अरगम्मि निदिदट्ठा ॥
56. मणिगण 1 दीवसिहा 2 वि य तुडियंगा 3 भिंग 4 तह य कोवीणा 5 ।  
उरुस (?सु)ह6 आमोय7 पमोया8 चित्तरसा 9 कप्परुक्खा 10 ॥
57. वत्थाइं मणिगणेसुं 1 दीवसिहा पुण करेति उज्जोयं 2 ।  
तुडियंगेसु य गेज्जं 3 भिंगेसु य भायणविहीओ 4 ॥
58. कोवीणे आभरणं 5 ऊरुसुह भोग<sup>2</sup>-वण्णगविहीओ 6 ।  
आमोएसु य मज्जं 7 मल्लविहीओ पमोएसु 8 ॥

1. पविसित्ता सं० ॥

2. भोग तह वण्णग० सर्वासु प्रतिषु ॥

## हिन्दी अनुवाद

50. इन कल्पवृक्षों से सुषम-सुषमा आरे में भरत, ऐरावत तथा अन्यत्र (अन्य क्षेत्रों देवकुरु व उत्तर कुफ में) नर-नारियों का समूह उपभोग सुख प्राप्त करता है। दसों देवकुरु, उत्तर कुरु में यह नित्य रहता है तथा दस भरत-ऐरावत क्षेत्रों में यह अस्थायी होता है।
51. वे यौगलिक लोग आयु के कुछ शेष रहने पर युगल संतानों (अर्थात् एक बालक और एक बालिका) को जन्म देकर, आयु समाप्त कर सुखपूर्वक सीधे देवलोक को प्राप्त हो जाते हैं।
52. वे लोग मृदु प्रकृति, अपनी पत्नी से ही प्रेम करनेवाले, सरल, निर्मल, क्रोधरहित एवं संतोषी होते हैं। इन गुणों के कारण ही वे तप-संयम के बिना भी सुख स्थान (देवलोक) को प्राप्त करते हैं।
53. तप-संयम और नियम के द्वारा मनुष्य के सभी दुःखों का नाश होता है और ऐसा करके जीव श्रेष्ठ देवताओं के बीच अतिविशिष्ट विषय सुख को प्राप्त करते हैं।
54. इस प्रकार सामान्य जन के लिए सुषम-सुषमा आरा का स्क्षेप में वर्णन किया गया। इसके बाद सुषमा काल के समस्त उपभोग विधि का वर्णन शुरू करता हूँ।

### (द्वितीय सुषमा आरा के भाव का प्ररूपण, गाथा. 55-62)

55. द्वितीय सुषमा आरा की स्थिति हरिवर्ष आदि दस क्षेत्रों तथा भरत आदि दस क्षेत्रों में निर्दिष्ट की गयी है।
56. (यहां) 1. मणिगण, 2. दीपशिखा, 3. त्रुटितांग, 4. भृंग, 5. कोपीन, 6. उरुसुह, 7. आमोद, 8. प्रमोद, 9. चित्ररस तथा 10. कल्पवृक्ष उस समय के यौगलिकों को भोगोपभोग की सामग्री उपलब्ध कराते हैं।
57. मणिगण नामक वृक्षों से वस्त्र, दीपशिखा से प्रकाश, त्रुटितांग से गीत, वाद्य संगीत आदि तथा भृंग नामक वृक्षों से विभिन्न प्रकार के भोजन पात्र आदि उपलब्ध होते हैं।
58. कोपीन से आभरण, उरुसुह से प्रसाधन आदि की सामग्री, आमोद से सुख के सागर में मस्त रहनेवाला मद्य, प्रमोद नामक कल्पवृक्षों से हार, फूलों की माला आदि आभूषण प्राप्त होते हैं।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

59. चित्तरसेसु य इट्ठा नाणाविहभक्ख-भोयणविहीओ 9।  
पेच्छामंडवसरिसा बोधव्वा कप्परुक्खा 10 य।।
60. पासाय-जाल-हम्मिय-ओवणिम'-सगब्भ-जालविहिघरया।  
मणि-रयणभत्तिचित्ता रयणुज्जलपायडसिरीया।।
61. दोगाउयउव्विद्धा ते पुरिसा, ता य होंति महिलाओ।  
दोन्नि पलिओवमाइं परमाउं तेसि बोधव्वं।।
62. एक्केक्कपलिय-गाउयपरिहीणं आउ-उच्चतं।।

(गाथा 63-620. तइय-चउत्थअरयाणं वित्थरओ परुवणं)

(गाथा 63-90. तइयसुसमदूसमामावाणं परुवणे  
कुलगरुप्पत्तिआइवण्णणं)

63. हेमवएरन्नवया दस खेत्त हवति भरहखेत्तसमा।  
सूसमदूसमकाले आसी तइए य अरगम्मि।।
64. जो अणुभावो सुसमाए होइ सो सुसमदूसमाए वि।  
दो दो य पलिय- गाउयपरिहीणं आउ- उच्चत्तं।।
65. पलिओवमलेहद्धं परमाउं होइ तेसि मणुयाणं।  
तइयाए उक्कस्सं, अवसाणे पुव्वकोडीओ।।
66. ओसहि-बल-विरिय-परक्कमा य संघयण-पज्जवगुणा य।  
अणुसमयं हायंती उब्भोगसुहाणि य नराणं।।
67. मूल-फल-कंद-निम्मलनाणाविहइट्ठगंध-रसभोगी।  
ववगयरोगायंका सुरुव सुरदुंदुभि (भी) थणिया।।

1. ममगब्भो सं० ला०।।

## हिन्दी अनुवाद

59. चित्ररस से नाना प्रकार के इच्छित भक्ष्य-भोज्य पदार्थों की प्राप्ति होती है तथा कल्पवृक्ष नामक वृक्षों को मंडप सदृश जानना चाहिए।
60. मंडपाकार वे कल्पवृक्षों में प्रासाद, गवाक्ष, हर्म्य, ओवण, गर्भ, छिद्र तथा जाल-झरोखा आदि लगे होते हैं तथा वे सभी घर मणिरत्नों, भित्तिचित्रों तथा उज्ज्वल रत्नों की शोभा से आच्छादित और गगनचुंबी शिखरों से शोभायमान होते हैं।
61. उस समय (सुषमा आरा) के पुरुष तथा महिलाएं दो गाऊ (चार हजार धनुष) ऊंचे होते हैं, उनकी अधिकतम आयु दो पत्योपम जानना चाहिए।
62. सुषमा काल के पुरुष तथा महिलाएं इस प्रकार की उपभोग विधि के होते हैं। उनकी ऊंचाई (प्रथम आरे की अपेक्षा) एक गाऊ (दो हजार धनुष) तथा आयु एक पत्योपम कम हो जाती है।

(तीसरे-चौथे आरे का विस्तृत प्ररूपण, गाथा 63-620)

(तीसरे सुषम-दुषमा काल के भाव के प्ररूपण में कुलकर की उत्पत्ति आदि का वर्णन, गाथा 63-90)

63. अवसर्पिणी काल के तीसरे आरे में सुषम-दुषमा काल होता है। इसमें हेमवत् और हिरण्यवत् आदि क्षेत्र भरत क्षेत्र के समान होता है।
64. जो- जो अनुभाव या परिस्थितियां सुषमा काल में होती हैं, वही अनुभाव सुषम-दुषमा काल में भी होती हैं। अंतर सिर्फ इतना है कि इस आरे में आयु दो पत्योपल और ऊंचाई दो गाऊ (प्रथम आरे की अपेक्षा चार हजार धनुष) प्रमाण कम हो जाती है।
65. तीसरे आरे के प्रारम्भ में मनुष्यों की उत्कृष्ट आयु एक पत्योपम तथा आरे के अंत में एक पूर्वकोटी रह जाती है।
66. इस काल में मनुष्यों का औषधि-बल-वीर्य-पराक्रम, शरीर संघनन या रचना, मनःपर्यव ज्ञान और उपभोग सुख प्रतिक्षण क्षीण होता रहता है।
67. वे लोग निर्मल फल-मूल-कंद, नाना प्रकार के विशिष्ट सुगंधित रसों को भोगने वाले होते हैं। वे सब रोग, भय से मुक्त, सुंदर रूप तथा देवता की दुंदुभी के समान आवाज वाले होते हैं।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

68. सच्छंदवणवियारी ते पुरिसा, ता य होंति महिलाओ।  
निच्चोउगपुप्फ-फला ते वि य रुक्खा गुणसहीणा।।
69. नाणामणि-रयणमया तेसिं सयणाअसणाइं रुक्खेसु।  
नर-नारिगणो मुइओ सुहवसही तत्थ समुवेइ।।
70. ओसप्पिणीइमीए तइयाए समाए पच्छिमे भाए।  
पलिओवमट्ठभागे सेसम्मि उ कुलगरुप्पत्ती।।
71. 'अड्ढभरहमज्झिल्लतिभागे गंग-सिंधुमज्झम्मि।  
एत्थ बहुमज्झदेसे उप्पन्ना कुलगरा सत्त।।
72. पुव्वभव-जम्म-नामं पमाण-संघयणमेव संठाण।।  
वण्णित्थि-आउ-भागा भवणोवाओ य नीति य ।।
73. अवरविदेहे दो वणियवयंसा माइ-उज्जुए चेव।  
कालगया इह भरहे हत्थी मणुओ य आयाया।।
74. दट्ठुं सिणेहकरणं गयमारुहणं च नामनिप्फत्ती।  
परिहाणि गेहि कलहो सामत्थण विण्णवण ह त्ति।।
75. पढमेत्थ विमलवाहण 1 चक्खुम 2 जसमं 3 चउत्थमभिचंदे 4।  
तत्तो य पसेणइए 5 मरुदेवे 6 चेव नामी 7 य।।
76. नवधणुसयाइं पढमो 1 अट्ठ 2 य सत्त3उद्धसत्तमाइं 4 च।  
छ5 च्चेव अद्धछट्ठा 6 पंचसया पण्णवीसा य 7।। दारं।।

1. अत्र पूर्वार्द्धे सर्वास्वपि प्रतीषूपलब्धे पाठे छन्दोमंगोऽस्ति।।

## हिन्दी अनुवाद

68. वे पुरुष तथा महिलाएं वन में स्वच्छंद विचरण करनेवाले होते हैं। उस समय में वे कल्पवृक्ष भी निरन्तर स्वभाविक गुणों से हीन होते रहते हैं।
69. उस समय के लोगों को नाना प्रकार के मणिरत्नों से सज्जित शयनासन वृक्षों से प्राप्त हो जाते हैं। प्रसन्नमना नर-नारी गण वहां सुखपूर्वक निवास करते हैं और उन शयनासनों पर विश्राम करते हैं।
70. इस अवसर्पिणी काल के तीसरे भाग के अंत में एक पल्य के आठवें भाग प्रमाण शेष रहने पर कुलकर की उत्पत्ति होती है।
71. अर्द्ध भरत खंड के मध्य के तीसरे भाग में अवस्थित गंगा-सिन्धु के मध्य के प्रदेश के मध्य भाग में सात कुलकर (क्रमशः) उत्पन्न हुए।
72. यहां उनके पूर्वभव के जन्म, नाम, प्रमाण, संघनन, संस्थान, वर्ण, स्त्री, आयु, भाग, भवन, भक्ति तथा नीतियों का वर्णन करूंगा।
73. अवर विदेह क्षेत्र में समान उम्र के दो वणिक मित्र थे। उनमें से एक मायावी था और दूसरा सरल स्वभाव का था। काल बीतने पर वे दोनों वहां मृत्यु को प्राप्त होने के बाद इस भरत क्षेत्र में हाथी और मनुष्य के रूप में उत्पन्न हुए।
74. यहां एक-दूसरे को देखने पर उनमें आपस में मित्रता हो गयी। हाथी मनुष्य के पास आकर बैठा और मनुष्य उस पर सवार हो गया। इसे देखकर उस समय के यौगलिकों ने उनका नाम विमलवाहन (देखने में प्रिय होने से विमल और हाथी की सवारी करने से वाहन) नाम दिया। कालान्तर में वहां कल्पवृक्ष आदि की कमी होने लगी तो यौगलिकों में उनको लेकर कलह होने लगा। तब यौगलिकों ने विमलवाहन को अपना नेता चुना और विमलवाहन ने हाथी पर घूम-घूमकर यौगलिकों के बीच कल्पवृक्षों का बंटवारा किया और इसकी व्यवस्था की।
75. ये सात कुलकर थे-1. विमलवाहन, 2. चक्षुष्मान्, 3. यशस्वी, 4. अभिचंद्र, 5. प्रसेनजित, 6. मरुदेव और 7. नाभिराय।
76. इनमें से पहले की लंबाई नौ सौ धनुष प्रमाण, दूसरे की आठ सौ धनुष प्रमाण, तीसरे की सात सौ धनुष प्रमाण, चौथे की छह सौ पचास धनुष प्रमाण, पांचवें की छह सौ धनुष प्रमाण, छठे की पांच सौ पचास धनुष प्रमाण तथा सातवें की पांच सौ पच्चीस धनुष प्रमाण थी।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

77. वज्जरिसभसंघयणा समचउरंसा य हुंति संठाणे।  
वण्णं पि य वोच्छामिं पत्तेयं जस्स जं आसि।।
78. चक्खुम जसमं च पसेणई य एते पियंगुवण्णाभा।  
अभिचंदो ससिगोरो, निम्मलकणगप्पभा सेसा।।
79. चंदजस 1 चंदकंता 2 सुरुव 3 पडिरुव 4 चक्खुकंता 5 य।  
सिरिकंता 6 मरुदेवी 7 कुलगरपत्तीण नामाई।।
80. संघयणं संठाणं उच्चत्तं चैव कुलगरेहिं समं।  
वण्णेण एगवण्णा सव्वाओ पियंगुवण्णाओ।।
81. पलिओवमदसभाओ पढमस्साउं तओ असंखेज्जा।  
ते आणुव्विहीणा पुव्वा नाभिस्स संखेज्जा।।
82. पुव्वस्स उ परिमाणं सयरिं खलु होंति कोडिलक्खा उ।  
छप्पन्नं च सहस्सा बोधव्वा वासकोडीणं।।
83. जं चैव आउगं कुलगराण तं चैव होइ तासिं पि।  
जं पढमगस्स आउं तावइयं होइ हत्थिस्स।।
84. जं जस्स आउयं खलु तं दसभाए समं विभइऊणं।  
मज्झिल्लट्ठतिभाए कुलगरकालं वियाणाहि।।
85. पढमो य कुमारत्ते भागो चरिमो य वुड्ढभावम्मि।  
ते पयणुपेज्ज-देसा सव्वे देवेसु उववण्णा।।
86. दो चैव सुवण्णेसुं, उदहिकुमारेसु होंति दो चैव।  
दो दीवकुमारेसुं, एगो नागोसु उववण्णों।।
87. हत्थी छ-व्वित्थीओ नागकुमारेसु हुंति उववण्णा।  
एगा सिद्धिं पत्ता मरुदेवी नाभिणो पत्ती।।
88. हक्कारे मक्कारे धिक्कारे चैव दंडनीईओ।  
वोच्छं तासिं' विसेसं जहकम्मं आणुपुव्वीए।।

1. तासु हं की०।।

## हिन्दी अनुवाद

77. वे सब वज्रऋषभनाराच संघनन तथा समचतुरम्र संस्थान से युक्त थे।  
प्रत्येक का जैसा- जैसा वर्ण था, अब वैसा ही कहता हूं।
78. चक्षुष्मान् यशस्वी और प्रसेनजित नील वर्ण के थे। अभिचन्द्र चन्द्रमा के  
समान धवल तथा शेष निर्मल स्वर्ण वर्ण के थे।
79. इन कुलकरों की पत्नियों के नाम क्रमशः हैं-1. चन्द्रयशा, 2. चन्द्रकांता,  
3. सुरुपा, 4. प्रतिरूपा, 5. चक्षुकांता, 6. श्रीकांता तथा 7. मरुदेवी।
80. इन सबका संघनन, संस्थान एवं ऊंचाई अपने पतियों के समान ही था  
तथा सभी के एक ही वर्ण - नील वर्ण- था।
81. प्रथम कुलकर की आयु पत्योपम के दसवें भाग प्रमाण असंख्यात् वर्ष  
थी तथा वह क्रमशः कम होते हुए अंतिम कुलकर नाभिराय की आयु  
संख्यात पूर्व की हो गयी।
82. पूर्व का परिमाण सत्तर लाख, छप्पन हजार करोड़ वर्ष जानना चाहिए।  
(84 लाख वर्ष गुना 84 लाख वर्ष = 1 पूर्व)
83. जितनी आयु कुलकरों की होती है, उतनी ही उनकी पत्नियों की भी  
होती है। जितनी आयु प्रथम कुलकर की थी उतनी ही उम्र उस समय  
के उनके हाथी की भी थी।
84. जिसकी जितनी आयु है उसे समान रूप से दस भागों में विभक्त कर  
मध्य के आठ भाग का समय कुलकर काल के रूप में जानना चाहिए।
85. दस भागों में से इसका प्रथम भाग कुलकरो का कुमारकाल तथा अंतिम  
भाग वृद्धावस्था का होता है। वे सभी राग-द्वेष से हीन होकर  
देवयोनियों में उत्पन्न होते हैं।
86. इनमें से दो कुलकर सुपर्णकुमार योनि में, दो उदधि कुमार, दो  
दीपकुमार तथा एक नागकुमार योनि में उत्पन्न होते हैं।
87. हाथी तथा छह कुलकरों की पत्नियाँ नागकुमार योनि में उत्पन्न होती  
हैं। एक नाभिराय की पत्नी मोक्ष प्राप्त करती हैं।
88. दंडनीति में उस समय हक्कार, मक्कार तथा धिक्कार नीति प्रचलित  
थी। इसकी विशेषता को आनुपूर्वी क्रम से कहता हूं।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

89. पढम-वीयाण पढमा, तइए-चउत्थाण अहिणवा बीया।  
पंचम-छट्ठस्स य सत्तमस्स तइया अभिणवा उ।।
90. एवं चिय वत्तव्वा एयवयाईसु दससु खेत्तेसुं।  
एक्केक्कम्मि य तइया सत्तेव य कुलगरा कमसो।।

### (गाथा 91-99.समाइदसतित्थयरचवणकल्लाणगपरुवणं)

91. सव्वे विमाणपवरे अणुत्तरे भुंजिऊण से(ते) भोए।  
सव्वट्ठसिद्धिनामे उदहिसमाणाइं तेत्तीसं।।
92. ओसप्पिणीइमीसे तइयाए समाए पच्छिमे भागे।  
चइऊण विमाणओ उत्तरसाढाहिं नक्खत्ते।।
93. कुलगरवंसपसूओ आसी इक्खागपंससंभूओ।  
नाभीनामकुलगरो पवरो तेसिं नरगणाणं।।
94. तस्साणुरुवसीला सव्वंगोवंगलक्खणपसत्था।  
उत्तमरुवसुरुवा जाया मरुदेविनाम त्ति।।
95. तीए उदरम्मि तो सो तिनाणसहिओ महायसो भयवं।  
गम्भत्ता उववन्नो पढमीसो भरहवासस्स।।
96. एवं नव तित्थयरा चंदाणणमाइ नवसु खेत्तेसु।  
चइऊण विमाणवरा उत्तरसाढाहिं नक्खत्ते।।
97. कुलगरवंसपसूया आसी इक्खागवंससंभूया।  
नव कुलगर नाभिसमा पवरा तेसिं नरगणाणं।।
98. उत्तमरुवसुरुवा तेसिं भज्जाओ कुलगराणं तु।  
तासिं उदरुप्पन्ना नवसु वि वासेसु तित्थयरा।।
99. एवं दस भवणीसा दससु वि वासेसु हुंति समकालं।  
उत्तमरुवसुरुवा तिनाणसहिया महाभागा।।

1. तेंसिं कुलगो हं० की०।।

## हिन्दी अनुवाद

89. प्रथम-द्वितीय कुलकर के काल में केवल प्रथम हक्कार नीति, तृतीय-चतुर्थ कुलकर के काल में प्रथम के साथ द्वितीय अभिनव मक्कार नीति तथा पंचम-षष्ठम् एवं सप्तम कुलकर के काल में इन दोनों के साथ ही नई धिक्कार नीति यानी तीनों नीतियां प्रचलित थी।
90. इस प्रकार ऐरावत् आदि दसों क्षेत्रों में से उस समय प्रत्येक में इसी क्रम से सात कुलकर उत्पन्न हुए। ऐसा समझना चाहिए।
- (ऋषभ आदि दस तीर्थकरों की च्यवन कल्याणक की प्ररूपणा, गाथा 91-99)
- 91+94. सभी अनुत्तर विमानों में श्रेष्ठ सर्वार्थसिद्धि विमान में तैंतीस सागरोपम पर्यन्त वहां के भोगों को भोगकर इस अवसर्पिणी काल के तृतीय आरे के अंतिम भाग में, उस विमान से च्युत होकर, उत्तम इक्ष्वाकू वंश के कुलकर वंश में उत्पन्न, उस समय के मनुष्यों में श्रेष्ठ नाभि नामक कुलकर की तथानुरूप रूपशील आदि सभी लक्षणों में श्रेष्ठ सर्वांग सुन्दरी मरुदेवी नामक पत्नी थी
95. उन मरुदेवी के गर्भ में महायशस्वी तीन ज्ञानों से युक्त भरतवर्ष के प्रथम अधिपति भगवान ऋषभदेव उत्पन्न हुए।
96. इसी प्रकार चन्द्रानन आदि नौ तीर्थकर श्रेष्ठ विमानों से च्युत होकर शेष ऐरावत आदि नौ क्षेत्रों में उत्तराषाढा नक्षत्र में तीर्थकर रूप में उत्पन्न हुए।
97. उन नौ क्षेत्रों में उस समय इक्ष्वाकू कुल में नाभिराय के समान ही वहां के मनुष्यों में श्रेष्ठ नौ कुलकर हुए थे।
98. उन कुलकरों की परम रूप लावण्य से संपन्न पत्नियां थीं। उन्हीं नौ कुलकर पत्नियों से शेष नौ क्षेत्रों में नौ तीर्थकर उत्पन्न हुए।
99. इस प्रकार उत्तम रूप, स्वरूप तथा तीन ज्ञानों से युक्त, महाभाग्यशाली, दस भवनपति, दस क्षेत्रों में समकालीन रूप में उत्पन्न होते हैं।

100. मरुदेवीपमुहाओ वियसियकमलाणणओ रयणीए।  
पेच्छंति सुहपसुत्ता चोद्दस पवरे महासुविणे।।
101. सखिंदु-कुंदगोरं विउलखं (? लक्खं)धं सुतिकखसिंगगं।  
नियनियवयणमभिगयं वसभं पेच्छंति विलसंतं।।
102. बिइयं पि (? वि) भिण्णकरडं सत्तंगपइट्ठियं धवलदंतं।  
ऊसियकरं गइ दं सुरिदनागप्पमे पुरओ।।
103. विक्खिन्नकेसरसहं (डं) महुगुलियक्खं सुजायलंगूलं।  
हरिणविवक्खं सक्खं सुतिकखनक्खं तओ सीहं।।
104. चउहिं चउदंतेहिं नागवरिदेहिं, धवलदंतेहिं।  
सिरिअभिसंयं पेच्छंति जिणवराणं तु जणणीओ।।
105. नाणारयण विचित्तं वियसियकमलुप्पलं सुरभिगंधिं।  
छप्पयगणोववेयं दामं पेच्छंति सुसिलिट्ठं।।
106. उदयगिरिमत्थयत्थं रस्सिसहस्सेहि समणुगम्मंतं।  
पेच्छंति सुहपसुत्ता कुमुदागरबोहगं चंदं।।
107. एवं वियसियवयणा रविमंडलमुज्जलं पगासितं।  
पेच्छंति अंबरगयं अब्भासत्थं ठियं पुरओ।।

100. विकसित कमल के समान नेत्रों वाली मरुदेवी प्रमुख सभी दस क्षेत्रों में उत्पन्न होनेवाले दसों तीर्थकरों की माताएं रात्रि में सुखपूर्वक सुप्तावस्था में चौदह श्रेष्ठ महास्वप्न देखती हैं।
101. पहले स्वप्न में शंखचन्द्र और मोगरे के फूल सदृश श्वेत विशाल कंधेवाले, तीक्ष्ण सींगवाले बैल को उन सब दसों माताओं ने आनन्दचित्त होकर अपने मुंह में प्रवेश करते हुए देखा।
102. दूसरे स्वप्न में विलक्षण कपोलों के चारों ओर मदपान के लिए भंवरों से गुंजायमान होते, ऊपर की ओर उठे सूंडवाले श्वेत दंतयुक्त, सप्तांगवाले, इन्द्र के हाथी के सामन श्रेष्ठ गजेन्द्र को सामने देखा।
103. तीसरे स्वप्न में कंधे पर शोभायमान लंबे केशपाश, मधु के समान पिंगलवर्ण आंखवाले, सुंदर नस्ल के, लंबी पूंछवाले, मृग के प्रत्यक्ष शत्रु तीक्ष्ण नखवाले सिंह को अपने सम्मुख देखा।
104. जिनवरों की माताओं ने चौथे स्वप्न में इन्द्र के श्वेत दंतवाले गजराजों में श्रेष्ठ चार दांत वाले हाथियों के द्वारा लक्ष्मी का अभिषेक किए जाते हुए देखा।
105. पांचवें स्वप्न में इन माताओं ने विविध प्रकार के अद्भूत रत्नों से युक्त, भौरों से गुंजारमान विकसित सुरभि गंधवाले कमलों की सुंदर रूप से गूथी हुई माला को देखा।
106. छठे स्वप्न में उदयगिरि के शिखर पर स्थित हजारों रश्मियों से अनुस्यूत कुमुदवन को खिलानेवाले चन्द्रमा को देखकर वे माताएं आनंदित हुईं।
107. सातवें स्वप्न में प्रसन्नवदना माताओं ने आकाश के अग्रभाग में स्थित होकर संसार को प्रकाशित करनेवाले उज्ज्वल रविमंडल को अपने सामने देखा।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

108. दिव्यं रयणविचित्तं पेच्छंति महासयं परमरम्मं ।  
निव्वज्जवज्जसारं विज्जुज्जलचंचलपडागं ॥
109. तुगं गयणबिलग्गं धरणियलपइदित्थं महाकायं ।  
आगासं व मिणेउ ठियं महिदज्जयं पुरओ ॥
110. हेमंतबालदिणयरसमप्पभं सुरभिवारिपडिपुण्णं ।  
दिव्यं कंचणकलसं पउमपिहाणं तु पेच्छंति ॥
111. फलिहसरिच्छऽच्छजलं सउणगणनिसेवियं मणभिरामं ।  
वियसियपउमसरं तं पेच्छंति हु हरिसियमणाओ ॥
112. उम्मीसहस्सपउरं नाणाविहमच्छ-कच्छभाइण्णं ।  
गंभीरगज्जियरवं खीरसमुददं तु पेच्छंति ॥
113. वेवलमिरीइकवयं विणिम्मयुतं समूसियमुदारं ।  
पासायं पेच्छंती पडागमालाउलं रम्मं ॥
114. मंदरगुहगंभीरं पमुइयपक्कीलियं मणभिरामं ।  
नागभवणं महंतं पेच्छंती पीवरसिरीयं ॥
115. निद्धिंघणपप्पलियं व हुयवहं नियगभूइसंजुत्तं ।  
पेच्छंती रयणचयं किरणावलिरंजियदिसोहं ॥

## हिन्दी अनुवाद

- 108+109. आठवें स्वप्न में माताओं ने दिव्य अपूर्व रत्नों से विरचित, परम रम्य, विद्युत की तरह उज्ज्वल, चंचलित, गगनचुम्बी, भूतल पर प्रतिष्ठित होकर विशाल आकाश में ऊपरी भाग को स्पर्श करते हुए उत्तुंग फहराते श्रेष्ठ महेन्द्र ध्वज को देखा।
110. नौवें स्वप्न में उन माताओं ने हेमंत ऋतु के बालसूर्य सदृश प्रभा वाले, सुगंधित जल से परिपूर्ण कमल से आच्छादित दिव्य स्वर्ण कलश को देखा।
111. दसवें स्वप्न में उन हृदय से प्रसन्न माताओं ने स्फटिक मणि सदृश्य स्वच्छ जल से भरे, पक्षियों के मनभिराम निवासवाले विकसित कमलदल से युक्त पद्म सरोवर को देखा।
112. ग्यारहवें स्वप्न में उनने प्रचूर हजारों उर्मियों या लहरों से शोभायमान, नाना प्रकार की मछलियों तथा कच्छपों से शोभित, गंभीर गर्जन करते हुए क्षीरसमुद्र को देखा।
113. बारहवें स्वप्न में वज्र किरणों की प्रभा को छोड़ते हुए ध्वज तथा मालावलियों से सुशोभित गगनचुम्बी विशाल सुरम्य प्रासाद को देखा।
114. उन माताओं ने धीर-गंभीर मेरुपर्वत के समान अवस्थित, चित्ताकर्षक, हर्षपूर्वक क्रीड़ायोग्य विशाल नागभवन को गर्भवती माताओं ने देखा। (नोट : यहां यह श्लोक अधिक है। इसे अगर अलग स्वप्न माना जाए तो स्वप्नों की संख्या 15 हो जाएगी, जबकि इसे 14 ही रहना चाहिए। दूसरी ओर इस स्वप्न की विषय-वस्तु इससे पहले वाली गाथा की विषय-वस्तु के समान ही है। अतः इसे बारहवें स्वप्न के विकल्प के रूप में ही रखकर देखना चाहिए।)
115. तेरहवें स्वप्न में दसों माताओं ने धूमरहित श्रेष्ठ ईंधन (संभवतः धूप, अगरू, कपूर, घी चंदन आदि) से प्रज्वलित अपनी लपटों की माला आदि वास्तविक गुणों से युक्त अग्नि के समान सभी दिशाओं को अपने ऐश्वर्यपूर्ण किरणों से रंजित करनेवाले रयणोच्चय (रत्नराशि) को देखा।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

116. परिणयकुसुम्भसरिसं आहुइपउरं हुयासणं जलियं ।  
तणुपवणेरियजालं निद्धूमपयक्खिणावत्तं ॥
117. एते चोद्दस सुमिणे ताओ पेच्छंति वीरजणणीओ ।  
मरुदेवीपमुहाओ, कहिंसु नियकुलगराणं तु ॥
118. तो ते कुलगरनाहा जायातो भणांति सोहणं वयणं ।  
‘होहिंति तुम्ह पुत्ता कित्तीजुत्ता महासत्ता ॥
119. ते वि य अम्हाहितो अहिया होहिंति नत्थि संदेहो ।  
अहवा वि कुलगराण वि विसिट्ठतरयं तु जं ठाणं’ ॥
120. तत्तो य पहायम्मी गयम्मि सूरे जुगंतरं कमसो ।  
मिहुणाण ताण पासं सक्कीसाणा गया सहसा ॥
121. तेहि विणएण तो ते सुविणफलं पुच्छिया सुरवरिंदा ।  
चिंतुं पिव ईसिं कयंजली सुरवरा भणिया ॥
122. जह “ एते साइसया दिट्ठा कल्लाणदंसणा सुमिणा ।  
होहिंति तुम्ह पुत्ता उत्तमविण्णाणसंजुत्ता ॥
123. होहिंति पुहइपाला दससु वि खेत्तेसु ते महासत्ता ।  
दरिसंति य सिप्पसयं बावत्तरिमेव य कलाओ ॥
124. भोत्तूण वरे भोए, रज्जं काऊण, दाउ दाणं तु ।  
काऊण य सामण्णं, ‘जाहिंतिऽयरामरं ठाणं’ ॥
125. एवं दो वि सुरिंदा सविणफलं साहिऊण मिहुणाणं ।  
‘अच्छह सुहं’ ति वोत्तुं आमंतेउं गया सगं ॥
126. अह हरिसिया कुलगरा आदेसं तं सुणेत्तु सक्काणं ।  
जणणीओ वि पमोयं अउलं गच्छंति तं वेलं ॥

1. जायंति हं० की० ॥

## हिन्दी अनुवाद

116. चौदहवें स्वप्न में उन दसों जिन माताओं ने सिद्ध हो चुके खस तिजारा के खिले हुए फूल के समान, प्रचूर आहूति से प्रज्वलित हूतासन के समान, हवा के हल्के झोंकों से प्रेरित ज्वालाओं से युक्त धूमरहित अग्नि को देखा जो प्रदक्षिणा करती हुई जान पड़ती है।
117. इन चौदह स्वप्नों को उस समय मरुदेवी समेत सभी वीरांगना माताओं ने देखा तथा अपने कुलकर पतियों से इनका वर्णन कहा।
- 118+ 119. तब उन कुलकरों ने अपनी पत्नियों से सुंदर वचन में कहा, “तुम्हें महा पराक्रमी तथा कीर्तिवान् पुत्र प्राप्त होगा। वह मुझसे भी श्रेष्ठ होगा, इसमें कोई संदेह नहीं है। अर्थात् कुलकरों के पुत्र कुलकरों से उच्च स्थान को प्राप्त करेंगे।
120. अब प्रभात होने और सूर्य के क्रमशः चार हाथ ऊपर चढ़ जाने यानि प्रथम प्रहर में उन मिथुनों के पास अचानक शक्रेन्द्र और ईशानेन्द्र पहुंचे।
121. तब, उन मिथुनों ने दोनों इन्द्रों से विनयपूर्वक स्वप्न फल पूछा। तब सिद्धों को सुमिरन कर करबद्ध होकर सुरपतियों ने कहा –
122. यदि इतना अतिशय और कल्याणकारी स्वप्न आप माताओं ने देखा है तो आपको विशेष उत्तम ज्ञान से युक्त पुत्ररत्न की प्राप्ति होगी।
123. दसों क्षेत्रों में उत्पन्न होनेवाले वे पुत्र पृथ्वी का पालन करनेवाले तथा महा पराक्रमी होंगे। वह सौ शिल्प तथा बहत्तर कलाओं की शिक्षा लोगों को देनेवाले होंगे।
124. ये आपके पुत्र उत्तम भोगों को भोगकर राज्य पर शासन कर, दान देकर और श्रामण्य ग्रहण कर अजरामर पद यानि सिद्धलोक को प्राप्त करेंगे।
125. इस प्रकार दोनों इन्द्र स्वप्न फल की सिद्धि बताकर और मिथुनों को ‘अक्षत सुख प्राप्त कर रहिए’— ऐसा निवेदन कर उनसे आज्ञा लेकर अपने-अपने स्वर्ग को प्रस्थान कर गये।
126. दोनों इन्द्रों के वचन को सुनकर कुलकर अति हर्षित हुए। जिन माताएं भी उन वचनों को सुनकर उस वेला में अत्यन्त प्रमुदित हुईं।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

127. तप्पभिइ (स)भागंतुं माणुसरूवं समस्सिया तहियं।  
जिणजणणीओ सेवति देवयाओ य जत्तेणं।।
128. सक्कादेसेण तया नाणाविहपहरणा जिणवरिंदे।  
रक्खति हट्ठतुट्ठा दससु वि खेत्तेसु देवीओ।।
129. संपुण्णदोहलाओ विवित्तसयणासणाओ सव्वाओ।  
अप्पहियं आहारं सेवति मणाणुकूलं तु।।
130. ववगयसोग-भयाओ वहमाणीओ सुहेहिं ते गम्भे।  
पत्ते वि पसवसमए अच्चत्थं गूढगम्भाओ।।
131. जह वड्ढंति सुगम्भा सोहा तह तासि पीवरा होइ।  
अहियं च जणो मिहुणाण तेहिं सह संगयं कुणइ।।

## (गाथा 132-273. उसभाइदसजिणाणं जम्मो जम्मूस्सववण्णणं च)

132. अह नवमम्मि अईए मासे संपट्ठिए उ दसमम्मि।  
चित्तबहुलऽट्ठमीए वोलीणे पढमरत्तम्मि।।
133. उत्तरसाढाविसए अह संपत्ते निसागरे कमसो।  
पसवति सुहेण सुए लक्खणजुत्ते महासत्ते।।
134. नाणारयणविचित्ता वसुधारा निवडिया पगासंती।  
गंभीरमहुरसददो तो दुंदुहिताडिओ गयणे।।
135. देवोवयणपहाए रयणी आसी य सा दिवसभूया।  
'पडहगण-गीय-वाइय-कहक्कहुक्कुट्ठिसददाला।।

1. पमहो सं० ह०। पमहागण० की०।।

## हिन्दी अनुवाद

127. तब से लेकर (इन्द्रों के जाने के बाद से ही) देवों की पत्नियां जिन् माताओं को पास रहकर उनकी यत्नपूर्वक सेवा करने लगीं।
128. उसके बाद से ये देवियां शक्रों की आज्ञा पाकर हृष्ट-पुष्ट होकर गर्भस्थ जिनों को प्रहर आदि सभी प्रकार की अनिष्टों से रक्षा करती हैं।
129. सभी माताएं सभी प्रकार के दोहदों को पूर्ण कर संतुष्ट होती हैं। ये दोहद उनके विविध प्रकार के उत्तम शयनासनों से तत्काल पूर्ण हो गए। वे माताएं मनोनुकूल और हितकारी अल्प आहारों का सेवन करती हैं।
130. वे माताएं सभी प्रकार के शोक भय आदि से रहित होकर सुखपूर्वक अपने गर्भों को वहन करती रहीं। प्रसव समय निकट आ जाने पर भी उनके गर्भ गूढ यानी अव्यक्त ही बने रहे। उनके गर्भ अन्य गर्भवतियों की तरह उभरे नहीं दिखते।
131. जैसे-जैसे गर्भ का समय बढ़ता गया, वैसे-वैसे उनकी शोभा, तेज आदि भी बढ़ता जाता है। दूसरे उस समय के यौगलिक मिथुन अधिक से अधिक संख्या में आकर उन माताओं के संसर्ग में रहने लगते हैं।

## (ऋषभ आदि दस जिनों का जन्म तथा जन्मोत्सव आदि का वर्णन, गाथा 132-273)

- 132+133. गर्भ के नौ महीने बीतने और दसवें महीने के समुपस्थित होने पर चैत्र महीने के कृष्ण पक्ष की अष्टमी की पूर्वार्द्ध रात्रि के बीत जाने के बाद चंद्रमा के क्रमशः उत्तराषाढा नक्षत्र में आने पर दसों क्षेत्रों की ये माताएं शुभ लक्षणों से युक्त महासत्त्वशाली पुत्रों को सुखपूर्वक जन्म देती हैं।
134. उस समय नाना प्रकार के रत्नों से प्रकाशित होती हुई विचित्र वसुधारा की वृष्टि पृथ्वी पर हुई और आकाश में (देवताओं द्वारा बजाई गई) मधुर, गंभीर शब्दों वाली दुंदुभी बज उठी।
135. देवताओं के उस समय उन क्षेत्रों में आगमन से उनके प्रभामंडलों से वह रात दिन की तरह जगमग हो गयी। प्रमुदित देव सुंदरियों द्वारा सुंदर आवाज में गाए जाते गीतों की सुमधुर लहरियों और बजाए जाते वाद्यों की ध्वनियों और (यौगलिकों के कहकहों, ठहाकों आदि से) वह रात शब्दाला या वाचाल हो गयी। यानी निशब्द रात्रि में खूब हो-हल्ला होने लगा।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

136. उद्ध-मह-तिरियलोए वत्थव्वाओ दिसाकुमारीओ।  
ओहिण्णाणेण जिणे जाए नारुण तम्मि वणे' ॥
137. जिणभत्तिहरिसियाओ 'जीयं' ति य जोयणप्पमाणेहिं।  
सव्वयरपरिगप्पियजाणविमाणेहिं दिव्वेहिं ॥
138. अह एंति तहिं तुरियं हरिसवसुक्करिसपुलइयंगीओ।  
अभिवंदिरुण पयया थुणांति महुरस्सरा इणमो ॥
139. 'तुम्ह नमो नवपंकयसरिसविबुज्जंतकोमलऽच्छीणं।  
जेहिं इमे सुयरयणे बूढे कुच्छीहिं जिणचंदे ॥
140. तुब्भऽत्थ सामिणीहिं वियडं तिभुवणमलकियं पयडं।  
पढमिल्ला जगगुरुणो जणिया तित्थंकरा जाहिं' ॥
141. जिणजणणीओ थोउं भणांति ताओ सुचारुवयणाओ।  
'अम्हे उवायगयाओ भत्तीए दिसाकुमारीओ ॥
142. जिणचंदाण भगवओ वोच्छिण्णपुण्णभवण विणएण।  
काहामो जम्ममहं, तुब्भेहिं न भाइयव्वं' ति ॥
143. सोमणस-गंधमायण-विज्जुप्पभ-मालवंतवासीओ।  
अट्ठ दिसदेवयाओ वत्थव्वाओ अहेलोए ॥
144. भोगंकर 1 भोगवती 2 सुभाग 3 तह भोग मालिणि 4 सुवच्छा' 5।  
तत्तो चेव सुमित्ता' 6 अणिंदिया 7 पुप्फमाला 8 य ॥
- (गा. 55-62. विइयसुसमाअरयभावानं परुवणं)
145. एयाओ पवणेणं सुभेण ते जम्मभूमिवणसंडे।  
आजोयणं समंता सोहेंति पहट्टमणसीओ ॥

1. अस्मिन् प्रकीर्णके 'वण' शब्दः 'आलय' अर्थेऽपि योजितोऽस्ति ॥  
2. सुवच्छा वच्छमित्ता य वारिसेणा बलाहगा ॥ इति स्थानांगसूत्रे (आगमोदयसमित्तिप्रकाशितावृत्तौ, 437 तमं पत्रम्) ॥  
3. 'सुमित्ता' स्थाने 'वच्छमित्ता' इति स्थानांगसूत्रे 'चउप्पन्नमहापुरिस चरियं' ग्रन्थे (पृ. 35) च। त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरितेऽप्यत्र 'वत्समित्रा इत्यस्ति, यद्यपि जैनधर्मप्रसारक सभा-जैन-आत्मानन्द सभा प्रकाशितावृत्तयोर्मूलपाठे पंचम-षष्ठदिककुमार्यो ' तोयधारा 5 विचित्रा 6' इति नाम्ना स्वीकृते (पर्व 1 सर्ग 2 श्लोक 274) किन्तु द्वयोरप्यावृत्तयोः 'सुवत्सा 5 वत्समित्रा 6' इति ताडपत्रीयप्रत्युपलब्ध शुद्धपाठः पाठान्तरत्वेन निर्दिष्टोऽस्ति ॥

## हिन्दी अनुवाद

- 136+137+138 अवधि ज्ञान से युक्त जिनों को उत्पन्न हुआ जानकर उर्ध्वलोक, अधोलोक और तिर्यक लोक की दिशाकुमारियां तत्काल अपने- अपने निवास स्थानों में जिनभक्ति में विभोर हो जाती हैं। फिर योजन प्रमाण विस्तार हर प्रकार की सुविधाओं और व्यवस्थाओं से सज्जित दिव्य विमानों में बैठकर हर्षोन्माद से प्रफुल्लित अंगों से शीघ्रतापूर्वक वहां पहुंचती हैं (जहां जिनदेव व उनकी माताएं हैं)। वहां वे सब पुलकित शरीर से जिन माताओं की वंदना कर यत्नपूर्वक मधुर स्वरों में उनकी स्तुति करती हैं-
139. हे नवकमल सदृश्य कोमल आंखवाली, श्रुतरत्नों के ज्ञाता जिनचन्द्र को अपने कोख में धारण करनेवाली माताएं, तुम्हें नमस्कार है।
140. आपने अति विशाल त्रिभुवन को अलंकृत करनेवाले प्रथम जगद्गुरु तीर्थकरों को जन्म दिया है। हे जिनमाता, असल में आपने तीनों लोकों को प्रकट रूप में अलंकृत कर दिया है।
141. मोदमयी वाणी से जिनमाताओं की वंदना करके वे दिशाकुमारियां कहती हैं-"हम दिशाकुमारियां भक्ति से परिपूर्ण होकर यहां आई हैं।"
142. इन क्षेत्रों में सुदीर्घ काल तक व्यवच्छिन्न हो चुके धर्मतीर्थ को पुनः यहां स्थापित करने के लिए उत्पन्न होनेवाले इन जिनों के जन्मोत्सव को हम मनाएंगी। आप किसी प्रकार से भयभीत मत होना।"
143. सौमनस, गंधमार्दन, विद्युत्प्रभ, मालवंत में वास करनेवाली आठ दिशाकुमारी देवियां अधोलोक में निवास करनेवाली होती हैं।
144. उनके नाम हैं- 1. भोगंकर, 2. भोगवती, 3. सुभोगा, 4. भोगमालिनी, 5. सुवत्सा, 6. सुमित्रा, 7. अनिंदिता एवं 8. पुष्पमाला।

## (द्वितीय सुषमा आरा के भाव का प्ररूपण, गाथा. 55-62)

145. सब अधोलोकवासी दिशाकुमारियां मिलकर प्रसन्न मन से जन्मभूमि वाले स्थान के चारों ओर के एक योजन पर्यन्त भूमि को शुभ्र हवा के झोकों से अच्छी तरह से परिमार्जित कर स्वच्छ और सुंदर बनाती है।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

146. अमणुण्णदुरभिगंधितण-सक्कर-पत्तविरहियं काउं।  
महुरं गायंतीओ पासे चिट्ठंति जणणीणं॥
147. मेहंकर' 1 मेहवई 2 सुमेह 3 तह मेहमालिणि 4 विचित्ता 5॥  
तत्तो य तोयधारा 6 बलाहका 7 वारिसेणा 8 य ॥
148. नंदणवणकूडेसुं एयाओ उड्ढलोगवत्थव्वां।  
तुरियं विउव्विऊणं सगज्जियसविज्जुले मेहे॥
149. तो चिक्खल्लविरहियं सुसुरहिजलबिंदुविद्वियरेणुं।  
घाण-मणनेव्वुइकरं करेति वसुधातले (?लं) तत्थ॥
150. पुणरवि जलयं थलयं सव्वोउयसंभवं सुरभिगंधिं।  
वासंति कुसुमवासं सुगंधगंधेहिं वामीसं॥
151. तो तं दसद्धवणं पिंडग<sup>२</sup> (?भू) यं छमायले विमले।  
सोहइ नवसरयम्मि व सुनिम्मलं जोइसं गयणे॥
152. तह कालागरु- कुंदुरुय<sup>३</sup> धूवमघ (मघ) मघंतदिसि (?य) कं (क्क)।  
काउं सुरकण्णाओ चिट्ठंति पगायमाणीओ॥
153. नंदुत्तरा 1 य नंदा 2 आणंदा 3 नंदिबद्धणा 4 चेव।  
विजया 5 य वेजयंती 6 जयंति 7 अवराइ<sup>४</sup> अट्ठमिया 8॥
154. एयाओ रुयगनगे पुव्वे कूडे वसंति अमरीओ।  
आदंसगहत्थाओ जणणीणं ठंति पुव्वेणं॥

1. अत्र मूलस्थपाठानुसारौ पाठः 'चउप्पन्नमहापुरिसघरियं' ग्रन्थे। "मेघंकरा मेघवती सुमेघा मेघमालिणी। तोयधारा विचित्रा य पुष्पमाला अणिंदिया।" इति स्थानांगसूत्रे (आगमोदयसमितिप्रकाशितौवृत्तौ 437 तमं पत्रम्)। "मेघंकरा मेघवती सुमेघा मेघमालिनी। तोयधारा विचित्रा य वारिषेणा बलाहिका।" इति त्रिषष्टिशालाकापुरुषचरिते (पर्व 1 सर्ग 2 श्लोक 282 जैनधर्मप्रसारकसभाप्रकाशिते), जैन-आत्मानन्दसभाप्रकाशने त्वत्रोत्तरार्द्धे यथा-"सुवत्सा वत्समित्रा च वारिषेणा बलाहिका।" पुनरत्रैव स्थाने शुद्धपाठः पाठान्तरत्वेन निर्दिष्टोऽस्ति तत्र॥

2. 0गइ छमा0 सं0 ला0॥'

3. सर्वास्वपि प्रतिषु अत्र द्वितीयचरणे पाठत्रुटिरस्ति॥

4. अवराइ- आ + अट्ठ0 त्र अवराइअट्ठ0॥

## हिन्दी अनुवाद

146. ये सब दिशाकुमारियां इस पूरे क्षेत्र को अमनोज्ञ, दुर्गन्धयुक्त, घास-फूस आदि से मुक्त कर मधुर गीत गाती हुई माताओं के पास बैठ जाती हैं।
147. 1. मेघंकरा, 2. मेघवती, 3. सुमेघा, 4. मेघमालिनी, 5. विचित्रा, 6. तोयधारा, 7. बलाहका तथा 8. वारिषेणा।
148. ये आठ दिशाकुमारियां उर्ध्वलोक में नंदनवन के शिखरों पर निवास करने वाली कही गयी हैं। ये सब देवियां बड़ी स्फूर्ति से विद्युतयुक्त समधुर गर्जन के साथ मेघ को उत्पन्न करती हैं।
149. इस तरह से वर्षा को उत्पन्न कर ये कुमारी देवियां सुगंधित जल से धूल को गीला कर तथा धरती को जलबिंदुओं से आर्द्र कर आनंदप्रद बना देती हैं।
150. इसके पश्चात् इस पूरे क्षेत्र में समान रूप से सुरभिगंध, कुसुमगंध, सुगंध आदि गंधों से मिश्रित अति मनोहर पुष्पों की वर्षा करती हैं।
151. इस प्रकार वहां पांच रंग के कमल पुष्प समूह सूर्य की किरणों से प्रकाशित होकर और अधिक चमकते हुए वहां उस विमल क्षेत्र में नवसर हार की तरह सुशोभित होने लगते हैं।
152. कालागरु, कुंदरुक, धूप, मघ आदि से निमज्जित धूप को धूमयित कर ये देवकन्याएँ उस सुगंधित धूप को उस दिशा में मोड़ती हैं (जिस दिशा में जिनों का जन्मभवन है)। इस तरह अपनी देवप्रभा से प्रकाशित होती हुई वे कन्याएं वहां बैठ जाती हैं।
153. 1. नंदुत्तरा, 2. नंदा, 3. आनंदा, 4. नंदिवर्द्धना, 5. विजया, 6. वैजयन्ती 7. जयन्ती और 8. अपराजिता।
154. ये आठों दिशाकुमारियां रुचकपर्वत के पूर्व शिखर पर निवास करनेवाली मानी गयी हैं। ये दिशाकुमारियां माताओं के पूर्व दिशा में हाथ में दर्पण लिये रहती हैं।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

155. रुयगे दाहिणकूडे अट्ठ समाहार 1 सुप्पइण्णा 2 य ।  
तत्तो य सुप्पबुद्धा<sup>1</sup> 3 जसोधरा 4 चेव लच्छिमई 5 ॥
156. सेसवति 6 चित्तगुत्ता 7 जसो (वसु)धरा 8 चेव गहियभिंंगारा ।  
देवीण दाहिणेणं चिट्ठंति पगायमाणीओ ॥
157. देवीओ चेव इला 1 सुरा 2 य पुहवी 3 य एगनासा 4 य ।  
पउमावई 5 य नवमी 6 भद्दा 7 सीया<sup>2</sup> य अट्ठमिया 8 ॥
158. रुयगावरकूडनिवासिणीओ पच्चत्थिमेण जणणीणं ।  
गायंतीओ चिट्ठंति तालिवेंटे गहेऊण ॥
159. <sup>3</sup>तत्तो अलंबुसा 1 मिसकेती (सी) 2 तह पुंडरि (री)गिणी 3 चेव ।  
वारुणि 4 आसा 5 सव्वा 6 सिरी 7 हिरी 8 चेव उत्तरओ ॥
160. चामरहत्थगयाओ एयाओ चउरमहुरभणियाओ ।  
गायंतीओ महुरं चिट्ठंती दससु वासेसु ॥
161. रुयगे विदिसाकूडेसु होंति चत्तारि दिसिकुमारीओ ।  
चित्ता 1 य चित्तकणगा 2 सत्तेर 3 सोयामणिसनामा 4 ॥
162. चउसु दिसासु ठियाओ एयाओ जिणवराण जणणीणं ।  
महुरं गायंतीओ विज्जुज्जोयं करेसि<sup>4</sup> णं ॥
163. रुयगस्स मज्झदेसे दिसासु चत्तारि दिसिकुमारीओ ।  
<sup>5</sup>रुयगा 1 रुयगजसा 2 वि य सुरुय 3 रुयगावसनामा 4 ।
164. एयाओ जणणीणं चउदिदसिं चउरमहुरभणियाओ ।  
दीवियहत्थगयाओ चिट्ठंति पगायमाणीओ ॥

1. सुप्पसुद्धा ला० विना ॥

2. 'सीया' स्थाने 'अशोका' इति त्रिषष्टिशलाकापुरुष चरिते ॥

3. "अलंबुसा मितकेती मोंडरी गीतवारुणी । आसा य सव्वगा चेव सिरी हिरी चेव उत्तरओ ॥" इति स्थानांगसूत्रे (आगमोदय० प्रकाशने 437 तमं पत्रम्) । "अलंबुसा मिश्रकेषी पुण्डरीका च वारुणी । हासा सर्वप्रमा चैव श्रीहैरित्यभिधानतः ॥" इति त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरिते ॥

4. करिसिं हू ॥ हं० की० । "तओ विदिसिरुयगवत्थवाओ चत्तारि विज्जुकुमारीसामिणीओ समागच्छति । ताओ वि दीवगहत्थाओ तहेव चिट्ठंति । तओ विदिसिरुयगवत्थवाओ चत्तारि दिसाकुमारिप्पहाणाओ समागतूण भगवओ तित्थयरस्स चउरंगुलवज्जं नाभिं कप्पंति, रयण-वइरगम्भे य वियरए णिहणंति ॥" इति 'चउत्पन्नमहापुरिसचरियं' ग्रन्थे, त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरितेष्वेतदनुसारि वक्तव्यमस्ति ॥

5. "रुया रुयसा सुरुवा रुयावती" इति स्थानांगसूत्रे । "रुपा रूपाशिका चापि सुरुपा रूपावती" इति त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरिते ॥

## हिन्दी अनुवाद

- 155+156. 1. समाहारा, 2. सुप्रतिज्ञा, 3. सुप्रबुद्धा, 4. यशोधरा, 5. लक्ष्मीवती, 6. शेषवती, 7. चित्रगुप्ता और 8. जसोधरा । रुचकपर्वत के दक्षिण शिखर की वासी ये आठ दिशाकुमारियां संयुक्त रूप से माताओं की दाहिनी ओर हाथों में झारियां लेकर मधुर गीत गाती हुई उपस्थित रहती हैं ।
158. रुचक पर्वत पर निवास करनेवाली ये आठों दिशाकुमारियां जिन माताओं की पश्चिम दिशा में हाथों में पंखा लेकर सुमधुर गीत गाती हुई उपस्थित रहती हैं ।
159. 1. अलंबुसा, 2. मिस्रकेती, 3. पुंडरिगिणी, 4. वारुणि, 5. आसा, 6. सर्वा, 7. श्री और 8. ह्री ।
160. रुचक पर्वत के उत्तर शिखर पर रहनेवाली ये आठ मधुर कंठवाली चतुर दिशाकुमारियां होती हैं जो दसों क्षेत्रों में जिन माताओं के चारो ओर चंवर डुलाती गीत गाती हुई उपस्थित रहती हैं ।
161. रुचक पर्वत की विदिशा शिखर पर रहनेवाली चार दिशाकुमारियां—  
1. चित्रा, 2. चित्रकर्मगा, 3. सत्तेर तथा 4. सौदामिनी होती हैं ।
162. ये चारों दिशाकुमारियां जिनमाताओं के चारो ओर खड़ी होकर मधुर गीत गाती हुई विद्युत का प्रकाश फैलाती हैं ।
163. रुचक पर्वत के मध्य क्षेत्र के चारो दिशाओं में चार दिशा—  
कुमारियां— 1. रुचका, 2. रुचकयशा, 3. सुरुचा और 4. रुचकावती निवास करती हैं ।
164. ये चारो दिशाकुमारियां मधुर गीत गाती हुई माताओं के चारों ओर हाथ में प्रकाशित दीपक लेकर उपस्थित रहती हैं ।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

165. रुयगस्स मज्झदेसे वसंति विदिसासु दिव्वदेवीओ।  
विजया' 1 य वेजयंती 2 जयंति 3 अपराजिया 4 चेव।।
166. नालं छेत्तूणेया मुणालसरिसं जिणिंदचंदाणं।  
रयणसमुग्गे काउं पसत्थभूमिसु निहणांति।।
167. हरियालियाए पढमं बंधित्ता जिणवराण सव्वेसिं।  
कुव्वंति कदलिघरए दाहिण-पुव्वुत्तरदिसासु।।
168. तेसि बहुमज्झदेसे चाउस्साले ततो विउव्वेति।  
मज्जे तेसिं तिन्नि य रयंति सिंहासणवराइं।।
169. ताहे जिणजणणीओ जिणसहिया दाहिणे चउस्साले।  
सीहासणे ठवित्ता सयपाग-सहस्सपागेहिं।।
170. अब्भंगेरुण तओ सणियं गंधोदरण सुरभीणं।  
उव्वट्टेरुण तओ पुरत्थिमं नेति चउसालं।।
171. तत्थ ठवेउं सीहासणेसु मणि-कणग-रयणकलसेहिं।  
पउमुप्पलपिहाणेहिं सुरभिखीरोयभरिएहिं।।
172. न्हावेरुणं विहिणा जणणीओ दस वि मडिया विहिणा।  
लहुएहिं जिणवरिंदं (दे) दिव्वाभरणेहिं मंडंति।।
173. अह उत्तरिल्लभवणं नेउं सीहासणे निवेसित्ता।  
हरिचंदणकट्टाईं आणेउं नंदणवणाओ।।
174. समिहाओ कारुणं अग्गीहोमं करंति पययाओ।  
भूतीकम्मं काउं जिणाण रक्खं अह करंति।।
175. तित्थयरकन्नमूले मणिमयपासाणवट्टए मसिणे।  
आवो (?लो)उंति भणेति य 'महिहरआऊ भवंतु जिणा'।।

1. एतद्देवीचतुष्कस्योल्लेखोऽत्र स्थाने नास्ति 'चउप्पन्नमहापुरिसचरियं' ग्रन्थे त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरिते च, दृश्यतां चात्र 162 गाथायां निर्दिष्टा टिप्पणी।।

## हिन्दी अनुवाद

165. रुचक पर्वत के मध्य क्षेत्र के विदिशा कोण में—1. विजया, 2. वैजयन्ती, 3. जयन्ती और 4. अपराजिता नामक दिव्य देवियां निवास करती हैं।
166. ये चारों दिव्य देवियां जिनेन्द्रचन्द्रों के पद्मसदृश्य गर्भनाल को काटकर उसे रत्नपेटी में रखकर प्रसन्न भूमि में गाड़ती हैं।
167. वे सब दिशाकुमारियां पहले जिनवरों को हरियाली (विशेष प्रकार का तृण) नाल पर बांधकर फिर दक्षिण-पूर्व और उत्तर दिशा में कदली गृह बनाती हैं।
168. पुनः ये कुमारियां उसके अंदर बीचोंबीच भाग में दिव्यशक्ति से तीन चतुःशालाओं का निर्माण करती हैं। फिर उन चतुःशालाओं के मध्य में तीन श्रेष्ठ सिंहासनों की रचना करती हैं।
- 169+170. वहां जिन सहित जिनमाताओं को दक्षिण दिशा की चतुःशाला में स्थित सिंहासन पर बैठाकर सतपाक और सहस्रपाक तेल से उनकी मालिश करती हैं। फिर हल्के-हल्के से सुगन्धयुक्त जल से शरीर को साफ कर उन माताओं को पूर्वी दिशा की चतुःशाला में ले जाती हैं।
- 171+172. वहां उन्हें सिंहासन पर बैठाकर पद्मोत्पल के पत्रों से ढंके हुए सुगन्धित दूध से भरे मणि-स्वर्ण-रत्न युक्त कलशों से दसों जिन माताओं को विधिपूर्वक स्नान कराकर उन्हें आभूषण आदि से अलंकृत करती हैं। फिर नवजात शिशु जिनवरों को लघु दिव्य आभूषणों से सुसज्जित करती हैं।
- 173+174. अब ये दिशाकुमारियां उन माताओं को उत्तरी भवन में ले जाकर सिंहासन पर बैठाती हैं और नंदन वन से लायी गयी हरिचंदन की लकड़ी से समिधा बनाकर निरन्तर हवन करती हैं। फिर भूतिकर्म (शरीर रक्षा के लिए किया जानेवाला भस्म लेपन, सूत्र बंधनादि) करके जिनों की अनिष्टों से रक्षा करती हैं।
175. अब ये दिशाकुमारियां तीर्थकरों के कानों के पास दो मणिमय काले पत्थरों को टकराकर कहती—“हे जिनदेव! आपकी उग्र महीधर पर्वत के समान विशाल हो।”

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

176. रययामएहि हत्थं (?च्छ) अच्छरसा तंदुलेहिं विमलेहिं ।  
तित्थयराणं पुरओ करेति अट्टउट्टमंगलयं ॥
177. जल-थलयपंचवन्नियसव्वोउयसुरहिकुसुमकयपूरं ।  
काउं कोउगभवणे चउदिदसी घोसणं कासी ॥
178. तित्थयरमाइ- पिउणो तित्थयराण य मणेण जो पावं ।  
चित्तेज्ज तस्स हु सिरं फुट्टिहि निस्संसयं सयहा ॥
179. एवं उग्घोसेउं ताहे घेतुं जिणे समाहीए ।  
ठावेति जम्मभवणे सयणिज्जे हरिसियमणाओ ॥
180. परिवारेउं सव्वा तो ते सिंगार- हावकलियाओ ।  
गायति सवणसुहयं सत्तस्सरसीभरं गेयं ॥
181. तत्तो जिणजणणीओ महुरं गेयं दिसाकुमारीओ ।  
सुणमाणाओ सहसा निददाए वसं गया ताओ ॥
182. ताहे भवणाहिवई वीसं, सोलस य वणयराहिवई ।  
चंदाइच्चा सगहा सरिक्ख- तारागणसमग्गा ॥
183. कप्पाहिवती वि तओ ओहिन्नणेण जाणिरुण जिणे ।  
जा (? ता)हे जाया समहियमियं कसोमाऽऽणणच्छाया ॥
184. तो हरिसगगरगिरा सरहसमभुट्टिया सपरिवारा ।  
महियलनिमियवरंगा संथुणित्तं आयरतरेण ॥
185. सव्विड्डीए सपरिसा पहरंसिकक्कसभूया (?) सपत्तीया ।  
जिणचंदे दट्टुमणा वणे (णा) वणे (णा) आगया तुरियं ॥
186. हरिसियमणा सुरिदा जिणचंदे उग्गए तहिं दट्टुं ।  
जाया समहियसोहा ससि' व दट्टूण कुमुयवणे (णा) ॥
187. जणणिसहिए जिणिदे नमिरुण पयाहिणं च काऊणं ।  
करयलकयंजलिपुडा विणयनया पज्जुवासंति ॥

1. ससि व्व सर्वासु प्रतिषु ॥

## हिन्दी अनुवाद

176. ये देवियां चमकीले शुद्ध चावलों से भरे हुआ चांदी का बर्तन हाथ में लेकर स्वस्तिक आदि अष्ट मांगलिक को तीर्थकरों के सामने स्थापित करती हैं ।
177. ये देवियां जल- थल की सभी ऋतुओं में सुरभित होनेवाले पांच प्रकार के फूलों से उन जिनों की पूजा करती हैं तथा भवन में कौतुक करने के बाद चारों दिशाओं में घोषणा करती हैं ।
178. तीर्थकर के माता-पिता और तीर्थकरों के विषय में जो कोई भी मन से भी पापपूर्ण बातें सोचेगा, उसका सिर निस्संदेह स्वतः फट जाएगा ।
179. इस प्रकार उद्घोषणा कर वे हर्षितमना देवियां जिन माताओं को जन्मभवन में सुव्यवस्थित रूप से लाकर उन्हें शय्याओं पर लिटा देती हैं ।
180. वहां वे शृंगार, हाव-भाव, पुष्प आदि की प्रतीक सभी दिशाकुमारियां एकत्रित होकर सप्त स्वरों में कर्णप्रिय और सम्मोहक गीत गाती हैं ।
181. तब इन सब दिशाकुमारियों के मधुर गीतों को सुनते हुए दसों क्षेत्रों की माताएं अचानक निद्रामग्न हो गयीं ।
- 182+185. तब बीस भवनपति, सोलह वनचराधिपति, ग्रहों-नक्षत्रों और समस्त तारागणों के साथ चन्द्र और सूर्य तथा कल्पाधिपति देव भी, चन्द्रमा से भी अधिक सौम्य तथा कांतियुक्त जिनों को उत्पन्न हुआ जानकर प्रसन्न मन से सपरिवार शरभ सदृश समभिउत्थित होकर, अपने सिरों को पृथ्वीतल पर झुकाकर गंभीर शब्द में आचारपूर्वक उन जिनों की स्तुति की और हर्षित मन से परिषद, परिवार के साथ जिनचन्द्र के दर्शनार्थ यान-विमानों से शीघ्र ही जन्म भवनों को पहुंचे ।
186. प्रसन्नमना देवताओं ने जब सद्यःप्रसूत या नवोदित जिनचन्द्रों को देखा तो उनकी शोभा कांति उसी पर अत्यधिक बढ़ गई जैसे चन्द्रमा के उदित होते ही कुमुदवन शोभायमान हो जाता है ।
187. उन देवताओं ने माताओं समेत जिनेन्द्रों को प्रणाम किया तथा प्रदक्षिणा कर अंजलि जोड़कर विनयपूर्वक पर्युपासना करने लगे ।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

188. अह सोहम्मे कप्पे विसयपसत्तस्स सुरवरिदस्स।  
सक्कस्स नवरि दिव्वं सहसा सीहासणं चलियं।।
189. अह ईसाणे कप्पे विसयपसत्तस्स सुरवरिदस्स।  
ईसाणस्स वि दिव्वं सहसा सीहासणं चलियं।।
190. ओहिविसओवउत्ता जाते दट्ठूण जिणवरे तो ते।  
पचलियकुंडलमउला आसणरयणं पमोच्छी य।।
191. अह सत्तअट्ठपयाइं अणुगच्छित्ताण जिणवरे वरदे।  
अंचंति वामजाणुं इयरं भूमीए नीहट्ठुं।।
192. पणमंति सिरिण जिणे पुणो पुणो पागसासणा पयया।  
उट्ठेरुण भणंती वयणमिणं नेगमेसिसुरे।।
193. "पंचसु एरवएसुं पंचसु भरहेसु दस जिणा जाया।  
काहामो अभिसेयं करेह विदियं सुरगणाणं"।।
194. सक्कीसाणाणत्ती तो ते घेत्तुं सुरे विसयसत्ते।  
वयणं भणंति भणिया सुघोसघंटाए बोहेउं।।
195. "भो भो ! सुणंतु सव्वे सुरवसभा ! सुरवतीण वयणमिणं।  
एगसमएण जाया दस वि जिणा दससु खेत्तेसु।।
196. तो तेंसिं जम्ममहो जम्म-जरा-मरणविप्पमुक्काणं।  
वच्चामो मणुयलोयं जिणाभिसेगस्स कज्जेणं।।
197. तं तुभे वि सपरियणा आयरतरएण गहियनेवत्था।  
अण्णेह देवराए सविमाणगया सह वि (पि) याहिं"।।
198. तो ते सुरवरवसभा वयणं सोरुण नेगमेसीणं।  
जाणविमाणारूढा सक्कविमाणे समोसरिया।।

## हिन्दी अनुवाद

188. इसके बाद सौधर्म कल्प में विषयोपभोग में रत सुरवरेन्द्र शक्र का दिव्य सिंहासन अचानक कपित हुआ।
189. इसी तरह ईसान कल्प वासी देवराज विषयभोगी ईषानेन्द्र का दिव्य सिंहासन भी सहसा कपित हुआ।
190. विशेष अवधिज्ञान से इन जिनवरों को उत्पन्न हुआ जान, चमचमाते और कपित कुंडलों और मुकुट से युक्त ये शक्रेन्द्र और ईसानेन्द्र अपने-अपने सिंहासनों को छोड़ उठ खड़े हुए।
191. वे शक्रेन्द्र और ईसानेन्द्र जिनवरों के विद्यमान होने की दिशा में सात-आठ पग चलकर बाएं घुटने को टिकाकर और दाएं घुटने को जमीन पर टिकाकर।
192. बार-बार जमीन तक सिर झुकाकर जिनों को यत्नपूर्वक प्रणाम करने लगे। इसके बाद उठकर प्रामाणिक वचनों द्वारा नेगमेसिं देव से कहते हैं-
193. "पांचों ऐरावत क्षेत्रों और पांचों भरत क्षेत्रों में कुल दस जिनदेव उत्पन्न हुए हैं। तुम मेरे कथनानुसार इस बात की सूचना सभी देवताओं को दो। हम उन जिनदेवों का जन्माभिषेक करेंगे।"
194. शक्रेन्द्र और ईषानेन्द्र के आदेश को सुनकर विषयासक्त देवताओं को बोध कराने के लिए ये हरि-नेगमेसिं देव श्रेष्ठ घोषवाले घंटा को बजाते हुए इस प्रकार से घोषणा करते हैं-
195. हे सभी देव सभासदों ! इन्द्र का आदेश आपलोग सुनो- एक ही समय में दसों क्षेत्रों में दस जिनदेव उत्पन्न हुए हैं।
196. जन्म-जरा-मृत्यु से पूरी तरह से मुक्त होने वाले उन जिनदेवों के जिनाभिषेक आदि कार्य करने के लिए हम लोग मनुष्य लोक में जा रहे हैं।
197. इसलिए आप लोग भी परिजनों के साथ परंपरागत आचारयुक्त वेष धारण कर अन्य देवताओं के साथ जिनाभिषेक कार्य के लिए अपने-अपने विमानों में आरूढ होकर इन्द्रों के साथ मनुष्य लोक में चलिए।
198. तब वे देवता शक्रेन्द्र का वचन नेगमेसिं देव से सुनकर यान-विमानों पर चढ़कर शक्र के विमान के पास एकत्रित हुए।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

199. अह वासवा वि सव्वे उत्तरवेउव्विए करिय रूवे ।  
एरावयधवलविसं कयजयसद्दा समारूढा ॥
200. रेहंति दो वि सक्का उत्तरवेउव्विएहिं रूवेहिं<sup>1</sup> ।  
पण्णासं पण्णासं, दससु वि खेत्तेसु एंति दुयं ॥
201. पहयपडुलडहपडहा सलोगपालऽग्गमहिसिपरिवारा ।  
संपत्थिया य सुरवइ जिणाण पामूलमभिवंदा ॥
202. संपत्ता य खणेणं सुर-ऽच्छरासंघपरिवुडा तहियं ।  
जाया जत्थ जिणिंदा वोच्छिण्णपुण्णभवा गुरुणो ॥
203. पेच्छंति सव्वसक्का जिणविभवा सागरंतरे दीवे ।  
इक्खागवंसजाए सयलजगाणंदणे हत्थं ॥
204. अह जिणदंसणवियसियमुहकमला बंदिऊण जिणचंदे ।  
देवगणसंपरिवुडा इंदा जिणजम्मभवणाणं ॥
205. अह पासे ठाऊणं भणांति सेणावइं पयत्तेणं ।  
“जणणीण सगासाओ आणेह जिणे उ विणएणं” ॥
206. तो त हरिसियमणसा! होऊण अहोमुहा जिणवरिंदे ।  
घेत्तुं विणीयविणया उवणेंति सहस्सनयणाणं ॥
207. अह ते देवाण पई नयणसहस्सेहिं जिणवरे तइया ।  
न वि तिप्पंति नियंता तिहुयणसोहऽब्भहियसोभे ॥
208. तो पणमिउं जिणिंदे इंदा परमेण भत्तिराएण ।  
पगया घेत्तूण जिणे पंचऽप्पाणे विउव्वेंति ॥

1. रूवेहिं इति ला० विना नास्ति ॥

## हिन्दी अनुवाद

199. अब इन्द्र भी उत्तर वैक्रिय लब्धि से संपन्न होकर विभिन्न रूप बनाकर कर श्वेत ऐरावत और श्वेत वृषभ पर सवार हो जाते हैं।
200. दोनों ही इन्द्र उत्तर वैक्रिय लब्धि से संपन्न शक्ति से अपने पचास-पचास रूप बनाकर प्रत्येक में गये।
201. अब ये दोनों ही इन्द्र पटु लोकपालों तथा अग्रमहिषियों के साथ जिनों के पादमूल में अभिवंदना करने की उत्कंठा के साथ विभिन्न प्रकार के वाद्यों के सुमधुर घोषों के बीच वहां से प्रस्थान करते हैं।
202. क्षण भर में ही समस्त देव संघ और अप्सराओं के साथ ये दोनों देवता उन स्थानों को पहुंच गये जहां अपने पुनर्भवों को नष्ट करनेवाले श्रेष्ठ जिनदेव उत्पन्न हुए थे।
203. सभी शक्रेन्द्र अपने देव-देवी संघों और अप्सराओं के साथ वहाँ पहुंच कर हर्षातिरेक से विभोर होकर सभी लोकों को आनंदित करने वाले इक्ष्वाकू कुल में उत्पन्न उन जिनेन्द्रों को इस प्रकार देखत है। मानों अनन्त भवसागर के बीच कोई अंतरीपों को देखता हो।
- 204+205. अब जिनदेवों के दर्शन से विकसित कमल के समान हर्षित मुखमंडल वाले और अपने देव परिवारों संवृत उन इन्द्रों ने जिनों के जन्मगृह के पास खड़े होकर सेनापति को आदेश दिया—“जिनदेवों को आदरसहित यत्नपूर्वक उनकी माताओं के पास से ले आओ”।
206. तब वे सेनापति इन्द्रों के आदेश को सिर झुकाकर स्वीकार करते हुए प्रसन्नतापूर्वक जिनवरों को अति विनयपूर्वक इन्द्र के पास ले आते हैं।
207. त्रैलोक्य की समस्त शोभाओं से भी अत्यधिक शोभित उन जिनवरों को देखकर देवताओं के स्वामी इन्द्र अपने हजार नेत्रों से देखकर भी आपको तृप्त अनुभव नहीं कर पाते हैं।
208. तब अत्यन्त भक्तिपूर्वक जिनेन्द्रों को प्रणाम कर तथा जिनदेव का पदरज लेकर इन्द्र ने अपना पांच वैक्रिय शरीर बनाया और जिनों को लेकर वहां से प्रस्थित हो गये।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

209. गहियजिणिंदो एक्को दो दो पासेसु चामरे हत्थे।  
धवलायवत्तहत्थे एक्के, एक्केउत्थ वज्जधरे।।
210. चउविहदेवसमग्गा ते सक्का तिब्बजायपरितोसा।  
उप्पइऊणागासं सुमेरुसंपट्ठिया तुरियं।।
211. तो बालजिणवरिदे उवगायंता सुरा सपरिवारा।  
वच्चंति मुइयमणसा पुरओ सव्वाहिगारेणं।।
212. पंचण्ह वि मेरुणं गिरिवरसिहरे खणेण संपत्ता।  
कंचणदुमोववेए सव्वोउयपुप्फ-फलभरिए।।
213. पंचण्ह वि मेरुणं एक्केक्के होइ पंडगवणं तु।  
नज्जइ तेलोक्कस्स वि लच्छी संपिंडिया तेसु।।
214. ताण बहुमज्झदेसे चूला जिणभवणसोहिया रम्मा।  
वेरुलियाविमलरूवा पंचउट्टग जोयणुव्विद्धा।।
215. पंचण्ह वि चूला एक्केक्किया मुणेयव्वा।  
सासयजिणभवणाओ हवंति पंचेव चुलाओ।।
216. बारसजोयणापिहुलाओ ताओ उवणं (?रिं) तु जोयणे चउरो।  
तासिं चउदिदसिं पि य सिलाओ चत्तारि रम्माओ।।
217. पंचसयाऽऽयामाओ-मज्झे दीघत्तणऽऽघरुंदाओ।  
चंदद्धसंठियाओ कुमुयोयर-हारगोराओ।।
218. पुव्वेण पंडुकंबल अवरेणअ (ऽ)इपंडुकंबला होइ।  
रत्ताऽऽइरत्तकंबलसिला य दो दक्खिणुत्तरओ।।

## हिन्दी अनुवाद

209. इन्द्रों ने एक शरीर से जिनदेव को लिया, दो शरीर से जिनदेव के दोनों ओर होकर हाथ में चंवर लिया। दोनों ओर के चारों इन्द्र अपने चार हाथों में श्वेत रंग के चंवर और चार में वज्र धारण किया।
210. चारों प्रकार के देवों (वैमानिक, ज्योतिष्क, भवनपति और वाणव्यन्तर) के साथ वे शक्र उत्कट प्रसन्नता का अनुभव करते हुए आकाश में उड़कर तीव्र गति से सुमेरु पर्वत के लिए प्रस्थान कर गए।
211. उन बाल जिनवरों के आगे प्रसन्न मन से समस्त वैभवों से पूर्ण देवगणों का समूह उन जिनवरों की महिमा का गान करते हुए चला।
212. क्षण भर में वे देवगण जिनवरों को लिये हुए सर्वऋतुओं में सभी प्रकार के फूलों-फलों के कंचन वृक्षों से भरे श्रेष्ठ पांचों मेरुपर्वत के शिखरों पर पहुंच गए।
213. पांचों मेरु पर्वतों में से प्रत्येक शिखरों पर एक-एक ऐसा पंडक वन होता है। वहां पर विद्यमान संपन्नता और शोभा से तो तीनों लोकों की एकत्रित श्री संपत्ति भी लज्जित होती है।
214. उस पंडक वन के अंदर के हिस्से में अवस्थित जिनभवन में विमल रूप वाले, वैडूर्यमणि से शोभित रमणीय पांच योजन चौड़ी और आठ योजन लंबी चूलाएं हैं।
215. पांचों मेरु के पांचों शिखरों पर एक-एक चूला जानना चाहिए। ये चूलाएं शाश्वत जिनभवन के रूप की होती हैं।
216. हर चूला बारह योजन मोटी और चार योजन ऊंची होती हैं। उन पांचों चूलाओं की चारों दिशाओं में चार रमणीक शिलाएं अवस्थित होती हैं।
217. वे शिलाएं पांच सौ योजन विस्तार वाली हैं। इनके बीच का भाग बहुत मोटा और फिर उत्तरोत्तर कम होते हुए अंतिम छोर पर तृण के अर्द्ध भाग जितना रह जाता है। इसका आकार चन्द्र की तरह और वर्ण कुमुद पुष्प के हार की तरह गौड़ वर्ण होता है।
218. इन चूलाओं के पूर्व में पाण्डुकम्बल शिला और पश्चिम में अति पाण्डुकम्बल शिला होती हैं। इसके दक्षिण भाग में रक्तकंबल शिला और दक्षिण में अतिरक्तकंबल शिला होती हैं।

219. पुष्पावरासु दो दो सिलासु सीहासणाइं रम्माइं।  
चंददध दक्खिणुत्तरसिलासु एक्केक्कयं भणियं ॥
220. सीता-सीतोयाणं उभओकूलुभवा जिणवरिदा।  
अभिसिंचं (सिच्चं)ति सुरेहिं जम्मे पुष्पावरसिलासु ॥
221. भरहेरवयजिणिंदा बालत्ते पुण्णचंदसरिसमुहा।  
अभिसिंचं (सिच्चं)ति सुरेहिं जम्मेजम्मुत्तरसिलासु ॥
222. अह सो सोहम्मवती सहिओ बत्तीससुरवरिदेहिं।  
दक्खिणसिलाओ पंच वि सहस्सपत्ताणणो पत्तो ॥
223. अह सो ईसाणवती सहिओ बत्तीससुरवरिदेहिं।  
उत्तरसिलाओ पंच वि सहस्सपत्ताणणो पत्तो ॥
224. तो तत्थ पवरकंचणमयमि सीहासणे निवेसित्ता।  
इंदा जिणिंदचंदे उच्छंगेहिं धरेसी य ॥
225. छज्जंति सुरवरिदा उच्छंगगए जिणे धरेमाणा।  
अभिणव<sup>1</sup> जाए कंचणदुमे व्व<sup>2</sup> पवर (?रे) धरेमाणा ॥
226. अह अच्चुयकप्पवती चुयकलिकलुसाण जिणवरिदाणं।  
अभिसेयं काउमणो अभिओगे सुरवरे भणइ ॥
227. "तित्थसरिया-महादह-चउउदहिजलं च दिव्वकुसुमं च।  
आणेह इहं सिग्घं जं चण्णं इट्ठमभिसेए" ॥
228. सम्मं पडिच्छिऊणं सुरवरवसभाण तं सुरा वयणं।  
आणेंति विमलसलिलं सव्वेसु जहुत्तठाणेसु ॥
229. सव्वोसहि-सिद्धत्थग-हरियालिय-कुसुमगंधचुण्णे य।  
आणेंति ते पवित्तं दह-नइ-तडमहि<sup>3</sup> (टिट्)यं च सुरा ॥
230. तो अच्चुयकप्पवई सुवन्न-मण-रण-भोमकलसेहिं।  
पउमुप्पलप्पिहाणेहिं कुसुमगंधुदगभरिएहिं ॥

1. 0वकाए हं0 की0 ॥ 2. व्व हिमपवरध0 सं0 विना ॥ 3. 0मयं च ला0 ॥

219. इन चूलाओं की पूर्व और पश्चिम दिशा में दो-दो रमनीय शिलाएं होती हैं। इसी तरह दक्षिण और उत्तर के अर्द्धचंद्राकार भाग में एक शिलाएं कही गयी हैं।
220. सीता और सीतोदा नदियों के तट पर उत्पन्न जिनवरों को देवताओं द्वारा पूर्व और पश्चिम की शिलाओं पर जन्माभिषेक किया जाता है।
221. उधर, भरत और ऐरावत क्षेत्रों में उत्पन्न बाल्यकाल के पूर्णचन्द्र सदृश्य मुखवाले शिशु जिनदेवों के जन्म होने पर देवतागण उत्तरी शिला पर उनका जन्माभिषेक मनाते हैं।
222. अब सौधर्मपति इन्द्र के साथ बत्तीस-बत्तीस इन्द्रों द्वारा दक्षिण शिला पर पांच हजार पत्र कमल लाया जाता है।
223. अब ईषानेन्द्र सहित बत्तीस इन्द्रों द्वारा पांच हजार पत्रकमल उत्तर शिला पर लाया जाता है।
224. तब वहां श्रेष्ठ कंचनयुक्त सिंहासन पर बैठकर इन्द्र जिनदेव को गोद में ले लेते हैं।
225. गोद में शिशु जिनों को धारण किए हुए इन्द्र नवजात कंचनवृक्षों को धारण किए हुए हिमालय के समान शोभायमान होते हैं।
226. अब अच्यूत कल्पवासी इन्द्र कलियुग के पापों से मुक्त जिनवरों का गौरवपूर्वक अभिषेक करते हुए देवताओं को आदेश देते हैं-
227. "तीर्थकरों की पूजा तथा अभिषेक करने के लिए तीर्थ सरिता, महाद्रह तथा चारों समुद्रों का जल एवं दिव्य कुसुम आप लोग जल्दी से लेकर यहां आएं।"
228. देवताओं में श्रेष्ठ इन्द्र के इस उचित वचन को शिरोधार्य कर वे देवगण कहे हुए सभी स्थानों से विमल जल ले आए।
229. वे महेन्द्र स्वर्ग में रहनेवाले देवगण द्रहों और महानदियों के तटों से सर्वोषधि से सिद्ध पवित्र एवं शुद्ध फूल और चूर्ण ले आते हैं।
230. अभिषेक की सभी सामग्री उपलब्ध हो जाने के बाद तब अच्यूत कल्पवासी इन्द्र पुष्पों की सवासित जल से पूर्ण और पद्मोत्पल से आच्छादित स्वर्ण-मणि-रत्न जटित मिट्टी के कलशों से।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

231. अभिसिंचइ दस वि जिणे सपरि(री)वारो पहट्टमुहकमलो ।  
पहयपडुपडह-दुंदुहि-जयसद्दुग्घोसणरवेणं ।।
232. गोसीसचंदणरसं सुमणं साहावियं च दिव्वं च ।  
सलिलं च तेयजणणं जिणाण उवरिं छहंति सुरा ।।
233. सुरगहियकलसमुहनिग्गाएण गंधोदएण विमलेण ।  
पउममहद्दहनिग्गयगंगासलिलोहसरिसेणं ।।
234. उवरिं निवडंतेणं बालजिणे तेयरासिसंपण्णे ।  
अहियं दिप्पंति तहिं घयपरिसित्ते हुयवहे व्व ।।
235. तो जिणवराभिसेए वट्टंते विविहरूव-वेसधरा ।  
ससुरासुर-गंधव्वा ससिद्ध-विज्जाहरा मुइया ।।
236. तत-विततं घण-ञ्जुसिरं वज्जं वाइंति केइ सुरवसभा ।  
गायंति ससिंगारं सत्तस्सरसीभरं गेयं ।।
237. चउअभिनयसंजुत्तं उणयालीसंगहारपडिपुण्णं ।  
सुललियपयविच्छोहं नट्टं दाइंति तत्थ सुरा ।।
238. वग्गंति फोडणं (?य)ति य तिवइं छिंदंति विविहवेसधरा ।  
वासंति जलधरा इव सविज्ज<sup>1</sup>-थणियं तहिं अण्णे ।।
239. हयहिसिय-गयगज्जिय-रहघणघण-सीहणाय-जयसद्दे ।  
कुणमाणेहिं सुरेहिं रसहिं रसइ व गयणं दलइ भूमी ।।

1. 0ज्जुयं सथणि0 सं0 हं0 । 0ज्जुयसथणिय त0 ला0 ।

## हिन्दी अनुवाद

231. परिवार सहित हर्षोल्लास से भरे मुद्रा में दिव्य पटहों, नगाड़ों एवं दुंदुभी के मंगल जय शब्दों और जय के गगनभेदी घोषों के बीच दसों जिनों का जन्माभिषेक करते हैं ।
232. देवगण गोशीर्ष चन्दन का रस, स्वामाविक रूप से प्राप्त दिव्य पुष्प तथा कांतियुक्त जल की वर्षा जिनों के ऊपर करते हैं ।
- 233+234. जैसे महापद्म सरोवर से गंगा का जल नीचे की ओर निर्गत होता है, उसी तरह देवताओं द्वारा ग्रहित कलशों के मुख से सुगंधयुक्त विमल जल के तेजराशि से संपन्न बाल जिनों के ऊपर गिरने से वे बाल जिन तेजपुंज से संपन्न होकर घृतासिक्त अग्नि की तरह अधिकाधिक रूप से दीप्त होने लगे ।
235. जिनवरों के इस अभिषेक उत्सव में विविध वेषधारी देवता, असुर, गंधर्व, सिद्ध तथा विद्याधर प्रफुल्ल मन से विविध वेष धारण कर नृत्य करते हैं ।
236. अनेक श्रेष्ठ देवगण आकाश को गुंजरित कर देनेवाली ताल-लय से युक्त घोर घटाओं के गर्जन के समान गंभीर आवाज वाले वाद्य बजाते हैं तथा कई अन्य देवगण शृंगार रस से ओत-प्रोत अति मधुर गीत सप्तस्वरों में गाते हैं ।
237. जिनों के जन्म महोत्सव के अवसर पर कई देवगण चारों प्रकार के अभिनय से युक्त अंगों के उनतालीस प्रकार के हाव-भाव से परिपूर्ण तथा सुललित पद-विक्षेप से युक्त नाटक का मंचन करते हैं ।
238. विविध वेशधारी कुछ देवता वहां मदनमत्त होकर हाथियों की तरह चिंघारते हैं, कुछ ताल ठोकते हैं, कुछ त्रिपदी का विच्छेद करते हैं । कई देवता बादलों की गड़गड़ाहट एवं बिजली की कड़क के साथ जलधाराओं की वर्षा करते हैं ।
239. घोड़े की हिनहिनाहट, हाथियों की चिंघाड़, रथ की घरघराहट और सिंहनाद के समान देवताओं के जयकार तथा गर्वित आवाज से मानो धरती और आकाश फटने लगा ।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

240. नच्चंति अच्छराओ अभिनयअंगोवहारपडिपुण्णं ।  
चउरंगहारमणहरसहावभावं ससिंगारं ॥
241. तो पहयभेरि-ञल्लरि-दुंदुहिगंभीरमहुरनिग्घोसो ।  
अंबरतले वियंभइ हरिसुक्करिसं-जणेमाणो ॥
242. ससुरासुरनिग्घोसो कहकह<sup>1</sup>-उक्कडि(टिठ) कलयलसणाहो ।  
सुव्वइ दससु दिसासुं पक्खुहियमहोदहिसरिच्छो ॥
243. तो दुग्ग (?व्वा)-सिद्धत्थग-सव्वोसहि-कुसुम-न्हाणवासेहिं ।  
अच्चुयइंदो दससु वि जिणाभिसेयं करेसि<sup>2</sup> ण्हं ॥
244. अवसेसा वि सुरवती तेणेव कमेण पाणयाईया ।  
सव्विड्डीए सपरिसा जिणाभिसेयं करेसि ण्हं ॥
245. जाहे सव्वेहिं कया अभिसेया देव-दाणवेहिं वा ।  
सक्कीसाणा दोन्नि वि धवलवसहसिंगधाराहिं ॥
246. चउउदहिसलिल-सरियाजलं च वसभेसु पक्खिवंति सुरा ।  
असुर-सुरञ्छरसाहिया जिणाभिसेयं करेऊण ॥
247. पम्हलसुयंधसुमउयवत्थेण जिणाण अंगुवंगगयं ।  
अवणेऊण जलरयं सहस्सनयणा पयत्तेणं ॥
248. हरिचंदणाणुलित्ते दिव्वाभरणलहुमूसणे काउं ।  
सक्का कुण्णति तेसिं सीसे पज्जोवहारादी ॥
249. कोउगसयाइं विहिणा काऊणं जिणवराण मुहकमला (ले) ।  
न वि तिप्पंति नियंता अच्चिसहस्सेहिं सक्किंदा ॥

1. 0हकुडिकल0 सं0 ला0 । 0 हउक्कडिकस0 हं0 ॥

2. करेसिं ण्ह हं0 की0 । करेसि ण्ह ला0 ॥

## हिन्दी अनुवाद

240. अंगों के हाव-भाव तथा अभिनय से पूर्ण मनोहर तथा स्वाभाविक अंगहार (शरीर विक्रम) के साथ अप्सराएं चार प्रकार के नृत्य करती हैं।
241. वहां पीटे जाते भेरों, नगाड़े, झाल तथा दुंदुभी के गंभीर मधुर घोष हर व्यक्ति के मन में उत्कृष्ट हर्ष का संचार करता है। साथ ही यह घोष गगनमंडल तक प्रतिध्वनित होता रहता है और व्याप्त होता रहता है।
242. देवों और दानवों के जयघोषों, कलकल निनादों से युक्त वातावरण को मुखरित कर देनेवाले कहकहों से समवेत रूप से उत्पन्न वह निर्घोष दसों दिशाओं में क्षुब्ध महासागर के सदृश विस्तृत होने लगा।
243. इसके पश्चात् अच्युत कल्प के इन्द्र ने दसों क्षेत्रों में उत्पन्न हुए जिनों का दूब, सरसों, सर्वोषधि, कुसुम तथा स्नान करने के लिए सुगन्धित पानी एवं वस्त्रों से अभिषेक किया।
244. अच्युत इन्द्र द्वारा जन्माभिषेक करने के बाद, उसी विधि से शेष के सभी इन्द्रों ने भी उसी क्रम से अपनी देव परिषदों के साथ जिनों का अभिषेक किया।
245. सभी देव-दानवों द्वारा अभिषेक कर दिए जाने पर शक्रेन्द्र और ईसानेन्द्र-दोनों देवों ने श्वेत बैल के सिंगों से निकली जलधाराओं से जिनदेवों का अभिषेक किया।
246. सभी देव-दानवों द्वारा जिनों का अभिषेक कर दिए जाने के बाद चारों समुद्रों और महानदियों से लाए गए जल को वृषभों पर उड़ेलते हैं।
- 247+248. दानव-देव अप्सरा सहित जिनों का अभिषेक करके स्वयं इन्द्र यत्नपूर्वक जिनों के शरीर पर लगे जल और विभिन्न औषधियों के रज को अच्छी तरह से साफ कर पद्म केसर और किंजल्क की खुशबू से सुगन्धित वस्त्र पहनाते हैं, जबकि शक्रेन्द्र हरिचंदन से अभिषिक्त छोटे-छोटे दिव्य वस्त्र-आभूषण से जिनों को नख-शिख अलंकृत करते हैं।
249. सैकड़ों प्रकार के कौतूक करने के पश्चात् हजार-हजार आंखों से जिनवरों के मुखकमल को देखकर भी शक्रेन्द्र तृप्त नहीं हो पाते हैं।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

250. तो देव-दाणविंदा सअच्छरा सपरिसा पहिट्ठमणा।  
अभिसंथुणांति पयया थुइसयपरिसंथुए वीरे।।
251. "तुम्ह नमो पायाणं चक्कंकुसलक्खणं कियतलाणं।  
कुम्मसुपइट्ठियाणं उण्णयतणुतंबणक्खणं।।
252. कम्मरयं अट्ठविहं नासेंति फुडं नयाण जीवाणं।  
तेण सरणं पवन्ना जिणाण पाए सिवुप्पाए।।
253. धण्णा जिणजणणीओ सिवगइपहदेसगा जिणा जाहिं।  
उदरेणं जिणवसमा धम्मधुराधारगा धरिया"।।
254. एवं सब्भूएहिं गुणेहिं अभिवंदिउं जिणवरिंदे।  
'जयइ जिणसासणं' ति य पहरिसियमणेहिं उग्घुट्ठं।।
255. मोत्तूण य ते पवरे कंचणसीहासणे सुरवरिंदा।  
घेत्तूण जिणे सहिया सुरेहिं संपत्थिया तुरियं।।
256. संपत्ता य खणेणं जिणजम्मवणे पुरंदरा मुइया।  
नमिऊण जिणे अप्पति विम्हिया नेगमेसीणं।।
257. तेहि वि कंचणगोरा मयलंछणसोमदंसणा सुमणा।  
निकिखत्ता परमगुरु पासे जणणीण नियगाणं।।
258. तो मरुदेवाईणं निददं अवहरिय वासवा मुइया।  
सह देवीहिं थुणंती जिणाण जणणीण (ओ) पियरो य।।
259. भत्ति-बहुमाण-विणएण एवमभिवंदिए सु (स) देवीहिं।  
जलधरगंभीरेणं सरेण अह वासवो भणइ।।

## हिन्दी अनुवाद

- 250+251. तब देवेन्द्र तथा दानवेन्द्र अपनी अप्सराओं तथा परिषदों के साथ प्रसन्न मन से जिनों के पद की वंदना करते हैं। और वीर देव को शत-शत स्तुति से सत्कार करते हुए कहते हैं- हे जिनदेव आपके कुश और चक्र के चिहनों से युक्त कछुए की तरह सुव्यवस्थित तथा ताम्रवर्ण के पतले और उन्नत नखवाले पैरों को मेरा नमस्कार है।
252. जो पदकमल जीवों के आठ प्रकार के कर्मरजों का नाश करते हैं, ऐसे शिवसुख प्रदान करनेवाले जिनों के पदकमलों की शरण को स्वीकार करता हूँ।
253. जिनों की माताएं धन्य हैं जिन्होंने सिद्धगति के मार्ग का उपदेश देनेवाले तथा धर्मधुरी को धारण करनेवाले श्रेष्ठ तीर्थकरों को अपने गर्भ में धारण किया।
254. इस प्रकार विद्यमान सत्यगुणों से जिनवरों की वंदना करके हर्षित मन से देवताओं और असुरों का समूह जयघोष करते हैं- "जिन शासन की जय हो"।
255. तब सुरेन्द्र उस श्रेष्ठ कंचनयुक्त सिंहासन से उठकर जिनों को अपनी हथेलियों पर अच्छी तरह से लेकर देवताओं सहित शीघ्रतापूर्वक वहां से प्रस्थान कर गये।
256. आनंदित इन्द्र क्षण भर में जिनों के जन्म स्थान पर पहुंच गये। वहां उन्होंने जिनों को प्रणाम कर उन्हें हरिनेगमेसि देवों को सौंप दिया।
257. तब हरिनेगमेसि देवों ने मृगलांछन से युक्त पूर्ण चन्द्रमा की तरह सौम्य और प्रियदर्शी, स्वर्ण वर्णवाले, प्रसन्नमना परमगुरु (जिनों) को उनकी अपनी-अपनी माताओं के पास पहुंचा दिया।
258. तब प्रसन्नचित्त इन्द्र मरुदेवी आदि देवियों की निद्रा का अपहरण कर लेते हैं और अपनी पत्नियों के साथ जिनों के माता-पिता की स्तुति करते हैं।
259. इस प्रकार अत्यधिक भक्ति, विनय और आदर के साथ पत्नियों सहित सुरा-सुरेन्द्रों द्वारा स्तुति और अभिवंदन किए जाने के बाद मेघ के समान उनकी स्तुति करते हुए मेघ के सामन गंभीर स्वर में कहते हैं।

तित्थोगाली प्रकीर्णक

260. "भो भो पिसाय-भूया! सरक्खसा जक्ख-नाग-गंधव्वा!  
तुम्हे विहणह मारि सोस-ज्जरकारया चेव।।
261. सुट्ठुयं जेसिं पुण कुसु (स्सु)इपुण्णा निरंतरं कण्णा।  
भावेण भण्णमाणं निसुणंतु सुरासुरा सव्वे।।
262. अण्णाण-पमाणं अहवा वि य अणुस्स (स)य प (प्प)ओगेणं।  
मिच्छत्ताभिनिवेशेण वा वि वीसंस (?भ)ओ वा वि।।
263. जइरिच्छाए भएण व वेरेण व पुव्वभवनिबद्धेसु (?ण)।  
जो चित्तेज्ज जिणाणं मणसा वि विहं सुरो पावं।।
264. तस्स उ नियएण अहं दोसेण पलीवियं असरणस्स।  
फुट्ठीहि सिरं सिग्घं सुरस्स सारेण (?) नीसेसं।।
265. अहवा सग्गाओ च्विय पड्डणं नीसंसयं वियाणेज्जा।  
"इंदस्स चिय न केवलमेतं तु सुरस्स इयरस्स"।।
266. एवं ईसाणेण वि उत्तरलोगाधिवेण भणिए<sup>1</sup> य।  
"इंदस्स चिय न केवलमेयं तु सुरस्स इयरस्स"।।
267. एवं ति परिग्गहिए तम्मि हिए भासिए सुरिदेहिं।  
मुक्कं रयणुम्मीसं दसद्धवण्णं कुसुमवासं।।
268. चुण्णं नाणावण्णं वत्थाणि य बहुविहप्पगाराइं।  
मुक्काइं सहरिसेहिं सुरेहिं रयणाणि य बहूणि।।
269. अह देइ वज्जपाणी पराए भत्तीए जिणवरिदाणं।  
खोमे कुंडलजुयले सिरिदामे चेव य सुरुवे।।
270. वत्थालंकारविहिं सव्वं जणणीण जिणवरिदाणं।  
सक्कस्स देवरण्णो अह दंति वरडग्गमहिसीओ।।
271. किच्चेसु बहुविहेसु य जिणाण कायव्वएसु बहुएसु।  
संदिसिऊण सुरिदा दिसाकुमारिण सव्वेसिं।।
272. नमिऊण जिणवरिदे अत्थिप (तिप्प) माणा सुरेहिं ते सहिया।  
नंदीसरवरमहिमं काउं इंदा गया सग्गं।।

1. भणिएण। हं की०।।

हिन्दी अनुवाद

- 260+264. हे पिशाचों, भूतों, यक्षों, नागों, राक्षसों, गंधर्वों! विघ्न, महामारी एवं दाह-ज्वर को पैदा करनेवाले तुम सब सुर-असुर तथा वे सब भी जिनके ध्यान हमेशा दूसरों का बुरा करने में ही रत रहता है, मेरे द्वारा भावपूर्वक कही गयी इस बात अच्छी तरह से कान खोल कर सुन लें। अज्ञान, प्रमाद के वशीभूत मिथ्या अभिनिवेश या अभिमान अथवा पूर्वनिबद्ध वैर, भय से भरे हुए कारणों से, ऐसे कोई भी देव मन से भी जिनों के संबंध में किसी प्रकार के दुर्विचार की इच्छा करेंगे, वह पाप-दोष के कारण वज्र से स्वयं ही जल जाएंगे और उनका सिर फट जाएगा और देवत्व समाप्त हो जाएगा।
265. अथवा स्वयं की स्थिति से यानी स्वर्ग से उनका पतन निस्संदेह हो जाएगा। ऐसा सभी देवों के साथ ही नहीं स्वयं देवेन्द्र के साथ भी हो जाएगा। इसे आप सभी भली प्रकार से समझ लें।
266. इसी प्रकार उत्तरलोक के अधिपति देव ईसानेन्द्र कहते हैं- केवल अन्य देव ही नहीं बल्कि इस तरह का दुर्विचार मन में भी लाने वाले इन्द्र का भी स्वर्ग से पतन निश्चित हो जाएगा।
267. इस प्रकार इन्द्र द्वारा कही गयी बात को देव-दानवों द्वारा एवमस्तु कहकर शिरोधार्य करने के बाद रत्नवर्षा से पांच रंग के पुष्पों की वृष्टि हुई।
268. हर्षोन्मत्त देवताओं द्वारा बहुत सारे रत्न, बहुत सारे वस्त्र और नाना प्रकार के चूर्ण की वर्षा की गयी।
269. अब विशेष भक्ति भाव से भरकर वज्रपाणि इन्द्र ने दसों क्षेत्रों में सद्य उत्पन्न जिनवरों को एक-एक जोड़ा दिव्य कुंडल तथा कभी न कुम्हलाने वाला अतीव सुंदर श्रीदाम भेंट किया।
270. अब शक्र की श्रेष्ठ पटरानियों ने सभी जिनों की माताओं को नख-शिख पहनने वाले विविध प्रकार के दिव्य वस्त्र-अलंकार भेंट किये।
- 271+272. जिनों के काम आनेवाले बहुत प्रकार के कार्यों को करने का आदेश सभी दिशाकुमारियों को देकर, जिनवरों की वंदना करने के बाद उनके सानिध्य और दर्शन से अतृप्त इन्द्र नंदीश्वर द्वीप में जिनवरों की प्रतिष्ठापित कर क्षण भर में ही देवताओं के साथ अपने-अपने स्वर्ग को लौट जाते हैं।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

273. अह पंडरे पहायम्मि दस वि ते कुलगरा निए पुत्ते।  
पेच्छंति सह पियाहिं परिसवसुल्लसियमुहकमला।।

(गा. 274- 81. उसहाइदसजिणाणं वंसट्ठवणा लग्गं च)

274. अह वड्ढंति जिणिंदा दियलोगचुया अणोवमसिरि (सी)या।  
देवी-देवपरिवुडा दो-दोनारीहिं ते सहिया।।
275. असियसिरया सुनयणा बिंबोत्ठा धवलदंतपंतीया।  
वरपउमगम्भगोरा फुल्लुपलगंधनीसासा।।
276. जाईसरा जिणिंदा अप्परिवडिएहिं तिहि उ नाणेहिं।  
कित्तीय<sup>1</sup> य बुद्धीय य अब्भहिया तेहिं मणुएहिं।।
277. देसूणगं च वरिसं इंदागमणं च वंसठवणाए।  
आहारमंगुलीए विहिंति<sup>2</sup> देवा मणुण्णं ति।।
278. सक्को वंसट्ठवणे इक्खु<sup>3</sup> अगू तेण होंति इक्खागा।  
तालफलाहयमगिणी 'होही पत्ति' त्ति सारवणा।।
279. पढमो अकालमच्चू तहिं तालफलेण दारगो पहओ।  
कण्णा उ कुलगरेहिं सिट्ठे गहिया पीतिव्वा (बितिज्जा) उ।।
280. भोगसमत्थं (?त्थे) नाउं वरकम्मे कासि तेसि देविंदा।  
दोण्हं वर-महिलाणं वहुकम्मं कासि देवीओ।।

1. कित्तीय य बुद्धीय य हं० की०।।

2. विहंति हं० की० ला०।।

3. इक्खयगू हं की।।

## हिन्दी अनुवाद

273. यहां प्रातःकाल होने पर दसों कुलकर हर्षोल्लसित मन से अपनी प्रियाओं के साथ पुत्र के श्वेतवर्ण मुखकमल को देखते हैं।

(ऋषभ आदि दस जिनदेवों की वंश स्थापना एवं चिह्न)

274. अब ये सभी अनुपम शोभा से परिपूर्ण जिनेन्द्र दिव्यलोक, देव-देवियों से परिवृत होते हैं। उनके पास दो-दो परिचारिकाएं रहती हैं।
275. ये सभी जिनवर सिर पर काले घुंघराले बाल, सुंदर आंखें, श्वेत दंतपंक्ति की होंठ पर पड़ती छाया, श्रेष्ठ पद्म पुष्प के समान गौरवर्ण का शरीर, कमल के फूल की गंध के समान श्वास-निश्वास वाले हैं।
276. पूर्वजन्म के जातिस्मरण तथा कभी किंचित मात्र भी कम न होनेवाले तीन ज्ञानों से युक्त उन जिनदेवों में कीर्ति और बुद्धि अपने समय के सामान्य मनुष्यों से अधिक विद्यमान होती हैं।
277. जब दसों क्षेत्रों के जिनवर एक वर्ष से कुछ कम आयु के हुए तब वंश स्थापना के लिए शक्र का पुनः आगमन होता है। देवगण उन दसों प्रथम जिनों की अंगुली में मनोज्ञ अभीप्सित आहार रखते हैं।
278. शक्र वंश स्थापना के साथ-साथ में ईश्वर लेकर आते हैं। जिनों द्वारा ईश्वर खाने की इच्छा से आगे हाथ फैलाने से इन्द्र के इनके वंश का नाम इक्ष्वाकू रख दिया। आगे चलकर दसों क्षेत्रों में ताड़ के फल गिरने से मृत्यु को प्राप्त होनेवाले युगल की बहनों का विवाह इन जिनों से होता है।
279. ताड़ का फल गिरने से यौगलिक बच्चे की मौत उस समय की पहली अकालमृत्यु थी। अत्यधिक प्रेम के कारण उनकी जुड़वां बहन को कुलकरों ने सर्वश्रेष्ठ कहकर स्वीकार किया और उनका सब संगोपन पालन-पोषण किया।
280. भोगकर्म में समर्थ होने पर इन्द्र ने उनका विवाह करा दिया। वर की ओर से किये जानेवाले सारे कर्म इन्द्र ने तथा वधू पक्ष की ओर से किये जानेवाले वधुकर्म इन्द्रों की पत्नियों ने किये।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

281. एवं दस वारेज्जा दससु वि वासेसु होंति नायव्वा।  
दस वि जिणाणं एते देवाऽसुरपरिवुडा वत्थुं' (?वुत्ता)।।

### (गा. 282-84, भरह-बंभीआइपण्णास जुयलाण जम्मो)

282. छपु (प्प)व्वसयसहस्सा पुव्विं जायस्स जिणवरिदस्स।  
तो भरह-बंभि-सुंदरि-बाहुबली चेव जायाइं।।
283. देवीसुमंगलाए भरहो बंभी य मिहुणयं जायं।  
देवीए सुनंदाए बाहुबली सुंदरी चेव।।
284. अउणापण्णं जुयले पुत्ताण सुमंगला पुणो पसवे।  
नीतीण अइक्कमणे निवेयणं उसभसामिस्स।।

### (गा.285.91 उसहसामिकयं विणीयानयरीठावणा सिप्पसिक्खा-रज्जविभत्तिआइ)

285. 'राया करेइ दंडं' सिट्ठे ते बेत्ति 'अम्ह वि स होउ'।  
'मग्गह य कुलगरं' सो य बेइ 'उसभो उ मे राया'।।
286. आभाएउं सक्को उवागओ तस्स कुणइ अभिसेयं।  
मउडाइअलंकारं नरिंदजोगं च से कुणइ।।
287. बिसिणीपत्ते इयरे उदयं घेत्तुं छुहंति पाएसु।  
'साहुविणीया पुरिसा' विणीयनयरी अह निविट्ठा।।
288. आसा हत्थी गावो गहियाइं रज्जसंगहनिमित्तं।  
घेत्तूण एवमादी चउव्विहं संगहं कुणइ।।

1. वुच्छं।। सं.।।

## हिन्दी अनुवाद

281. इस प्रकार दसों क्षेत्रों में दस विवाह होते हैं। इसे इस काल का पहला विवाह जानना चाहिए। देवों और दानवों सभी से परिआवृत दसों जिनों के ये वृत्तांत कहे गये हैं।

### (भरत-ब्राह्मी आदि पचास युगलों का जन्म, गाथा 282-84)

282. जिनदेवों के जन्म के छह लाख पूर्व बीत जाने पर भरत, ब्राह्मी, सुंदरी तथा बाहुबली का जन्म हुआ।
283. देवी सुमंगला से भरत-ब्राह्मी युगल का जन्म हुआ तथा देवी सुनंदा से सुंदरी- बाहुबली का।
284. पुनः सुमंगला ने उनचास जोड़े पुत्रों को जन्म दिया। इसके बाद अनेक यौगलिकों द्वारा नीति का अतिक्रमण किये जाने पर लोगों ने जिनवर ऋषभ से जाकर निवेदन किया।

### (ऋषभ स्वामी कृत विनीता नगरी की स्थापना, शिल्प-शिक्षा, राज्य विभाजन आदि, गाथा 285-91)

285. प्रजा से शिष्टतापूर्वक ऋषभदेव कहते हैं-"राजा दंड का विधान करता है।" तब शिष्ट जन कहते हैं "हमें भी ऐसा ही राजा चाहिए।" तब ऋषभ ने कहा कि जाकर कुलकर से मांग करो। जब उन्होंने कुलकर से मांग किया तब कुलकर ने कहा, "ऋषभ तुम्हारा राजा होगा।"
286. उचित समय पर उपस्थित होकर शक्र उनका राज्याभिषेक करते हैं तथा राजा के योग्य मुकुट, अलंकार आदि प्रदान करते हैं।
287. यौगलिक पुरुष नलिनी के पत्तों में पानी लेकर अभिषेक करने आये, पर जिनों को दिव्याभूषणों से अलंकृत देखकर केवल उनके पैरों पर जल छिड़ककर अपनी ओर से अभिषेक की रस्म को पूरा कर दिया। इससे अत्यधिक प्रसन्न और प्रभावित होकर इन्द्र ने कहा बहुत साधु और विनीत पुरुष हैं ये लोग। उनके विनयपूर्ण आचरण को देखकर इन्द्र ने उस नगरी का नाम विनीता नगरी रख दिया।
288. सुयोग्य हाथी, घोड़े, गायों को राज्य के निमित्त चारों ओर से पकड़ कर एकत्र किया गया। इसके बाद चार प्रकार का संग्रह किया गया।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

289. उग्गा भोगा राइन्न खत्तिया संगहो भवे चउहा।  
आरक्ख'-गुरु-वयंसा सेसा जे खत्तिया ते उ।।
290. पंचेव य सिप्पाइं घड 1 लोहे 2 चित्त 3 णंत 4 कासवए 5।  
एक्केक्कस्स य एत्तो वीसं वीसं भवे भेया।।
291. पुत्तसयस्स पुरसयं निवेसियं तेण जणवयसयं च।  
इह भारहम्मि वासे सो पढमपती वसुमईए।।

### (गा.292- 93.उसभाइदसजिणाणं पव्वज्जा केवलनाणं च)

292. दस वि जिणिंदा समयं दाणं दाऊण वच्छरं एगं।  
चेत्तबहुलऽट्ठमीए निक्खंता ते उ छट्ठेणं।।
293. फग्गुणबहुलस्सेक्कारसीय अह अट्ठमेण भत्तेण।  
उप्पण्णम्मि अणंते महव्वया पंच पण्णवए।।

### (गा. 294- 304. भरहाइदसचक्कीणं सेणा-चक्क-निहिआईणं वण्णणं)

294. तस्सासि पढमतणओ चोद्दसरयणाहिवो मणुस्सिंदो।  
भरहो नाम महप्पा अमरनरिदोवमसिरीओ।।
295. उप्पण्णचक्करयणं भरहं वन्नेमि रयणविभवेणं।  
सुरवइविमाणविभवं बत्तीससहस्सनिवनाहं।।
296. छक्खंडभरहसामिं नवनिहिनाहं महायसं चक्किं।  
हय-गय-रहाण लक्खा चउरासीतिं तु गुणपन्ना।।
297. चउसट्ठिसहस्सवरंगणाण मुहपउमछप्पयं पयडं।  
छन्नउई कोडीओ पाइक्काणं पयंडाणं।।

\* आरक्खिगगुरु सर्वासु प्रतिषु  
• 0बहुलेक्का0 सर्वासाहो प्रतिषु।।

## हिन्दी अनुवाद

289. उग्र, भोग, राजन्य और क्षत्रिय - इन चारों का संग्रह किया जाता है। इनमें ऋषभ के समयवयस्क पुरुष आरक्षक कहलाए और बाकी के सभी क्षत्रिय कहलाये।
290. ऋषभदेव ने पांच प्रकार के शिल्प-1. घट शिल्प, 2. लौह शिल्प, 3. चित्र शिल्प, 4. वस्त्र शिल्प एवं 5. कांस्य शिल्प का प्रवर्तन किया। इसमें से प्रत्येक के चार-चार भेद हुए और इस प्रकार शिल्पों की संख्या बीस हुई।
291. ऋषभदेव ने सौ पुत्रों के लिए सौ नगरों एवं सौ जनपदों को बसाया। इस प्रकार भरत क्षेत्र में वे पृथ्वी के प्रथम सम्राट हुए।
- (ऋषभ आदि दस जिनदेवों की प्रव्रज्या तथा केवल ज्ञान, 292-93)
292. दसों जिनदेव एक साल तक दान देकर समय आने पर चैत्र कृष्ण अष्टमी को दो-दो दिन का उपवास (षष्ठम भक्त) व्रत करके निष्क्रमित हुए।
293. फाल्गुन कृष्ण एकादशी को तेलव्रत करते हुए उन्हें केवल ज्ञान प्राप्त हुआ, तब उन्होंने पंच महाव्रत का प्ररूपण किया।

### (भरत आदि दस चक्रवर्तियों की सेना-चक्र-निधि आदि का वर्णन, गाथा 294- 304)

294. उनके ज्येष्ठ पुत्र चौदह रत्नों के स्वामी मनुष्यों में श्रेष्ठ इन्द्र के समान ऐश्वर्यवान् भरत नामके महापुरुष राजा हुए। उनके पास इन्द्र के समान अनुपम श्री थी।
295. बत्तीस हजार राजाओं के स्वामी और इन्द्र के विमान के वैभव के समान भरत के उत्पन्न हुए रत्नों तथा चक्ररत्न के वैभव का वर्णन यहां कर रहा हूं।
296. छह खंड के स्वामी नवनिधि पति महायशस्वी चक्रवर्ती भरत को चौरासी-चौरासी लाख गुणसंपन्न घोड़े, हाथी तथा रथ प्राप्त हुए।
297. वे भरत चौंसठ हजार श्रेष्ठ अंगनाओं के मुखकमलों के भ्रमर रूप और छियानवे करोड़ प्रचंड पैदल सेना के स्वामी हुए।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

298. तरुणरविमंडलनिभं चक्रं 1 छत्तं च सव्वरोगहरं 2।  
रिउदप्पहरं खगं 3 डंडं विसमे' समीकरणं 4 ॥
299. चम्मरयणं अभेज्जं 5 मणिरयणं चेव सीसरोगहरं 6।  
रवि-ससिकिरणपरद्धं कागिणिरयणं च तं पवरं 7 ॥
300. सेणावइं च सूरं 8 सेट्ठिं वेसमणदेवपडितुल्लं 9।  
वड्डइरयण मणोहर 10 पुरोहियं चेव संतिकरं 11 ॥
301. रिउजीवियनिककालं हत्थिं 12 आसं च वाउवेगसमं 13।  
इत्थीरयण महप्पं (?ग्घं) 14 चोददस रयणाइं भरहस्स ॥
302. नवजोयणवित्थिण्णा नव निहओ अट्टजोयणुस्सेहा।  
बारसजोयणदीहा हियइच्छियरयणसंपुण्णा ॥
303. नेसप्प 1 -पंडु 2 -पिगल 3 -रयण 4 -महापउम 5 -कालनामा 6 य।  
तत्तो य महाकाले 7 माणवए 8 संखनामे 9 य ॥
304. एवं भरहसरिच्छा नवसु वि खेत्तेसु चक्कणो होति।  
एत्तो परं तु वोच्छं जो जाओ चुओ विमाणाओ ॥

### (गा. 305-12. उसभाइचउवीसजिणाणं चवणविमाणाइं)

305. चत्तारि एक्कओ, तिन्नि एक्कओ, सत्त एक्कमेक्कओ।  
पंचहिं दो दो य चुते वंदामि जिणे चउवीसं ॥
306. उसमं च जिणवरिदं धम्मं संतिं तहेव कुंथुं च।  
सव्वट्ठविमाणाओ तिन्नेव चुया नमंसामि ॥
307. सेज्जंसं च जिणिदं अणंतइमपच्छिमं च तित्थयरं।  
पुप्फुत्तरविमाणाओ तिन्नेव चुया नमंसामि ॥
308. हेट्ठिमगेवेज्जाओ संभव, २पउमप्पहं उवरिमाओ।  
मज्झिमगेवेज्जचुयं वंदामि जिणं सुपासरिसिं ॥
309. आणयकप्पा सुविही, सीयलजिणमच्चुयाओ कप्पाओ।  
सुक्काओ वासुपुज्जं, सहस्सा (?सा)राओ चुयं विमलं ॥

1. मे वि तं स हं. की. ला. ॥

2. अत आरम्य 508 तमीगाथोत्तरार्द्धगत 'ऊणिया' शब्दपर्यन्तपाठाल्मकानि ला० प्रते: 14  
त. 21 पत्राणि विनष्टानि ॥

## हिन्दी अनुवाद

- 298+301. भरत के ये चौदह रत्नों थे-1. तरुण सूर्य (दोपहर का सूर्य) के समान परम तेजस्वी और भास्वर चक्र, 2. सर्व रोगों का हरण करने वाला छत्र, 3. दुश्मनों के दर्प को चूर करनेवाली तलवार, 4. वक्र स्वभाव वाले लोगों का शमन करनेवाला दंड, 5. अभेद्य चर्म, 6. सब प्रकार के संशयों और रोगों को नष्ट करनेवाली मणि, 7. सूर्य-चन्द्र की किरणों से भी अति तेजमान श्रेष्ठ काकिनी, 8. अति शूर-वीर सेनापति, 9. कुबेर के समान श्रेष्ठी, 10. सुन्दर स्थपति (बढ़ई), 11. शांतिकर्म करनेवाला पुरोहित, 12. दुश्मन के जीवन का हरण करने वाला हस्तिरत्न, 13. पवनगति के समान वेगवाला अश्वरत्न और 14. सर्वांग सुंदरी स्त्री।
302. उनकी नवनिधियां नौ योजन विस्तृत, आठ योजन उंचाई वाली, बारह योजन लंबी तथा सभी इच्छाओं को पूर्ण करनेवाली थीं।
303. ऐ नवनिधियां हैं- 1. नैसर्प, 2. पाण्डु, 3. पिगल, 4. रत्न, 5. महापद्म, 6. काल, 7. महाकाल, 8. मानवक और 9. शंख।
304. इस प्रकार भरत सदृश चक्रवर्ती शेष नौ क्षेत्रों में भी उत्पन्न होते हैं। इसके बाद जो जिनवर जिस विमान से च्यूत हुए, उनके बारे में कहता हूँ।

### (ऋषभ आदि चौबीस जिनों का च्यवन विमान)

305. चार जिन एक विमान से, तीन एक विमान से, सात विमानों से एक-एक, पांच विमानों से दो-दो जिनदेव च्यूत हुए। इन चौबीस जिनों को प्रणाम करता हूँ।
306. जिनेश्वर ऋषभदेव, धर्मनाथ, शांतिनाथ तथा कुंथुनाथ-ए चारों सर्वार्थसिद्धि विमान से च्यूत हुए, इन्हें प्रणाम करता हूँ।
307. तीर्थकर श्रेयांसनाथ, अनन्तनाथ तथा महावीर-ए तीनों पुष्पोत्तर विमान से च्यूत हुए, इन्हें प्रणाम करता हूँ।
308. सयंभवनाथ अधोग्रैवेयक विमान से, पद्मप्रभ ऊपरी ग्रैवेयक से तथा सुपार्श्वमुनि मध्यम ग्रैवेयक से च्यूत हुए, इनकी वंदना करता हूँ।
309. आनत कल्प से सुविधिनाथ एवं शीतलनाथ च्यूत हुए। महाशुक्र विमान से वासुपूज्य तथा सहस्रार विमान से विमलनाथ च्यूत हुए।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

310. अभिनंदणं च अजियं विजयविमाणच्चुयं नमंसांमि।  
चंदप्पहं च सुमइं दो वि चुया वेजयंताओ॥
311. अर मल्लि जयंताओ, नमि नेमिऽपराइया विमाणाओ।  
मुणिसुव्वयं च पासं पाणयकप्पा चुयं वंदे॥
312. चयणत्थएण एवं भणिया मे जिणवरा चउव्वीसं।  
चरिमभवे वोक्कंते एत्तो जम्मं निसामेह॥

### (गा. 313- 38. दसखेत्तेसु एगसमयजायाणं उसम- बालचंदाणण- जिणाईणं जम्मनक्खत्ता)

313. पंचसु एरवएसुं पंचसु भरहेसु जिणवरिदाणं।  
उस्सपिणीइमीए दससु वि खेत्तेसु समकाला'॥
314. उसमो य भरहवासे, (?य) बालचंदाणणो य एरवए<sup>२</sup>।  
एगसमएण जाया दस वि जिणा<sup>३</sup>विस्सदेवाहिं॥
315. अजिओ य भरहवासे, (?य) सुअणु<sup>४</sup>चंदो य एरवयवासे।  
एगसमएण जाया दस वि जिणा<sup>५</sup>रोहिणीजोए॥
316. भरहे य संभवजिणो, एरवए अग्गिसेणजिणचंदो।  
एगसमएण जाया दस वि जिणिंदा मिगसिरम्मि॥
317. अभिनंदणो य भरहे एरवए नंदिसेणजिणचंदो।  
एगसमएण जाया दस वि जिणिंदा पुणव्वसुणा॥
318. सुमती य भरहवासे, <sup>६</sup>इसिदिण्णजिणो य एरवएवासे।  
एगसमएण जाया दस वि जिणिंदा महाजोगे॥

1. 0कालं हं0 की0॥

2. ऐरवतक्षेत्रगतप्रस्तुतचतुर्विंशतिजिननामनिरूपणं समवायांगे इत्थमस्ति-“जंबुद्वीवे णं दीये  
एरवते वासे इमीसे ओसपिणीए चउवीसं तित्थगरा होत्था, तं जहा-चंदाणणं सुचंदं  
अग्गिसेणं च नंदिसेणं च। इसिदिण्णं वयहारि वंदिमो सामचंदं च॥ 141॥ अतिपासं च  
सुपासं देवीसरवदियं च मरुदेवं। निव्वाणगयं च धरं खीणदुहं सामकोट्टं च॥ 144॥  
जियरागमग्गिसेणं वंदे खीणरयमग्गिउत्तं च। वोक्सियपेज्जदोसं च वारिसेणं गतं  
सिदिधं॥ 145॥ श्रीमहावीरजैनविद्यालयप्रकाशितौष्ठौ पृ. 474-75॥

3. 'उत्तराशाढानक्षत्रे' इत्यर्थः, उत्तराशाढानक्षत्रस्य विष्णो नाम देवोष्पस्ति॥

4. सु + अणु- पश्चात् चन्द्रः त्र सुचन्द्रः। प्रवचनसारोद्धारं त्वत्र 'सिरिसिचय' इत्यस्ति॥

5. जिणिंदा पुणव्वसुणा हं0 की0॥ 6. प्रवचनसारोद्धारं त्वत्र 'सिरिदत्त' इत्यस्ति॥

## हिन्दी अनुवाद

310. अभिनंदन तथा अजीतनाथ विजय विमान से एवं चन्द्रप्रम और  
सुमतिनाथ वैजयन्त विमान से च्यूत हुए। इन्हें नमस्कार करता हूँ।
311. अरनाथ तथा मल्लिनाथ जयन्त विमान से, नमि तथा नेमिनाथ  
अपराजित विमान से, मुनि सुव्रत तथा पार्श्वनाथ प्राणत कल्प विमान  
से च्यूत हुए, मैं इन्हें वंदन करता हूँ।
312. इस प्रकार चौबीस तीर्थकरों के च्यवन का वर्णन मेरे द्वारा किया  
गया है। पूर्व भव को व्युत्क्रान्त कर अब उनके इस लोक के जन्म  
को सुनिए।

### (दस क्षेत्रों में एक समय में उत्पन्न हुए ऋषभ-बालचन्द्रानन आदि जिनदेवों का जन्म नक्षत्र)

313. पांच ऐरावत और पांच भरत क्षेत्रों में-इस प्रकार इस अवसर्पिणी काल  
में दसों क्षेत्रों में जिनवरों का समय एक प्रकार के हैं।
314. भरत क्षेत्रों में ऋषभ तथा ऐरावत क्षेत्रों में बालचन्द्रानन-इन दसों जिनों  
का जन्म एक ही समय उत्तराशाढा नक्षत्र में हुआ।
315. भरत वर्षों में अजितनाथ और ऐरावत क्षेत्रों में सुचन्द्र-ए दसों जिनदेव  
एक ही समय रोहिणी नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
316. भरत क्षेत्रों में सयंभवनाथ और ऐरावत क्षेत्रों में अग्निसेन-ये दसों  
जिनदेव एक ही समय मृगसिरा नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
317. भरत क्षेत्रों में अभिनंदन तथा ऐरावत क्षेत्रों में नंदिसेन-ये दसों जिनदेव  
एक ही समय पुनर्वसु नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
318. भरत क्षेत्रों में सुमतिनाथ तथा ऐरावत क्षेत्रों में ऋषिदत्त (श्रीदत्त)-ये  
दसों जिनदेव एक ही समय मघा नक्षत्र में उत्पन्न हुए।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

319. पउमप्पभो य भरहे, वयधारिजिणो य एरवएवासे।  
एगसमएण जाया दस वि जिणा चित्तजोगमि।।
320. भरहे य सुपासजिणो, एरवए 'सामचंदजिणचंदो।  
एगसमएण जाया दस वि जिणिंदा विसाहाहिं।।
321. चंदप्पभो य भरहे, एरवए दीहसेणजिणचंदो।  
एगसमएण जाया दस वि य अणुराहजोगमि।।
322. सुविही य भरहवासे, एरवए चव जिणवरसयाऊ।  
एगसमयमि जाया दस वि जिणा मूलजोगमि।।
323. भरहे य सीयलजिणो, एरवए 'सव्वई जिणवरिदो।  
पुव्वासाढारिक्खे जाया जिणपुंगवा एते।।
324. भरहे सेज्जंसजिणो, एरवए जुत्तिसेणजिणचंदो।  
एगसमएण जाया दस वि जिणिंदा सम(व)णजोगे।।
325. भरहे य वासुपुज्जो, सेज्जंसजिणो य एरवएवासे।  
सयभिसयानक्खत्ते दस वि जिणिंदा समं जाया।।
326. विमलो य भरहवासे, एरवए सीहसेणजिणचंदो।  
उत्तरभददवयाहिं दस वि जिणा एगसमयमि।।
327. 'भरहे अणंतइजिणो, एरवएऽसंजला' जिणवरिदो।  
एगसमएण जाया दस वि जिणा रेवईजोगे।।
328. धम्मो य भरहवासे, उवसंतजिणो य एरवएवासे।  
एगसमएण जाया दस वि जिणा पुस्सजोगमि।।
329. संती य भरहवासे, एरवए दीह(?देव)सेणजिणचंदो।  
एगसमएण जाया दस वि जिणिंदा भरणिजोगे।।
330. कुंधु य भरहवासे, एरवयमि य 'महाहिलोगबलो।  
एगसमएण जाया दस वि जिणा कित्तियाजोए।।

1. प्रवचनसारोद्धारं त्वत्र 'सोमचंद' इत्यस्ति।।
2. प्रवचनसारोद्धारं त्वत्र 'सव्वई' इत्यस्ति।।
3. भरहे य अणंतजिणो ढ० की०।।
4. प्रवचनसारोद्धारं त्वत्र 'सयंजल' इत्यस्ति।।
5. प्रवचनसारोद्धारं त्वत्र 'महाविरिय' इत्यस्ति।।

## हिन्दी अनुवाद

319. भरत क्षेत्रों में पद्मप्रभ और ऐरावत क्षेत्रों में वज्रधारी—ये दसों जिनदेव एक ही समय चित्रा नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
320. भरत क्षेत्रों में सुपाशर्वनाथ और ऐरावत क्षेत्रों में श्यामचन्द्र (सोमचंद्र)—ये दसों जिनदेव एक ही समय विशाखा नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
321. भरत क्षेत्रों में चन्द्रप्रभ तथा ऐरावत क्षेत्रों में दीर्घसेन—ये दसों जिनदेव एक ही समय अनुराधा नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
322. भरत क्षेत्रों में सुविधि और ऐरावत क्षेत्रों में शतायु—ये दसों जिनदेव एक ही समय मूल नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
323. भरत क्षेत्रों में शीतलनाथ तथा ऐरावत क्षेत्रों में सुव्रतीनाथ (सच्चईनाथ)—ये दसों श्रेष्ठ जिनदेव एक ही समय पूर्वाषाढा नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
324. भरत क्षेत्रों में श्रेयांसनाथ तथा ऐरावत क्षेत्रों में युक्तिसेन—ये दसों जिनदेव एक ही समय श्रवण नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
325. भरत क्षेत्रों में वासुपूज्य तथा ऐरावत क्षेत्रों में श्रेयांसनाथ—ये दसों जिनदेव एक ही समय शतभिषा नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
326. भरत क्षेत्रों में विमलनाथ एवं ऐरावत क्षेत्रों में सिंहसेन—ये दसों जिनदेव एक ही समय उत्तर भाद्रपद नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
327. भरत क्षेत्रों में अनन्तदेव तथा ऐरावत क्षेत्रों में असंजल (सयंजल)—ये दसों जिनदेव एक ही समय रेवती नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
328. भरत क्षेत्रों में धर्मनाथ तथा ऐरावत क्षेत्रों में उपशांत—ये दसों जिनदेव एक ही समय पुष्य नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
329. भरत क्षेत्रों में शांतिनाथ और ऐरावत क्षेत्रों में दीर्घसेन (देवसेन)—ये दसों जिनदेव एक ही समय भरणी नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
330. भरत क्षेत्रों में कुंधुनाथ तथा ऐरावत क्षेत्रों में महाधियोगबल—ये दसों जिनदेव एक ही समय कृतिका नक्षत्र में उत्पन्न हुए।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

331. होइ अरो य महंतो भरहे, 'अइपासजिणो य एरवए।  
एगसमएण जाया दस वि जिणा रेवईजोगे ॥
332. मल्ली य भरहवासे, 'मरुदेविजिणो य एरवएवासे।  
एगसमएण जाया दस वि<sup>३</sup> जिणा अस्सिणीजोगे ॥
333. 'मुणिसुव्वओ य भरहे, मरुदेविजिणो य एरवएवासे (?तह य ध्णे  
जिणवरो य एरवए)।  
एगसमएण जाया दस वि जिणा अस्सिणीजोगे (सवणजोगमि) ॥
334. नमिजिणचंदो भरहे, एरवए सामकोट्ट<sup>६</sup> जिणचंदो।  
एगसमएण जाया दस वि जिणा अस्सिणीजोगे ॥
335. भरहे अरिट्ठनेमी एरवए अग्गिसेणजिणचंदो।  
एगसमएण जाया दस वि जिणा चित्तजोगमि ॥
336. पासो य भरहवासे, एरवए अग्गिदत्त<sup>७</sup> जिणचंदो।  
एगसमएण जाया दस वि विसाहाहि जोगमि ॥
337. भरहे वीरजिणिंदो, एरवए वारिसेणजिणचंदो।  
हत्थुत्तराहिं-जोगे जाया तित्थंकरा दस वि ॥
338. एवं भणिया जम्मा दससु वि खेत्तेसु जिणवरिंदाणं।  
एत्तो परं तु वोच्छं वण्णविभागं समासेणं ॥

(गा. 339-58. दसखेत्तसमुम्भवाणं उसभाइजिणाणं देहवण्णा)

339. चत्तारि कालगा जिणवरा उ, चउरो पियंगुवण्णभा।  
चत्तारि पउमगोरा, ससिप्पभा होंति चत्तारि ॥
340. वरकणगतवियवण्णा बत्तीसं सेसगा जिणवरिंदा।  
भरहे एरवए वा दससु वि खेत्तेसु जिणचंदा ॥

1. प्रवचनसारोद्धारं त्वत्र 'पास' इत्यस्ति ॥

2. प्रवचनसारोद्धारं त्वत्र 'मरुदेव' इत्यस्ति ॥

3. वि य मग्गस्सिरजोगमि हं० की० ॥

4. नास्तीयं गाथा सं० प्रती ॥

5. एतत्पाठशुद्धिपुष्टयर्थं दृष्यतां गाथा 341 तथा 544 । प्रवचनसारोद्धारं त्वत्र 'सिरिहर' इत्यस्ति ॥

6. ०कोट्टजि० हं० की० । प्रवचनसारोद्धारं त्वत्र 'सामकोट्ट' इत्यस्ति ॥

7. प्रवचनसारोद्धारं त्वत्र 'अग्गदत्त' इत्यस्ति, अस्य च कृतौ 'अग्गदत्त अथवा मार्गदत्त' इति नामद्वयं दर्शितमस्ति ॥

## हिन्दी अनुवाद

331. भरत क्षेत्रों में पूज्य अरनाथ और ऐरावत क्षेत्रों में अतिपार्श्व-ये दसों  
जिनदेव एक ही समय रेवती नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
332. भरत क्षेत्रों में मल्लिनाथ तथा ऐरावत क्षेत्रों में मरुदेवी-ये दसों जिनदेव  
एक ही समय अश्विनी नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
333. भरत क्षेत्रों में मुनि सुव्रतनाथ और ऐरावत क्षेत्रों में धरनाथ-ये दसों  
जिनदेव एक ही समय अश्विनी (श्रवण) नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
334. भरत क्षेत्रों में नमिनाथ तथा ऐरावत क्षेत्रों में श्यामकोष्ठ-ये दसों  
जिनदेव एक ही समय अश्विनी नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
335. भरत क्षेत्रों में अरिष्टनेमि एवं ऐरावत क्षेत्रों में अग्निसेन-ये दसों  
जिनदेव एक ही समय चित्रा नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
336. भरत क्षेत्रों में पार्श्वनाथ तथा ऐरावत क्षेत्रों में अग्निदत्त-ये दसों  
जिनदेव एक ही समय विशाखा नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
337. भरत क्षेत्रों में महावीर स्वामी तथा ऐरावत क्षेत्रों में वारिसेन-ये दसों  
जिनदेव एक ही समय उत्तर-फाल्गुनी नक्षत्र में उत्पन्न हुए।
338. इस प्रकार दसों क्षेत्रों में उत्पन्न जिनवरों का यह जन्म वर्णन किया  
गया है। अब संक्षेप में इनके वर्ण-विभाग (रंग) के बारे में कहता हूँ।  
(दसों क्षेत्रों में उत्पन्न ऋषभ आदि तीर्थकरों के शरीर का रंग)
339. चार तीर्थकर श्याम वर्ण के, चार पियङ्गू (नील) वर्ण के, चार  
कमल के समान गौरवर्ण के तथा चार चन्द्रप्रभा के समान वर्ण वाले  
होते हैं।
340. भरत और ऐरावत-इन दसों क्षेत्रों में उत्पन्न शेष बत्तीस तीर्थकर तपाए  
हुए उत्तम स्वर्ण सदृश वर्ण वाले होते हैं।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

341. मुणिसुव्वओ य भरहे, एरवयम्मि य धरो य सामलगा।  
भरहे अरिट्ठनेमी, एरवए अग्गिसेणो त्ति॥
342. चउसु वि एरवएसुं एवं चउसु वि य भरहवासेसु।  
सोलस वि सामलंगा जिणचंदा होंति नायव्वा॥
343. पासो य अग्गिदत्तो, मल्ली मरुदेवि केवली चेव।  
एते चत्तारि जिणा पियंगुसामा मुणेयव्वा॥
344. पंचसु एरवएसुं एवं पंचसु वि भरहवासेसु।  
बीसं पियंगुवण्णा अहेसि ओसप्पिणीए जिणा॥
345. पउमप्पमो य भरहे, वयधारिजिणो य एरवएवासे।  
भरहम्मि नासुपुज्जो, सेज्जंसो तह य एरवए॥
346. चउसु वि एरवएसुं एवं चउसु वि य भरहवासेसु।  
एते वीसं जिणिंदा बंधूकुसुमप्पभा नेया॥
347. चंदप्पमो य भरहे, एरवए दीहसेणजिणचंदो।  
सुविही य भरहवासे एरवयम्मि य सयाउजिणो॥
348. चउसु वि एरवएसुं एवं चउसु वि य भरहवासेसु।  
एते बीसं धवला जिणचंदा होंति नायव्वा॥
349. उसमो य भरहवासे, (? य) बालचंदाणणो य एरवए।  
अजिओ य भरहवासे, एरवयम्मि य सुचंदजिणो॥
350. भरहे य संभवजिणो, एरवए अग्गिसेणजिणचंदो।  
अभिणंदणो य भरहे, एरवए नंदिसेणजिणो॥
351. सुमई य भरहवासे, इसिदिण्णजिणो य एरवएवासे।  
भरहे य सुपासजिणो, एरवए सामचंदजिणो॥
352. भरहे य सीयलजिणो, एरवए सव्वई जिणवरिदो।  
भरहे सेज्जंसजिणो, एरवए जुत्तिसेणो वि॥
353. विमलो य भरहवासे, एरवए सीहसेणजिणचंदो।  
भरहे अणंतइजिणो, असंजलजिणो य एरवए॥

## हिन्दी अनुवाद

341. भरत क्षेत्र में मुनि सुव्रत एवं अरिष्टनेमि तथा ऐरावत क्षेत्रों में धरनाथ एवं अग्निसेन तीर्थकर श्याम वर्ण के होते हैं।
342. शेष चारों ऐरावत और चारों भरत क्षेत्रों में इन नाम के उत्पन्न सोलह तीर्थकर श्याम वर्ण वाले होते हैं। ऐसा जानना चाहिए।
343. पार्ष्व, अग्निदत्त, मल्लिनाथ तथा मरुदेवी—ये चारों तीर्थकर नील—श्याम वर्ण के होते हैं। ऐसा जानिए।
344. इस उत्सर्पिणी काल में पांचों ऐरावत तथा पांचों भरत क्षेत्रों में उत्पन्न उपरोक्त नाम वाले बीस तीर्थकर नील वर्ण के होते हैं।
- 345+346. भरत क्षेत्र में पद्मप्रभ एवं वासुपूज्य तथा ऐरावत क्षेत्र में वज्रधारी एवं श्रेयांसनाथ तथा शेष चारों ऐरावत और चारों भरत क्षेत्रों के समान नामवाले कुल बीस तीर्थकरों को बंधुकमल प्रभा के समान जानना चाहिए।
- 347+348. भरत क्षेत्र में चन्द्रप्रभ एवं सुविधि तथा ऐरावत क्षेत्र में दीर्घसेन और शतागु तथा इसी नामवाले शेष चारों ऐरावत और चारों भरत क्षेत्र में उत्पन्न कुल बीस तीर्थकरों को श्वेत वर्ण वाला जानना चाहिए।
- 349+357. भरत क्षेत्र में तीर्थकर ऋषभ, अजितनाथ, संभवनाथ, अभिनंदन, सुमतिनाथ, सुपाश्वर्षनाथ, शीतलनाथ, श्रेयांसनाथ, विमलनाथ, अनन्तनाथ, धर्मनाथ, शांतिनाथ, कुन्धुनाथ, अरनाथ, नमिनाथ एवं महावीर तथा ऐरावत क्षेत्र में तीर्थकर बालचन्द्रानन, सुचन्द्रदेव, अग्निसेन, नंदिसेन, ऋषिदिन्न, श्यामचन्द्र, सर्वतिजिन (सच्चई), युक्तिसेन, सिंहसेन, असंजलदेव, उपशांतदेव, देवसेन, महाधियोगबल, अतिपाश्वर्षनाथ, श्यामकोष्ठ तथा वारिसेन—ये सभी जीव, लोक, पदार्थ एवं वस्तु के स्वभाव को केवलज्ञान से प्रकाशित करनेवाले बत्तीस तीर्थकरों को प्रतप्त सुवर्ण वर्ण के जानना चाहिए।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

354. धम्मो य भरहवासे, उवसंतजिणो य एरवएवासे।  
संती य भरहवासे, उवसंतजिणो (? य देवसेणो) य एरवए॥
355. कुंधू य भरहवासे एरवयम्मि य महाहिलोगबलो।  
अरजिणवरो य भरहे, अइपासजिणो य रवए॥
356. नमिजिणवरो य भरहे, एरवए सामकोट्ट<sup>1</sup>जिणचंदो।  
भरहम्मि य वीरजिणो, एरवए वारिसेणो त्ति॥
357. केवलनाणुज्जोइयजियलोय-पयत्थ-वत्थुसम्भावा।  
एते बत्तीस जिणा सुवण्णवण्णा मुणेयव्वा॥
358. चउसु वि एरवएसुं एवं चउसु वि य भरहवासेसु।  
अट्ठावीसं तु सयं <sup>2</sup>पसण्णि(सुवण्ण)वण्णं मुणेयव्वं॥

### (गा. 359. दसखेत्तसमुम्भवजिणाणं संघयण-संठाणाइ)

359. दससु वि वासेसेत्तो जिणिदचंदाण सुणसु संठाणं।  
वज्जरिसमसंघयणा समचउरंसा य संठाणे॥

### (गा. 360-83. तित्थयर-चक्कि-केसवाणं देहमाणं-आउपमाणाइ)

360. <sup>3</sup>बत्तीसं घरयाइं काउं तिरियाऽऽययाहि रेहाहिं।  
उइढाययाहि काउं पंच घराइं तओ पढमे॥
361. पनरसजिणं निरंतर, सुण्णदुगं, तिजिण, सुन्नतियगं च।  
दो जिण, सुन्न, जिणिदो, सुण्ण, जिणो, सुन्न, दोण्णि जिणा॥
362. दो चक्कि, सुण्ण तेरस, पण चक्की, सुण्ण, चक्की, दो सुन्ना॥  
चक्की, सुन्न, दुचक्की, सुन्नं, चक्की, दुसुन्नं च॥
363. दस सुण्ण, पंच केसव, पणसुन्नं, केसि, सुण्ण, केसी य।  
दो सुण्ण, केसवो वि य, सुण्णदुगं, केसव, तिसुन्नं॥

1. 0कोट्टजि0 हं0 की0 ॥

2. पसिण्णि0 हं0 की0 ॥

3. एतद् ह्यत्रिंशद्गृहसूचकं यंत्रं प्रकीर्णकान्ते द्रष्टव्यम्॥

## हिन्दी अनुवाद

358. इसी प्रकार शेष चारों ऐरावत और चारों भरत क्षेत्रों में उत्पन्न उपरोक्त नाम वाले कुल 128 तीर्थकर निर्मल वर्ण वाले जानने चाहिए।

### (दस क्षेत्रों में उत्पन्न तीर्थकरों के संहनन-संस्थान)

359. दसों क्षेत्रों के जिनचन्द्रों के संस्थान को सुनिए। उनका संहनन वज्रऋषभनाराच तथा संस्थान समचतुरस्र बंध का था।

### (तीर्थकर-चक्रवर्ती-केशव के शरीर-आयु प्रमाण वर्णन 360-83)

- 360+361. क्षैतिज रेखा से बत्तीस खाना बनाकर पुनः लम्बवत् रेखा से उसे पांच हिस्सों में विभक्त करना चाहिए। इनमें लम्बवत् वाले शुरु की पहली लाइन में ऊपर से नीचे लगातार पंद्रह तीर्थकरों के नाम क्रमशः लिखें। दो को खाली छोड़ें, फिर लगातार तीन में क्रमशः अगले तीन तीर्थकरों के नाम लिखें, फिर नीचे तीन को खाली छोड़ें, पुनः दो तीर्थकरों के नाम लिखें, एक खाली छोड़ें, एक में अगले तीर्थकर का नाम, एक खाली, फिर एक तीर्थकर का नाम, एक खाली तथा अंतिम दो घर में शेष बचे दो तीर्थकरों के नाम लिखें।

362. लम्बवत् वाले दूसरी लाइन में ऊपर से नीचे प्रथम दो खानों में दो क्रमशः चक्रवर्तियों के नाम लिखें, फिर तेरह खाने खाली छोड़ें, अगले पांच में पांच क्रमशः चक्रवर्तियों के नाम, एक को खाली, अगले बाईसवें खाने में चक्रवर्ती का नाम, दो खाने खाली, फिर एक में चक्रवर्ती, एक खाली, एक में चक्रवर्ती का नाम तथा सबसे नीचे के दो खानों को खाली छोड़ें।

363. लम्बवत् तीसरी लाइन में ऊपर से नीचे प्रथम के दस खानों को खाली छोड़ दें। उससे नीचे के पांच खानों में क्रमशः पांच केशव या बलदेव का नाम लिखें। फिर पांच खाली, एक में छठे बलदेव, बाईसवां खाना खाली, तेइसवें में सातवें केशव, नीचे का दो खाना खाली, एक में केशव, फिर दो खाना खाली, एक में नवें केशव तथा अंतिम तीन खानों को खाली छोड़ दें।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

364. पंचसय 1 अद्धपंचम 2 चउरो 3 अद्धुट्ट 4 तिन्नि य सयाई 5।।  
अड्डाइज्जा 6 दोन्नि 7 य दिवड्डमेगं 8 धणुसयं च 9।।
365. नउई10 असीइ11 सत्तरि 12 सट्ठी 13 पण्णास 14 तह य पणयाला15।।  
बायाला अद्धधणुं 16 ईयाला अद्धधणुगं च 17।।
366. चत्ताला 18 पणतीसा 19 तीसा 20 उणतीस 21 वीस अट्ठहिया 22।।  
छवीसा 23 पणवीसा 24 वीसा 25 तह सोल 26 पण्णरस 27।।
367. बारस 28 दस 29 सत्त धणू 30 रयणी णव 31 सत्त 32 होई उच्चत्तां।।  
जिण-चक्कवट्टि-केसव चउत्थघरयम्मि निदिदट्टं।।
368. उसमो पंच धणूसयं 1, पासो नव रयणि 23, सत्त वीरजिणो 24।।  
सेसट्ट 2-9, पंच 10-14, अट्ट 15-22 य, पण्णा-दस-पंचपरिहीणा।।
369. पंचसय 1 अद्धपंचम 2 बायाला चैव अद्धधणुयं च 3।।  
ईयाला अद्धधणुं च चउत्थे 4 पंचमे चत्ता 5।।
370. पणतीसा 6 तीसा 7 पुण अट्ठावीसा 8 य वीस य धणूइं 9।।  
पन्नरस 10 बारसेव 11 य धणूणि सत्तेव 12 चक्कीणं।।
371. पढमो धणूणसीति 1 सत्तरि 2 सट्ठी 3 य पण्ण 4 पणयाला 5।।  
उणतीसा 6 छवीसा 7 सोलस 8 दस 9 केसवुच्चत्तां।।
372. सामण्णविसेसेणं तिण्ह वि जिण-चक्कि-केसवाणं तु।।  
दससु वि खेत्तेसेवं चउत्थघरयम्मि निदिदट्टं।।
373. चुलसीति1 बावत्तरि 2 सट्ठी' 3 पन्नास 4 चत्त 5 तीसा 6 य।।  
वीसा 7 दस 8 दो 9 एगं 10 च हुंति पुव्वाण लक्खाइं।।
374. चुलसीति 11 बावत्तरि 12 (?य) सट्ठि 13 तीस 14 दस 15  
पंच 16 तिन्नेव 17।।  
एगं च सयसहस्सं 18 वासाणं होति विन्नेयं।।
375. पणनउई 19 चुलसीति 20 पणसट्ठी 21 सट्ठि 22 तह य छप्पन्ना 23।।  
पणपण्ण 24 तीस 25 बारस 26 दस 27 तिन्नेगं 28-29 सहस्साइं।।

1. सट्ठि ल्ति पन्नास प्रतिपाठः।।

## हिन्दी अनुवाद

- 364+367. चौथी लाइन में ऊपर से क्रमशः पांच सौ धनुष, साढ़े चार सौ धनुष, चार सौ, साढ़े तीन सौ, तीन सौ, दो सौ पचास, दो सौ, एक सौ पचास, एक सौ, नब्बे, अस्सी, सत्तर, साठ, पचास, पैतालीस, साढ़े बयालीस, साढ़े इकतालीस, चालीस, पैतीस, तीस, उनतीस, अट्ठाईस, छब्बीस, पच्चीस, बीस, सोलह, पंद्रह, बारह, दस, सात धनुष के बाद इकतीसवें खाने में नौ हाथ तथा बत्तीसवें खाने में सात हाथ लिखें।
368. प्रथम तीर्थकर ऋषभदेव पांच सौ धनुष, तेइसवें तीर्थकर पार्श्वनाथ नौ हाथ और चौबीसवें तीर्थकर महावीर सात हाथ लंबे थे। शेष के दूसरे से लेकर नौवें तक अपने पूर्ववर्ती तीर्थकरों की अपेक्षा क्रमशः पचास धनुष कम, दसवें से चौदहवें तक पांच तीर्थकर अपने पूर्ववर्तियों की अपेक्षा दस धनुष कम तथा पंद्रहवें से लेकर बावीसवें तक आठ तीर्थकर अपने पूर्ववर्तियों की अपेक्षा क्रमशः पांच धनुष छोटे होते गए।
- 369+370. प्रथम चक्रवर्ती की लंबाई पांच सौ धनुष, दूसरे की साढ़े चार सौ, तीसरे की साढ़े बयालीस धनुष, चौथे की साढ़े इकतालीस धनुष, पांचवे की चालीस धनुष, छठे की पैतीस धनुष, सातवें की तीस धनुष, आठवें की अट्ठाईस धनुष, नौवें की बीस धनुष, दसवें की पंद्रह धनुष, ग्यारहवें की बारह धनुष तथा बारहवें चक्रवर्ती की लंबाई सात धनुष थी।
371. पहले बलदेव या केशव की लंबाई अस्सी धनुष, दूसरे की सत्तर, तीसरे की साठ, चौथे की पचास, पांचवे की पैतालीस, छठे की उनतीस, सातवें की छब्बीस, आठवें की सोलह तथा नौवें की लंबाई दस धनुष कही गयी है।
372. दसों क्षेत्रों में उत्पन्न तीर्थकर, चक्रवर्ती और केशव- तीनों की लंबाई सामान्य और विशेष के भेद से चौथी लम्बवत् लाइन में ऊपर से नीचे निर्दिष्ट करनी चाहिए।
- 373+376. पांचवीं लम्बवत् लाइन के खानों में ऊपर से नीचे क्रमशः चौरासी लाख पूर्व, बहत्तर लाख पूर्व, साठ लाख पूर्व, पचास लाख पूर्व, चालीस लाख पूर्व, तीस लाख पूर्व, बीस लाख पूर्व, दस लाख पूर्व, दो लाख पूर्व, एक लाख पूर्व, चौरासी लाख वर्ष, बहत्तर लाख वर्ष, साठ लाख वर्ष, तीस लाख वर्ष, दस लाख वर्ष, पांच लाख वर्ष, तीन लाख वर्ष, एक

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

376. सत्तसया 30 सयमेगं वासाणं 31 बावत्तरि च 32 पंचमए<sup>१</sup>।  
जिण-चक्कि-केसवाणं आउपमाणं मुणेयव्वं ॥
377. चुलसीति<sup>१</sup> बावत्तरि 2 सट्ठी 3 पण्णास 4 चत्त 5 तीसा 6 य।  
वीसा 7 दस 8 दो 9 एगं 10 च होंति पुव्वाण लक्खाइं ॥
378. चउरासीती 11 बावत्तरी 12 य सट्ठी 13 य होइ नायव्वा।  
तीसा 14 दसेव 15 एगं 16 च वासलक्खा मुणेयव्वा ॥
379. पंचाणउइसहस्सा 17 चउरासीती 18 य पंचपण्णा 19 य।  
तीसा 20 दस 21 य सहस्सं 22 सयं 23 च बावत्तरि 24 वीरे ॥
380. चउरासीति 1 य बावत्तरी 2 य पुव्वाण होंति लक्खाइं।  
पंच 3 य तिण्णेगं 4-5 चिय वासाणं सयसहस्सा उ ॥
381. पंचाणउतिसहस्सा 6 चउरासीती 7 य सट्ठि 8 तीसा 9 य।  
दस 10 तिण्णि 11 सहस्साइं, सत्तसया 12 आउ चक्कीणं ॥
382. चुलसीती 1 बावत्तरि 2 (?य) सट्ठि 3 तीस 4 दस वासलक्खाइं।  
पण्णट्ठि सहस्साइं 6 छप्पन्ना 7 बारसेगं 8-9 च ॥
383. सामण्ण-विसेसेणं तिण्ह वि जिण-चक्कि-केसवाणं तु।  
दससु वि वासेसेवं आउपमाणं मुणेयव्वं ॥

1. 'पंचमके गृहे-स्थापनाकोष्ठकगृहे' इत्यर्थः ॥

## हिन्दी अनुवाद

- लाख वर्ष, पनचानवें हजार वर्ष, चौरासी हजार वर्ष, इक्कीसवें में पैंसठ हजार वर्ष, साठ हजार वर्ष, छप्पन हजार वर्ष, पचपन हजार वर्ष, तीस हजार वर्ष, बारह हजार वर्ष दस हजार वर्ष, तीन हजार वर्ष, एक हजार वर्ष, सात सौ वर्ष, एक सौ वर्ष तथा अंतिम बत्तीसवें खाने में बहत्तर वर्ष आयु लिखनी चाहिए।
- 377+379. प्रथम तीर्थकर की आयु चौरासी लाख पूर्व, दूसरे की बहत्तर लाख पूर्व, तीसरे की साठ लाख पूर्व, चौथे की पचास लाख पूर्व, पांचवें की चालीस लाख पूर्व, छठे की आयु तीस लाख पूर्व, सातवें की बीस लाख पूर्व, आठवें की दस लाख पूर्व, नौवें की दो लाख पूर्व, दसवें की एक लाख पूर्व, ग्यारहवें की चौरासी लाख वर्ष, बारहवें की बहत्तर लाख वर्ष, तेरहवें की साठ लाख वर्ष, चौदहवें की तीस लाख वर्ष, पंद्रहवें की दस लाख वर्ष, सोलहवें की एक लाख वर्ष, सत्रहवें की पनचानवें हजार वर्ष, अठारहवें की चौरासी हजार वर्ष, उन्नीसवें की पचपन हजार वर्ष, बीसवें की तीस हजार वर्ष, इक्कीसवें की दस हजार वर्ष, बाइसवें की एक हजार वर्ष, तेइसवें की एक सौ वर्ष और चौबीसवें तीर्थकर की आयु बहत्तर वर्ष निर्दिष्ट है।
- 380+381. चक्रवर्तियों में पहले की आयु चौरासी लाख पूर्व, दूसरे की बहत्तर लाख पूर्व, तीसरे की पांच लाख पूर्व, चौथे की तीन लाख पूर्व, पांचवें की एक लाख पूर्व, छठे की पनचानवें हजार वर्ष, सातवें की चौरासी हजार वर्ष, आठवें की साठ हजार वर्ष, नौवें की तीस हजार वर्ष, दसवें की दस हजार वर्ष, ग्यारहवें की तीन हजार वर्ष तथा बारहवें चक्रवर्ती की आयु सात सौ वर्ष कही गयी है।
382. अर्धचक्रवर्तियों अर्थात् केशवों में से पहले की आयु चौरासी लाख वर्ष, दूसरे की बहत्तर लाख वर्ष, तीसरे की साठ लाख वर्ष, चौथे की तीस लाख वर्ष, पांचवें की दस लाख वर्ष, छठे की पचासी हजार वर्ष, सातवें की छप्पन हजार वर्ष, आठवें की बारह हजार वर्ष और नवें की एक हजार वर्ष थी।
383. दसों क्षेत्रों में तीर्थकरों, चक्रवर्तियों और केशवों की आयु सामान्य और विशेष की दृष्टि से जानना चाहिए।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

(गा. 384-85. दसखेत्तजिणाणं वंसा गोत्ताणि य)

384. मुणिसुव्वओ धरजिणो नेमिजिणो अग्गिसेण हरिवंसे।  
अवसेसा तित्थयरा सव्वे इक्खागवंसा उ।।
385. मुणिसुव्वओ धरो वि हु गोयमगोत्ताग्गिसेण नेमी य।  
अवसेसा तित्थयरा कासवगोत्ता मुणेयव्वा।।

(गा. 386-88. कुमार-राय-चक्कवट्टित्थयरा)

386. वीरो अरिट्ठनेमी पासो मल्ली य वासुपुज्जो य।  
एते मोत्तूण जिणे अवसेसा आसि रायाणो।।
387. रायकुलेसु वि जाया विसुद्धवंसेसु खत्तियकुलेसु।  
न य इच्छियाभिसेया कुमारवासेसु पव्वइया।।
388. संती कुंथू य अरो अरहंता चेव चक्कवट्टी य।  
अवसेसा तित्थयरा मंडलिया आसि रायाणो।।

(गा. 389. चउव्वीसइतित्थयरसमयनिरुवगा अरया)

389. उसमजिणो उप्पणो चरिमंते सुसमदूसमाए उ।  
तेवीसं तित्थयरा दूसमसुसमाए उप्पणा।।

(गा. 390-91. चउव्वीसइतित्थयराणं पुव्वमवे रायत्ताइ-सुयनाणनिरुवणं)

390. मंडलिया रायाणो जिणतेवीसं तु होंति पुव्वमवे।  
उसमो पुण तित्थयरो बोधव्वो चक्कवट्टी उ।।
391. तेवीसं तित्थयरा पुव्वमवेक्कारसंगवी आसि।  
उसमो पुण तित्थयरो चोददसपुव्वी मुणेयव्वो।।

## हिन्दी अनुवाद

(दसों क्षेत्रों के तीर्थकरों के वंश और गोत्र)

384. मुनि सुव्रत, धर, नेमि तथा अग्निसेन हरिवंश कुल में उत्पन्न हुए जबकि शेष सभी तीर्थकर इक्ष्वाकू वंश में उत्पन्न हुए।
385. मुनि सुव्रत, धर, अग्निसेन और नेमिनाथ का वंश गोत्र गौतम था जबकि शेष तीर्थकरों का वंश गोत्र कश्यप था।

(तीर्थकरों के कुमार, राजत्व और चक्रवर्तित्व काल)

386. महावीर, अरिष्टनेमि, पार्श्व, मल्ली और वासुपूज्य को छोड़कर सभी तीर्थकर राजा बने।
387. क्षत्रिय कुल के विशुद्ध राजवंशों में जन्म होने के बावजूद भी उपरोक्त (दस क्षेत्रों के पांच-पांच यानी पचास तीर्थकर) ने राज्याभिषेक की इच्छा नहीं की तथा कुमारकाल में ही प्रवर्जित हो गए।
388. इनके अलावा, शांतिनाथ, कुंथुनाथ तथा अरनाथ (एक क्षेत्र में तीन यानी दस क्षेत्रों में 30) अर्हत भी थे और चक्रवर्ती राजा भी, शेष तीर्थकर (यानी, 160 तीर्थकर) मांडलिक राजा थे।

(चौबीसों तीर्थकरों के जन्म के समय के आरा का प्ररूपण)

389. प्रथम ऋषभदेव सुसमा-दुसमा आरा के अंतिम चरण में उत्पन्न हुए और शेष तेईस तीर्थकर दुसमा-सुसमा आरे में उत्पन्न हुए। (अर्थात् जब तीसरे आरा के समाप्त होने में 84 लाख पूर्व 3 वर्ष साढ़े आठ मास शेष थे तब दसों क्षेत्रों में प्रथम तीर्थकरों का जन्म हुआ। शेष एक क्षेत्र में 23 यानी दसों क्षेत्रों में 230 तीर्थकरों का जन्म दुषमा-सुषमा नामक चौथे आरे में हुआ।)

(चौबीसों तीर्थकरों के पूर्वभव का राजत्व एवं श्रुतज्ञान का निरूपण)

390. तेईस तीर्थकर (दसों क्षेत्रों में 230) पूर्वभव में मांडलिक राजा थे जबकि प्रथम तीर्थकर ऋषभदेव (दसों को) को पूर्वभव में चक्रवर्ती सम्राट जानना चाहिए।
391. ऋषभदेव पूर्वजन्म में चौदह पूर्वों के ज्ञाता थे जबकि शेष तेईस तीर्थकर को पूर्वजन्म में एकादश पूर्वों का ज्ञाता जानना चाहिए।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

(गा. 392-95. चउव्वीसइजिणाणं निक्खमणनगरी-समय- सहपव्वइयसंखा)

392. उसभो य विणीयाए, बारवतीए अरिट्ठनेमी।  
अवसेसा तित्थयरा निक्खंता जम्मभूमिसु।।
393. मल्ली पासो अरहा सेज्जंसो चेव वासुपुज्जो य।  
पुव्वण्हे पव्वइया, सेसा पुण पच्छिमण्हम्मि।।
394. एगो भगवं वीरो, पासो मल्ली य तिहिं तिहिं सएहिं।  
भगवं पि (?च) वासुपुज्जो छहिं पुरिससएहिं निक्खंतो।।
395. उग्गाणं भोगाणं राइण्णाणं च खत्तियाणं च।  
चउहिं सहस्सेहिं उसभो, सेसा उ सहस्सपरिवारा।।

(गा. 396- 99. सेसनवखेत्तजिणपव्वज्जानिददेसो)

396. उदिओदियकुल- वंसा सव्वे वि य जिणवरा चउव्वीसं।  
धण-कणग-रयणनिचए 'अवइज्झिय ते उ पव्वइया।।
397. समणगणपवरगुरुणो भवियजणविबोहगा जिणवरिदा।  
पंचमहव्वयजुत्ता तव-चरणुवएसगा धीरा।।
398. सीहत्ता निक्खंता, सीहत्ता चेव विहरिया धीरा।  
सीहेहिं सीहसरिसं सीहललियविक्कमं पत्ता।।
399. दंसण- नाण- चरित्तस्स देसगा चरणनिच्छयविहण्णु।  
नवसु वि वासेसेवं निक्खंता खायकित्तिजिणा।।

(चउव्वीसइजिणाणं निक्खमणतवा पढमभिक्खाओ य 400-02)

400. सुमइत्थ निच्चमत्तेणं निग्गओ, वासुपुज्जो जिणे चउत्थेण।  
पासो मल्ली वि य अट्ठमेण, सेसा उ छट्ठेणं।।

1. अवउज्झिय हं. की.।।

## हिन्दी अनुवाद

(चौबीस तीर्थकरों के निष्क्रमण नगर, समय, दीक्षा साथियों की संख्या)

392. ऋषभदेव विनीता नगरी से, अरिष्टनेमि द्वारावती नगरी से तथा शेष तीर्थकर अपनी-अपनी जन्मभूमि से ही निष्क्रमित हुए।
393. मल्लीनाथ, पार्श्व, श्रेयांस तथा वासुपूज्य पूर्वाहन काल में प्रव्रजित हुए जबकि शेष तीर्थकर उत्तराहन काल में प्रव्रजित हुए।
394. भगवान महावीर अकेले, पार्श्व और मल्ली तीन-तीन सौ पुरुषों के साथ तथा भगवान वासुपूज्य छह सौ पुरुषों के साथ प्रव्रजित हुए।
395. ऋषभदेव उग्र कुल, भोग कुल, राजन्य कुल तथा क्षत्रिय कुल के चार हजार परिवार के साथ तथा शेष तीर्थकर एक हजार पुरुषों के परिवारों के साथ प्रव्रजित हुए।

(शेष नौ क्षेत्रों के तीर्थकरों के प्रव्रज्या निर्देश)

396. शेष सभी नौ क्षेत्रों के चौबीसों तीर्थकर अति उत्कृष्ट कुल-वंश के थे। उन्होंने प्रचूर धन-धान्य, सुवर्ण, रत्न का परित्याग कर प्रव्रज्या ग्रहण की।
397. वे तीर्थकर श्रमणों के लिए श्रेष्ठ गुरु या महान अधिनायक और भव्य जनों के लिए प्रबोधदायक थे। वे सब पांच महाव्रतों से युक्त तथा तप संयम और उपदेश देने में धीर थे।
398. वे सब सिंह की तरह प्रव्रजित हुए, सिंह की तरह धीर रहकर विचरण किया, सिंह के सदृश्य शोभायमान थे तथा सिंह के सदृश्य शोभास्पद अनन्त पराक्रम को प्राप्त किया।
399. संपूर्ण दर्शन-ज्ञान-चारित्र्य का संयम-नियम के ज्ञाता और उपदेशक शेष नौ क्षेत्रों से यशस्वी तीर्थकरों ने भी इसी प्रकार प्रव्रज्या ग्रहण की।

(चौबीस तीर्थकरों की प्रव्रज्या, तप और प्रथम भिक्षा 400-02)

400. सुमतिनाथ नित्य भक्त यानी अनवरत उपवास करते हुए प्रव्रजित हुए, वासुपूज्य एक दिन (चतुर्थ भक्त) का उपवास करते हुए, पार्श्व और मल्लीनाथ अष्टम भक्त यानी तेला उपवास तथा शेष तीर्थकर दो दिनों का उपवास (बोले) करते हुए प्रव्रजित हुए।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

401. संवच्छरेण भिक्खा लद्धा उसभेण लोगनाहेण।  
सेसेहि बीयदिवसे लद्धाओ पढमभिक्खाओ॥
402. उसभस्स पढमभिक्खा खोयरसो आसि लोगनाहस्स।  
सेसाणं परमन्नं अमयरसरसावमं आसि॥
- (गा. 403-5. उसभाइदसखेत्तजिणाणं केवलनाणसमयपरुवणाइ)
403. 'मल्ली पासुसभस्स य गाणं सेज्जंस वासुपुज्जस्स।  
पुव्वण्हे उप्पण्णं, सेसाणं मज्झिमण्हम्मि<sup>१</sup>॥
404. चंदाणण मरुदेवे य, अग्गिदत्ते य जुत्तिसेणजिणे।  
सेज्जंसे पुव्वण्हे, सेसाणं पच्छिमण्हम्मि॥
405. दससु वि वासेसेवं दस दसमेगं तु केवली होंति।  
दस चेव धम्मतित्था निदिदट्ठा वीयरगेहिं॥
- (गा. 406-11. चउव्वीसइजिणाणं केवलनाणभूमिओ  
चेइयरुक्खपमाणं चेइयरुक्खनामाइं च)
406. उसभस्स पुरिमताले, बारवतीए अरिट्ठनेमिस्स।  
असामपयउज्जाणे मल्लिस्स मणोरमे चेव॥
407. नाणं च वड्ढमाणस्स उज्जुवालीनईए तीरम्मि।  
सेसाणं सव्वाणं जेसुज्जाणेषु निक्खंता॥
408. बत्तीसइं धणूइं चेइयरुक्खो उ वड्ढमाणस्स।  
सेसाणं पुण रुक्खा सरीरओ बारसगुणा उ॥
409. नग्गोह 1 सत्तवन्ने 2 साली (ले) 3 पियए 4 पियंगुरुक्खे 5 य।  
छत्तोहे 6 य सिरीसे 7 नागे 8 मालू 9 पियंगू (? पिलक्खू) 10 य॥
410. तेंदुय 11 पाडलि 12 जंबुए 13 आसोट्ठे 14 तह य होइ दहिवन्ने 15।  
तत्तो य नंदीरुक्खे 16 तिलए 17 चूए 18 असोगे 19 य॥
411. चंपग 20 बउले 21 वेडस 22 धावोडग (? धायइरुक्खे य) 23 सालते<sup>१</sup> 24 चेव।  
नाणुप्पयाय रुक्खे जिणेहिं एए अणुग्गहिया॥

1. 'सालतेयए चेव' सर्वासु प्रतिषु॥

## हिन्दा अनुवाद

401. प्रथम तीर्थकर ऋषभदेव को प्रथम भिक्षा एक वर्ष के उपरान्त प्राप्त हुआ। शेष तीर्थकरों को दो दिन उपरान्त प्राप्त हुआ।
402. लोकनाथ ऋषभदेव को प्रथम भिक्षा में इक्षुरस प्राप्त हुआ। शेष तीर्थकरों को अमृत रस के समान स्वादिष्ट श्रेष्ठ अन्न और रस से बने पकवान प्राप्त हुए।
- (ऋषभ आदि दस क्षेत्रों के जिनों का केवलज्ञान के समय का प्ररूपण 403-5)
403. भरत क्षेत्रों में तीर्थकर मल्ली, पार्श्व, ऋषभ, श्रेयांस और वासुपूज्य को पूर्वाह्न में केवल ज्ञान प्राप्त हुआ जबकि शेष तीर्थकरों को मध्याह्न में केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई।
404. एरावत क्षेत्रों में चंद्रानन, मरुदेव, अग्निदत्त, युक्तिसेन तथा श्रेयांस देव को पूर्वाह्न में तथा शेष तीर्थकरों को उत्तराह्न में केवल ज्ञान प्राप्त हुआ।
405. दसों क्षेत्रों में इस प्रकार एक ही समय में दस केवली होते हैं तथा दस ही धर्मतीर्थों का निर्देश वीतराग भगवान ने भी किया है।
- (चौबीस जिनों के केवल ज्ञान, भूमि, चैत्य वृक्ष का प्रमाण तथा उनके नाम 406-11)
- 406+407. ऋषभदेव को पुरिमताल में, अरिष्ठनेमि को द्वारावती में, मल्लीनाथ को मनोरम आश्रमपद उद्यान में, वर्द्धमान को ऋजुबाली नदी के तट पर तथा शेष तीर्थकरों को उसी उद्यान में केवल ज्ञान उत्पन्न हो गया, जिनमें वे प्रव्रजित हुए थे।
408. वर्द्धमान का चैत्यवृक्ष बत्तीस धनुष ऊंचा था तथा शेष का चैत्यवृक्ष उनके शरीर से बारह गुणा ऊंचा था।
- 409+411. ये चैत्यवृक्ष हैं जिन्हें क्रमशः तीर्थकरों ने अनुगृहित किया—  
1. न्यग्रोध, 2. सप्तपर्णा, 3. शाल, 4. सरल, 5. प्रियङ्गु, 6. छत्रोध, 7. श्रीष 8. नाग, 9. मालू, 10. प्लक्ष, 11. तेंदू, 12. पाटल, 13. जम्बू, 14. पीपल, 15. दधिपर्ण, 16. नंदीवृक्ष, 17. तिलक, 18. आम, 19. अशोक, 20. चंपक, 21. बकुल, 22. वेतस (बांस), 23. धव और 24. शालवृक्ष।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

(गा. 412- 21. चउव्वीसइजिणाणं केवलसंपत्तिमास-पक्ख-  
तिहि- समयवेला-नक्खत्ता केवलनाणतवो य)

412. नाणुप्पयाय मासा फग्गुण 1 पोसे 2 य कत्तिए 3 पोसे 4।  
चेत्ते 5 चेत्ते 6 फग्गुण 7 फग्गुण 8 चेत्ते 9 य वइसाहे 10।।
413. वइसाह 11 चेत्त 12 वइसाह 13 ऽसाढ 14 फग्गु 15 य  
भद्दवय 16 चेत्ते 17।  
कत्तिय 18 मग्गसिरे 19 या वइसाहे 20 मग्गसिर 21 ऽसोए 22।।
414. चेत्ते 23 वइसाहे 24 या 'मासेए, अधुण पक्ख वोच्छामि।  
बहुले 1 जोण्हा पंच 2-6 य बहुले अट्ठेव 7-14 य कमेणं।।
415. सुद्धो 15 बहुलो 16 सुद्धा य तिन्नि 17-19 बहुलो 20 य  
सुद्ध 21 बहुलदुगं 22-23।  
सुद्धो 24 य पक्ख एते, एत्तो दिवसे पक्खामि।।
416. एक्कारसि 1 एक्कारसि 2 पंचमि 3 चाउद्दसी 4 य एक्करसी 5।  
पुन्नि 6 छट्ठी 7 पंचमि 8 (पंचमि 9) तह सत्तमी 10 नवमी 11।।
417. बारसि 12 सत्तमि 13 अट्ठमि 14 एक्कारसि 15 सत्तमी ततियवारा 16-18।  
एक्कारसी 19 य अट्ठमि 20 एक्कारसि 21 तह यऽवामासा 22।।
418. तत्तो चउत्थि 23 दसमी 24 कमेण नाणुप्पया (?दिणा) एते।  
वेलाए काए नाणं कस्सुप्पन्नं? इमं सुणसु।।
419. उअमजिणस्स य सेज्जंस वासुपुज्जस्स मल्लि-पासाणं।  
पुव्वण्हे नाणुपया, सेसाणं पच्छिमदिणम्मि।।
420. जे चेव जम्मरिक्खा नाणुप्पत्तीए होंति ते चेव।  
भणिया रिक्खा, एत्तो वोच्छामि तवं समासेणं।।
421. उअमस्स अट्ठमेणं, चउत्थभत्तेण वासुपुज्जस्स।<sup>1</sup>  
केवलनाणुप्पत्ती सेसाणं छट्ठभत्तेणं।।

1. "मासा. एते, अधुना पक्षान् वच्मि" इत्यर्थः।।

## हिन्दी अनुवाद

(चौबीस तीर्थकरों का केवल ज्ञान प्राप्ति मास. पक्ष, तिथि,  
समय, वेला, नक्षत्र और केवल ज्ञान तप)

- 412+414. जिनों के केवल्य प्राप्ति का महीना क्रमशः इस प्रकार है-  
1. फाल्गुन, 2. पौष, 3. कार्तिक, 4. पौष, 5. चैत्र, 6. चैत्र, 7. फाल्गुन,  
8. फाल्गुन, 9. चैत्र, 10. वैशाख, 11. वैशाख, 12. चैत्र, 13. वैशाख,  
14. आषाढ, 15. फाल्गुन, 16. भाद्रपद, 17. चैत्र, 18. कार्तिक,  
19. मार्गशीर्ष, 20. वैशाख, 21. मार्गशीर्ष, 22. आश्विन, 23. चैत्र और  
24. वैशाख। अब उनके केवल ज्ञान प्राप्ति के पक्ष को कहूंगा। प्रथम  
को केवल ज्ञान कृष्णपक्ष में, द्वितीय से छठे तक पांच तीर्थकरों को  
शुक्ल पक्ष में, सातवें से चौदहवें तक आठ तीर्थकरों को कृष्ण पक्ष में,  
पंद्रहवें का शुक्ल पक्ष में, सोलहवें का कृष्ण पक्ष में सत्रहवें से उन्नीसवें  
तक तीन को शुक्ल पक्ष, बीसवें को कृष्ण पक्ष में, इक्कीसवें को शुक्ल  
पक्ष में, बाइसवें और तेइसवें को कृष्णपक्ष में और चौबीसवें को शुक्ल  
पक्ष में प्राप्त हुआ। अब उनकी केवल्य प्राप्ति के दिन सुनिए।
- 416+418. इन तीर्थकरों को केवलज्ञान प्राप्ति की तिथि क्रमशः हैं-  
1. एकादशी, 2. एकादशी, 3. पंचमी, 4. चतुर्दशी, 5. एकादशी,  
6. पूर्णिमा, 7. षष्ठी, 8. पंचमी, 9. पंचमी, 10. सप्तमी, 11. नवमी,  
12. द्वादशी, 13. सप्तमी, 14. अष्टमी, 15. एकादशी, 16. सप्तमी,  
17. सप्तमी, 18. सप्तमी, 19. एकादशी, 20. अष्टमी, 21. एकादशी,  
22. प्रतिपदा, 23. चतुर्थी और 24. दसमी। अब किन तीर्थकर को किस  
वेला में केवल ज्ञान प्राप्त हुआ, इसे सुनिए।
419. ऋषभदेव, श्रेयांसनाथ, वासुपूज्य, मल्लीनाथ और पार्श्वनाथ को पूर्वाह्न  
में केवल ज्ञान प्राप्त हुआ जबकि शेष तीर्थकरों को उत्तराह्न में  
इसकी प्राप्ति हुई।
420. तीर्थकरों के जन्म का जो नक्षत्र और उनकी ज्ञान उत्पत्ति का जो  
नक्षत्र था, उसका विवरण कहा गया। अब उनके तप को संक्षेप में कहूंगा।
421. केवल ज्ञान उत्पत्ति के समय ऋषभदेव अष्टम भक्त (वेला) का तप  
कर चुके थे जबकि वासुपूज्य चतुर्थ भक्त और शेष तीर्थकर षष्ठम  
भक्त अर्थात् तैला का उपवास कर चुके थे।

(गा. 422- 47. वित्थरओ समवसरणवण्णणा)

422. उप्पणम्मि अणंते, नट्ठम्मि य छाउमत्थिए नाणे।  
तो देव-दाणविंदा करंति पूयं जिणिंदाणं।।
423. भवणवइ वाणमंतर जोइसवासी विमाणवासी य।  
सव्विड्डीए सपरिसा कासी नाणुप्पयामहिमं।।
424. मणि-कणग-रयणचित्तं भूमीभागं समंतओ सुरभिं।  
आजोयणंतरेणं करंति देवा विचित्तं तु।।
425. मणि-कणग-रयणचित्ते समंतओ तोरणे विउव्वंति।  
सच्छत्त-सालि(ल)भंजिय-मयरद्धयचिंधसंठाणे।।
426. 'बेंटुट्ठाइं (?) सुरभिं जल-थलयं दिव्वकुसुमनीहारिं।  
पयरंति समंतेण दसद्धवन्नं कुसुमवासं।।
427. तत्तो य समंतेणं कालागुरु- कुंदुरुक्कमीसेणं।  
गंधेण मणहरेणं (?च) धूवघडियं विउव्वंति।।
428. उक्किट्ठसीहनाद<sup>3</sup> कलयलसद्देण सव्वओ सव्वं।  
तित्थगरपायमूले करंति देवा निवयमाणा।।
429. अब्भंतर-मज्झ-बहिं विमाण-जोइसिय-भवणवासिकया।  
पागारा तिन्नि भवे रयणे कणगे य रयए य।।
430. मणि-रयण-हेमया वि य कविसीसा, सव्वरयणिया दारा।  
सव्वरयणामय च्चिय पडाग-धय-तोरणविचित्ता।।

1. बिंटाइं हं0 की0। " बेंटुट्ठाइं" आवश्यकनिर्मुक्तौ गा. 546, पदस्यास्य हारिभद्रीयवृत्तिर्यथा-"वृन्तस्थायि"।।  
2. उक्किट्ठसी0 सं0।।  
3. 0नाए हं0 की0।।

(समवसरण का विस्तृत वर्णन)

422. छद्मस्थ यानि संशयात्मक ज्ञान के नष्ट होने और अनन्त केवल ज्ञान के उत्पन्न होने पर देवता तथा दानव जिनेन्द्रों की पूजा करते हैं।
423. भवनपति, वाणव्यंतर देव, ज्योतिष्कवासी तथा विमानवासी देव संपूर्ण वैभव तथा अपनी परिषदों के साथ ज्ञान उत्पत्ति का महोत्सव मनाते हैं।
424. केवलज्ञान उत्पत्ति स्थल के चारो ओर एक योजन की परिधि में सभी देवता मिलकर भूमिखंड को मणि, सुवर्ण, अपूर्व रत्न आदि से चित्रित कर सुगन्धियों से सुगंधित कर अदभुत बना दिया।
425. देवगण मणि, सुवर्ण, रत्न, से तोरणद्वारों की रचना करते हैं। उस भूमि को चारो ओर जगह-जगह छत्री, पुतलियों तथा कामदेव की आकृतियों से शोभित कर देते हैं।
426. इसके बाद वे आगत देवगण केवलज्ञान उत्पत्ति स्थल के चारो ओर एक योजन की परिधि में पांच प्रकार के फूलों की वर्षा करते हैं। इसके साथ ही वे समवसरण भूमि को जल और स्थल दोनों भागों में उत्पन्न हुए डंठलों पर पत्तों पर परम सुगंधित दिव्यों कुसुकी की निर्हारी बना देते हैं। यानी समस्त वायुमंडल फूलों की सुगंधि से वासित हो जाता है।
427. फिर वे आगत देवगण चारो तरफ कृष्णागुरु, कुंदरुक मिश्रित मनोहर सुगन्धि से युक्त धूप पात्रों को रखते हैं और उन्हें प्रज्वलित कर देते हैं।
428. देवगण तीर्थकरों के चरण कमल को प्रणाम करते हैं और हर्षातिरेक से सिंहनाद करते हैं। इस कलकल निनाद से दसों दिशाएं गूंजायमान हो उठती हैं।
429. विमानवासी, ज्योतिष्कवासी तथा भवनवासी देवों द्वारा निर्मित क्रमशः भीतरी, बीचवाली और बाहरी- तीनों प्राकार रत्न सुवर्ण तथा चांदी के होते हैं।
430. प्राकार का कपिशौर्ष (अग्रभाग) मणि, रत्न, सुवर्ण से निर्मित होता है। सभी द्वार सभी रत्नों से युक्त होते हैं। इसी तरह तोरण द्वार और स्वस्तिक आदि विभिन्न शुभ चिन्हों से युक्त ध्वजा-पताकाएं भी सर्वरत्नमय होती हैं।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

431. चेइदुम-पेढ-छंदग-आसण-छत्तं च चामराओ य।  
जं चण्णं करणिज्जं करेति तं वाणमंतरिया।।
432. सूरु (?सूरुद)य पच्छिमाए ओगाहंतीए पुव्वओ एति<sup>1</sup>।  
दोहि पउमेहि पाया मगगेण य होंति सत्ताऽन्ने।।
433. आयाहिण पुव्वमुहो तिदिसिं पडिरूवगा उ देवकया।  
जेट्ठगणी अण्णो वा दाहिणपासे अदूरम्मि।।
434. जे ते देवेहिं कया तिदिसिं पडिरूवगा जिणिंदाणं।  
तेसिं पि तप्पभावा तयाणुरुवं हवइ रूवं।।
435. सीहासणे निसन्ना रत्तासोगस्स हेट्ठओ<sup>2</sup> वीरा।  
सक्का सहेमजाले गेण्हंति सयं तु छत्ताइं।।
436. हो होंति चामराओ सेयाओ मणिमएहिं दंडेहिं।  
ईसाण-चमरसहिया धरेति ते जिणवरिंदाणं।।
437. तित्थाइसेस संजय, देवी वेमाणियाण, समणीओ।  
भवणवइ-वाणमंतर-जोइसियाणं च देवीओ।।
438. केवलिणो तिउण जिणे तित्थ<sup>3</sup> पणामं च मग्गओ तेसिं।  
मुणिमादी वि नमंता वयंति सट्ठाणसट्ठाणं।।
439. भवणवती जोइसिया बोधव्वा वाणमंतरसुरा य।  
वेमाणिया य मणुया पयाहिणं जं च निस्साए।।
440. पविसंति स-महियंदा उत्तरदारेण कप्पवासिसुरा।  
राया नर-नारिगणा जे वि य देवा वणयरारणं।। \*गयमुत्तरदारं।।

1. तेति सं० की०।।  
2. हिदिठआ ह० की०।।  
3. ०पमाणं च प्रतिपाठ.।।  
4. पगयो ह० की०।।

## हिन्दी अनुवाद

431. व्यान्यन्तर देव (भीतरी प्राकार के बीचोंबीच) चैत्यवृक्ष, पीठ, देवछंदक, सिंहासन, छत्र, चामर तथा अन्य करने योग्य कार्यों को करते हैं।
432. (समोवसरण की रचना पूर्ण हो जाने के बाद) सूर्योदय होने पर आमतौर पर प्रथम पौरुषी में और कभी पश्चिम पौरुषी की वेला में तीर्थकर पूर्व द्वार प्रवेश करते हैं। उनके दोनों पैरों के नीचे दो कमल फूल होते हैं। मार्ग में और सात कमल होते हैं (जिन्हें देवगण तीर्थकरों के पैरों के नीचे रखते जाते हैं)।
433. वे (तीर्थकर अशोक वृक्ष की) प्रदक्षिणा कर पूर्व दिशा की ओर मुंह करके बैठते हैं। शेष तीन दिशाओं में देवताओं द्वारा किये गये उनके प्रतिबिम्ब प्रादुर्भूत होते हैं। ज्येष्ठ गणधर एवं अन्य गणधर उनके दाहिने पार्श्व में नजदीक बैठते हैं।
434. देवताओं द्वारा तीन दिशाओं में जो जिन प्रतिबिम्ब बनाए गए उनके रूप भी तीर्थकरों के प्रभाव से तथानुरूप हो जाते हैं।
435. लाल अशोक वृक्ष के नीचे अवस्थित सिंहासन पर जिनदेव बैठते हैं। शक्र स्वर्णजाल से जटित छत्र को अपने हाथ में लेकर खड़े होते हैं।
436. मणिमय दंड से युक्त दो श्रेष्ठ चामर होते हैं जिसे ईसाणेन्द्र और चमरेन्द्र उन जिनों पर अपने हाथ से डुलाते रहते हैं।
- 437+438. शेष तीर्थ अर्थात् श्रमण, श्रमणी, श्रावक, श्राविका तथा विमानवासी देवियां, भवनपति, व्यान्यन्तर, ज्योतिष्क वासी देव तथा उनकी देवियां, केवली तथा मुनि आदि केवलज्ञान, दर्शन और चारित्र्य से युक्त जिनों के तीर्थ को सिर झुकाकर प्रणाम करते हैं और अपने लिए नियम स्थानों पर जाकर बैठ जाते हैं।
439. भवनपति, ज्योतिष्क, व्यान्यन्तर, वैमानिक देव तथा मनुष्य भी अपने-अपने लिए नियम द्वारा से प्रवेश कर प्रदक्षिणा कर नियत स्थानों पर बैठ जाते हैं।
440. कल्पवासी देव, राजा, नर-नारी समूह तथा जो भी नगर के देव हैं, वे महेन्द्र के साथ उत्तर द्वार से प्रवेश करते हैं। (उत्तर स्थित द्वार)

### तित्थोगाली प्रकीर्णक

441. कप्पवइअंगणाओ अणगारा वि य पुरत्थिमिल्लेणं।  
पविसंती नाणामणिकिरणोदारेण दारेणं॥ पुव्वदारं॥
442. आगच्छंती अइसुंदरेण दारेण दक्खिणणेणं तु।  
भवणवइ-वाणमंतर-जोइसियाणं च देवीओ॥ दक्खिणदारं॥
443. जे भवणवई देवा अवरददारे तओ (?य) पविसंति।  
तेणं चिय जोइसिया देवा दइयाजणसमग्गा॥ पच्छिमदारं॥
444. एक्केक्कीय दिसाए तिगं तिगं होइ सन्निविट्ठं तु।  
आइ-चरिमे विमिस्सा थी-पुरिसा सेस पत्तेयं॥
445. 'एतं महिड्डियं पणिवयंति ठियमवि वयंति पणमंता।  
न वि जंतणा, न विकहा, न परोप्परमच्छरो, न भयं॥
446. बीयम्मि होंति तिरिया, तइए पागारमंतरे जाणा।  
पागारजढे तिरिया वि हुंति पत्तेय मिस्सा वा॥
447. तित्थपणामं काउं कहेइ साहारणेण सद्देणं।  
सव्वेसिं सन्नीणं जोयणनीहारिणा भयवं॥

(गा. 448-51. दसखेत्तसमुद्भूयउसभाइजिणसमए पडिक्कमण-  
संजमभेदाइपरुवण)

448. सपडिक्कमणो धम्मो पुरिमस्स य पच्छिमस्स य जिणस्स।  
मज्झिमयाण जिणाणं कारणजाए पडिक्कमणं॥

1. पत्तं म० प्रतिपठः॥

### हिन्दी अनुवाद

441. कल्पवासी देवों की पत्नियां तथा अन्य साधुगण, नाना प्रकार के मणि-किरणों से भूषित पूर्व स्थित सिंहद्वार से प्रवेश करते हैं। (पूर्व द्वार)
442. भवनपति, व्यानव्यंतर, ज्योतिष्क देवों की पत्नियां तथा श्रेष्ठ सुंदरियां दक्षिण द्वार से प्रवेश करती हैं। (दक्षिण द्वार)
443. तब भवनपति देवगण तथा अपने प्रियजनों के साथ ज्योतिष्क देव पश्चिम द्वार से प्रवेश करते हैं। (पश्चिम द्वार)
444. (उपरोक्त चारों दिशाओं में से) एक-एक दिशा में तीन-तीन वर्ग के देवता एकत्र होते हैं। इनमें पहले और अंतिम वर्ग में सम्मिलित रूप से स्त्री और पुरुषों का वर्ग होते हैं जबकि शेष दो में से एक में केवल स्त्री और दूसरे में केवल पुरुष ही होते हैं।
445. इस प्रकार (समवसरण में बाद में आनेवाले) कम ऋद्धि वाले देवता तथा मनुष्य वहां पहले से पहुंचे महान ऋद्धिवाले देवता व मनुष्यों को प्रणाम करते हैं। यहां पर न तो किसी से किसी को कोई द्वेष हाता है, न कोई भय। यहां आए हुए देव, मनुष्य आपस में किसी प्रकार की विकथा आदि भी नहीं कहते हैं।
446. द्वितीय कोटे के प्राकार में तिर्यच यानि पशु-पक्षी होते हैं और तीसरे प्राकार में देवों और मनुष्यों के यान-विमान होते हैं। प्राकार से अलग भी तिर्यच योनिवाले या देव और मनुष्य योनि के प्राणि कभी अलग-अलग या कभी मिश्रित रूप में भी बैठते हैं।
447. इसके बाद तीर्थ को प्रणाम कर भगवान योजन भर में उपस्थित सभी संज्ञी प्राणियों को बोधगम्य सहज-साधारण शब्दों में अपनी देशना देते हैं।

(दस क्षेत्रों के ऋषभ आदि जिनों के समय में प्रतिक्रमण, संयम भेद आदि का प्ररूपण)

(गा. 448-51. दस क्षेत्रों में उत्पन्न ऋषभ आदि जिनों का  
जिनसमय, प्रतिक्रमण-संजमभेदादि प्ररूपण)

448. प्रथम और अंतिम तीर्थकर के समय प्रतिक्रमण आवश्यक धर्म होता है। मध्यवर्ती तीर्थकरों के समय कारण उत्पन्न होने पर प्रतिक्रमण करने की आवश्यकता होती है।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

449. जो जाहे आवज्जइ साहू अण्णयरगम्मि ठाणमि।  
सो ताहे पडिक्कमई मज्झिमयाणं जिणवराणं।।
450. बावीसं तित्थयरा सामाइयसंजमं उवदिसंति।  
छेओवठावणं पुण वयंति उसभो य वीरो य।।
451. एवं नवसु वि खेत्तेसु पुरिम-पच्छिम(ग)- मज्झिमजिणाणं।  
वोच्छं गणहरसंख जिणाण, नामं च पढमस्स।।

### (गा. 452- 64. चउव्वीसइजिणाणं गणहरा)

452. उसमजिणे चुलसीती(य) गणहरा उसभसेणआदीया 1।  
अजियजिणिंदे नउतिं तु, सीहसेणो भवे आदी 2।।
453. चारु य संभवजिणे, पंचाणउती य गणहरा तस्स 3।  
पढमो य वज्जनाभो अभिनंदण, तियऽधिकसयं तु।।
454. सोलसयं सुमइस्स उ, चमरो चिय पढमगणहरो तस्स 5।  
१सज्जो य सुप्पमजिणे, सयमेक्कारं गणहराणं 6।।
455. होइ सुपास वियभो, पंचाणउती य गणहरा तस्स 7।  
दिण्णो य पढमसिस्सो, तेनउई हुंति चंदाभे 8।।
456. सुविहिजिणे वाराहो, चुलसीतिं गणहरा भवे तस्स 9।  
२चंदो य सीयलजिणे, एक्कासीतिं मुणेयव्वा 10।।
457. सेज्जसे सत्तत्तरि, पढमो सिस्सो य गोत्थुभो होइ 11।  
३छावट्ठी य ४सुभूमो बोधव्वा वासुपुज्जस्स 12।।
458. विमलजिणे छप्पन्ना गणहर, पढमो य मंदरो होइ 13।  
पण्णासाऽणंतजिणे, पढमस्सिस्सो जसो नाम 14।।

1. अत्र समवायां 'सुव्वय' पाठान्तरे च 'सुज्जय' इत्यस्ति।।  
2. अत्र समवायां 'आणंदो' इत्यस्ति।।  
3. बावट्ठी हं की०।।  
4. अत्र समवायां 'सुहम्मे' इत्यस्ति।।

## हिन्दी अनुवाद

449. मध्यवर्ती तीर्थकरों के समय में जब किसी साधु द्वारा ऐसा कार्य हो जाता जो उसके लिए वर्ज्य हो तभी वह साधु अन्यतर स्थान (गुणस्थान की श्रेणी से च्युत होने) में जाने के उस दोष का प्रतिक्रमण कर लेते।
450. मध्यवर्ती बाईस तीर्थकरों ने सामयिक संयम का उपदेश दिया। अर्थात्, अहिंसा, सत्य, सत्य, अस्तेय और अपरिग्रह का ही उपदेश दिया। लेकिन प्रथम तीर्थकर ऋषभ तथा अंतिम तीर्थकर महावीर ने छेदोपस्थानिक (पूर्व पर्याय को छेद कर अपनी आत्मा को पंचम महाव्रत रूपी चारित्र में उपस्थापन करनेवाला) संयम यानी, ब्रह्मचर्य का भी उपदेश उसमें जोड़ दिया।
451. इसी प्रकार शेष नौ क्षेत्रों के आदि, मध्य और अंतिम तीर्थकरों के काल में होता है। अब जिनों के गणधरों की संख्या और प्रमुख गणधरों के नाम कहता हूँ। (चौबीस तीर्थकरों के गणधर)

### (गा. 452- 64. चौबीस जिनों के गणधर)

452. प्रथम तीर्थकर ऋषभदेव के ऋषभसेन प्रमुख 84 गणधर थे। द्वितीय अजितनाथ के सिंहसेन प्रमुख 90 गणधर थे।
453. तृतीय सयम्भवदेव के चारुदत्त प्रमुख 105 गणधर तथा चतुर्थ अभिनंदन जिनदेव के वज्रनाभ प्रमुख 103 गणधर थे।
454. पांचवें सुमतिनाथ के चामर प्रमुख 116 गणधर और छठे सुप्रभनाथ के सद्य प्रमुख 111 गणधर थे।
455. सातवें सुपार्श्वनाथ के वैदर्भ प्रमुख 95 गणधर तथा आठवें चन्द्रप्रभ के दिन्न प्रमुख 93 गणधर थे।
456. नौवें सुविधिनाथ के वाराह प्रमुख 84 गणधर हुए और दसवें शीतलनाथ के नंद प्रमुख 81 गणधर जानना चाहिए।
457. ग्यारहवें श्रेयांसनाथ के कौस्तुभ प्रमुख 77 तथा बारहवें वासुपूज्य के सुभूमि प्रमुख 66 गणधर कहे गए हैं।
458. तेरहवें तीर्थकर विमलदेव के मंदर प्रमुख 56 तथा चौदहवें अनन्तदेव के यश प्रमुख 50 गणधर थे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

459. धम्मस्स होइ रिट्ठो, तेयालीसं च गणहरा तस्स 15।  
चक्काउधो य पढमो, चत्तालीसा य संतिजिणे 16।।
460. कुंधुस्स भवे 'संबो, सत्तत्तीसं च गणहरा तस्स 17।  
कुंभो य अरजिणिंदे, तेत्तीसं गणहरा तस्स 18।।
461. भिसगो मल्लिजिणिंदे, अट्ठावीसं च गणहरा तस्स 19।  
मुणिसुव्वयस्स मल्ली, अट्ठारस गणहरा तस्स 20।।
462. सुंभो नमिजिणवसभे, एक्कारस गणहरा चरिमदेहा 21।  
नेमिस्स वि अट्ठारस, गणहर पढमो य वरदत्तो 22।।
463. पासस्स अज्जदिण्णो पढमो अट्ठेव गणहरा भविया 23।  
जिणवीरे एक्कारस, पढमो से इंदभूर्इ उ 24।।
464. गणहरसंखा भणिया जन्नामो पढमगणहरो जस्स।  
एत्तो सीसिणिनामा उसभादीणं तु वोच्छामि।।
- (गा. 465-70. चउव्वीसइजिणाणं सिस्सिणीओ)**
465. उसमस्स होइ बंभी 1 फग्गू अजियस्स 2 संभवे सम्मा 3।  
अभिनंदणस्स अजिया 4 कासवि सुमतीजिणिंदस्स 5।।
466. पउमप्पभस्स तु रती 6 सोम सुपासस्स पढमसिस्सिणि 7 य।  
चंदप्पभस्स सुमणा 8 वारुणि सुविहिस्स जेट्ठज्जा 9।।
467. सीयलजिणस्स सुजसा 10 सेज्जंसजिणस्स धारिणी पढमा 11।  
धरणी य वासुपुज्जे 12 धरा य विमलस्स जेट्ठज्जा 13।।
468. पउमा अणंतइजिणे 14 सिवा य धम्मे 15 सुती य संतिस्स 16।  
कुंधुस्स दामिणी खलु 17 जेट्ठज्जा रक्खिय अरस्स 18।।

1. अत्र समवायांगे 'संभु' इत्यस्ति।।
2. मल्ली स्थाने समवायांगे 'इंद' इत्यस्ति।।
3. 'सुंभ' स्थाने समवायांगे 'कुंभे' इत्यस्ति।।
4. 'अज्जदिण्णो' स्थाने स्थानांगे 'सुभ' इत्यस्ति, समवायांगे 'दिण्णे' इत्यस्ति।।
5. होइ वग्गू फग्गू हं० की०।।
6. 'अजिया' स्थाने 'अतिराणी' इति समवायांगे, आगमोदयसमिति प्रकाशितावृत्तौ तु 'अजिया' इत्यस्ति।।
7. सुलसा समवायांगे।।
8. दामिणी स्थाने 'अजु' समवायांगे।।

## हिन्दी अनुवाद

459. पंद्रहवें धर्मनाथ के अरिष्ठ प्रमुख 43 गणधर थे, सोलहवें तीर्थकर शांतिनाथ के चक्रायुध प्रमुख 40 गणधर थे।
460. सत्रहवें कुंधुनाथ के संब प्रमुख 37 गणधर तथा अठारहवें अरनाथ के कुंभ प्रमुख 33 गणधर थे।
461. उन्नीसवें तीर्थकर मल्लीनाथ के भिषक प्रमुख 28 गणधर थे, बीसवें मुनि सुव्रतनाथ के मल्ली प्रमुख 18 गणधर थे।
462. एककीसवें नमिनाथ के शुम्भ प्रमुख 11 चरमशरीरी गणधर थे और बाइसवें नेमिनाथ के वरदत्त प्रमुख 18 गणधर थे।
463. तेइसवें पार्श्वनाथ के आर्यदत्त प्रमुख 8 गणधर हुए तथा चौबीसवें महावीर स्वामी के इन्द्रभूति प्रमुख 11 गणधर थे।
464. जिन तीर्थकर के जो प्रथम गणधर थे, उनके नामों सहित उनके गणधरों की संख्या का वर्णन किया। अब ऋषभदेव आदि की शिष्याओं का वर्णन करता हूँ।

### (चौबीसों तीर्थकरों की शिष्याएं)

- 465+470. पहले तीर्थकर ऋषभदेव की शिष्या ब्राह्मी, दूसरे अजितनाथ की फल्गू, तीसरे सयंभवनाथ की सरमा, चौथे अभिनंदन की अजिता, पांचवें सुमतिनाथ की काश्यपि, छठे पद्मप्रभा की रति, सातवें सुपार्श्व की सोमा, आठवें चन्द्रप्रभ की सुमना, नौवें सुविधिनाथ की वारुणि, दसवें शीतलनाथ की सुयशा, ग्यारहवें श्रेयांसनाथ की धारिणी, बारहवें वासुपूज्य की धारिणी, तेरहवें विमलसेन की धारा, चौदहवें अनन्तदेव की पद्मा, पंद्रहवें धर्मनाथ की शिवा, सोलहवें शांतिनाथ की श्रुति, सत्रहवें कुंधुनाथ की दामिनी, अठारहवें अरनाथ की यक्षिता, उन्नीसवीं मल्लीनाथ की बंधुमती, बीसवें मुनि सुव्रतनाथ की पुष्पवती, इक्कीसवें नमिनाथ की अनिला, बाइसवें अरिष्ठनेमि की यक्षदीति, तेइसवें पार्श्वनाथ की पुष्पचूला तथा चौबीसवें महावीर प्रभु की प्रथम शिष्या चन्दना थीं। इस प्रकार तीर्थकरों की प्रथम शिष्याओं के नामों का यहां उल्लेख किया।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

469. बंधुमती मल्लिस्स उ 19 मुणिसुव्वयजिणवरस्स पुप्फवती 20।  
अणिला य नमिजिणे 21 जक्खदिण्ण तहऽरिट्ठनेमिस्स 22।।
470. पासस्स पुप्फचूला 23 वीरजिणिंदस्स चंदणऽज्जा उ 24।  
एयाओ पढमाओ वक्खाया सिस्सिणीओ उ।।

### (गा. 471 -95. चउव्वीसइजिणाणं सीसपरिवारो समकालरायाणो माया-पियरो य)

471. तित्थयराणं सीसे वोच्छामि थुईसहस्सपरिणीए।  
राया जो तम्मि जुगे अहेसि पिति<sup>1</sup>-मायरो अह वा।।
472. चुलसीतिसहस्साइं उसमजिणिंदस्स सीसपरिवारो।  
भरहमहियस्स धणियं मरुदेवी-नाभितणुयस्स 1।।
473. एगं तु सयसहस्सं अजियजिणिंदस्स सीसपरिवारो।  
सगरमहियस्स धणियं विजया-जियसत्तुपुत्तस्स 2।।
474. दो चेव सयसहस्सा सीसाणं आसि संभवजिणस्स।  
मित्तविरियत्थुयस्सा सेणाए-जियारितणयस्स 3।।
475. तिन्नेव सयसहस्सा अभिनंदणजिणवरस्स सीसाणं।  
सव्वविरियत्थुयस्सा सिद्धत्था-संवरसुयस्स 4।।
476. तिन्नेव सयसहस्सा वीससहस्सा य आसि सुमइस्स।  
जियसेणपणमियस्सा सुमंगला<sup>2</sup>-<sup>3</sup>मेहतणयस्स 5।
477. तिण्णेव सयसहस्सा तीससहस्सा य आसि पउमाभे।  
दाणविरियत्थुयस्स उ सुसीम-धररायतणय<sup>4</sup>स्स 6।।
478. तिन्नेव सयसहस्सा सीसाणं आसि जिणसुपासस्स।  
धम्मविरियत्थुयस्स पुहईए-<sup>5</sup>पइट्ठतणयस्स 7।।
479. चंदप्पहस्स सीसा अड्ढाइज्जा य सयसहस्साइं।  
मघवमहियस्स धणियं लक्खण-महसेणतणय<sup>6</sup>स्स 8।।

1. पिय-मा० हं० की०।।

2. ला-सीह० हं० की०।।

3. ०तणुय० हं० की०।।

4. ०तणुय० हं० की०।।

5. ०पयट्ठ० सं०।।

6. ०तणुय० हं० की०।।

## हिन्दी अनुवाद

### (चौबीस तीर्थकरों के शिष्य परिवार, समकालीन राजा और तीर्थकरों के माता-पिता)

471. नियमपूर्वक हजार स्तुतियों का जाप करते हुए आगे तीर्थकरों के शिष्यों का वर्णन तथा उनके समय के राजा व उनके माता-पिता का वर्णन करता हूँ।
472. संपूर्ण पृथ्वी के स्वामी भरत के राज्यकाल में मरुदेवी और नाभिराय के पुत्र प्रथम तीर्थकर ऋषभदेव के 84,000 शिष्य परिवार थे।
473. संपूर्ण पृथ्वी के स्वामी सगर के राज्यकाल में विजया और जितशत्रु के पुत्र दूसरे तीर्थकर अजितदेव के 1,00,000 शिष्य परिवार थे।
474. चारों ओर फैले यशवाले राजा मित्रवीर्य के राज्यकाल में सेना और जितारि के पुत्र तीसरे तीर्थकर सयंभवनाथ के 2,00,000 शिष्य परिवार थे।
475. विस्तीर्ण यशवाले सर्ववीर्य राजा के काल में संवर और सिद्धार्थ के पुत्र चौथे तीर्थकर अभिनंदन देव के 3,00,000 शिष्य परिवार थे।
476. जितसेन राजा जिनको प्रणाम करते हैं, उन सुमंगला और मेघप्रभ के पुत्र पांचवें तीर्थकर सुमतिनाथ के तीन लाख बीस हजार शिष्य परिवार थे।
477. विस्तीर्ण यशवाले दानवीर्य राजा के काल में सुशीम और धरराज के पुत्र छठे तीर्थकर पद्यनाथ के तीन लाख तीस हजार शिष्य परिवार थे।
478. चतुर्दिक फैले यशवाले राजा धर्मवीर्य के काल में पृथ्वी और प्रतिष्ठ के पुत्र सातवें तीर्थकर सुपार्श्वनाथ के तीन लाख शिष्य परिवार थे।
479. संपूर्ण पृथ्वी के स्वामी मघव के काल में लक्ष्मणा और महासेन के पुत्र आठवें तीर्थकर चन्द्रप्रभ के दो लाख पचास हजार शिष्य परिवार थे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

480. दो चेव सयसहस्सा सीसाणं होंति पुष्पदंतस्स ।  
जुद्धविरियत्थुयस्सा रामा-सुग्गीवपुत्तस्स 9 ।
481. एगं तु सयसहस्सं सीसाणं आसि सीयलजिणस्स ।  
सीमंधरमहियस्स उ नंदाए दढरहसुयस्स 10 ॥
482. चुलसीतिसहस्साइं सेज्जंसजिणस्स सीसपरिवारो ।  
तिविट्ठुमहियस्स तहा विन्हाए<sup>1</sup>-विन्हुपुत्तस्स 11 ॥
483. बावत्तरिं सहस्सा सीसाणं आसि <sup>2</sup>वासुपुज्जस्स ।  
दुविट्ठमहियस्स तहा जयाए<sup>3</sup> वसुपुज्जपुत्तस्स 12 ॥
484. अट्ठट्ठिसहस्साइं विमलजिणिंदस्स सीसपरिवारो ।  
पणयस्स संभवनिवा कयवम्मा-सम्मतणयस्स 13 ॥
485. छावट्ठिसहस्साइं सीसाणं आसि गंतइजिणस्स ।  
पुरिसोत्तममहियस्स य सुजसाए-सीहतणयस्स 14 ॥
486. चउसट्ठिसहस्साइं धम्मजिणिंदस्स सीसपरिवारो ।  
महियस्स पुरिससीहेणं सुब्बय<sup>4</sup>-भाणूण तणयस्स 15 ॥
487. बावट्ठिसहस्साइं संतिजिणिंदस्स सीसपरिवारो ।  
नारायणमहियस्स य अइराए-वीससेणस्स 16 ॥
488. सट्ठिं तु सहस्साइं कुंथुजिणिंदस्स सीसपरिवारो ।  
कोणालगमहियस्स य सिरीए सूरस्स य सुयस्स 17 ॥
489. पण्णासं तु सहस्सा सीसाणं आसि अरजिणिंदस्स ।  
पणयस्स सुभूमेणं देवीए-सुदरिसणसुयस्स 18 ॥
490. चत्तालीससहस्सा मल्लिजिणिंदस्स सीसपरिवारो ।  
अजियंजियमहियस्स य पभावती- कुंभपुत्तस्स 19 ॥
491. मुणिसुब्बयस्स तीसं साहस्सीओ अहेसि सीसाणं ।  
विजयस्सयनमियस्स य सुमित्त-पउमावइसुयस्स 20 ॥
492. वीसं साहस्सीओ सीसाणं नमिजिणिंदपरिवारो ।  
जीवगरायनयस्सा वप्पाए-विजयतणयस्स 21 ॥

1. विन्हाए-विन्हुओ हंओ कीओ ॥

2. वासुओ प्रतिपाठः ॥

3. कायाए वासुपुज्जस्स ॥ प्रतिपाठः ॥

4. 0य भाणयतओ संओ । 0य भण्णयतओ हंओ कीओ । मूलस्थः पाठोऽत्र समवायांगपाठानुसारेण परिकल्पितोऽस्ति ॥

## हिन्दी अनुवाद

480. संपूर्ण विश्व में यशस्वी युद्धवीर्य के काल में रामा और सुग्रीव के पुत्र नौवें तीर्थंकर पुष्पदंत के दो लाख शिष्य परिवार थे ।
481. संपूर्ण पृथ्वी के स्वामी सीमंधर राजा के काल में नंदा और दृढरथ के पुत्र दसवें तीर्थंकर शीतलनाथ के एक लाख शिष्य परिवार थे ।
482. नारायण राजा त्रिपृष्ठ के काल में विष्णुश्री और विष्णु के पुत्र ग्यारहवें तीर्थंकर श्रेयांस के चौरासी हजार शिष्य परिवार थे ।
483. दुपृष्ठ नारायण के समय जया और वसुपूज्य के पुत्र बारहवें तीर्थंकर वासुपूज्य के बहत्तर हजार शिष्य परिवार थे ।
484. प्रणत सयंभव वासुदेव राजा के काल में कृतवर्मा और शर्मा के पुत्र तेरहवें तीर्थंकर के 88 हजार शिष्य परिवार थे ।
485. वासुदेव पुरुषोत्तम के काल में सुयशा और सिंह के पुत्र चौदहवें तीर्थंकर अनंतनाथ के 66 हजार शिष्य परिवार थे ।
486. वासुदेव राजा पुरुषसिंह के समय में सुव्रता और भानू के पुत्र पंद्रहवें तीर्थंकर धर्मनाथ के 64,000 शिष्य परिवार थे ।
487. नारायण राजा के काल में ऐरा और विश्वसेन के पुत्र सोलहवें तीर्थंकर शातिनाथ के 62,000 शिष्य परिवार थे ।
488. कुणाल राजा के काल में श्री और सूर के पुत्र सत्रहवें तीर्थंकर कुंथुनाथ के 60,000 शिष्य परिवार थे ।
489. प्राणत राजा सुभौम के काल में देवी और सुदर्शन के पुत्र अठारहवें तीर्थंकर अरनाथ के पचास हजार शिष्य परिवार थे ।
490. अजीतंजय राजा के काल में प्रभावती और कुंभ की पुत्री उन्नीसवीं तीर्थंकर मल्लीनाथ के चालीस हजार शिष्य परिवार थे ।
491. विजय और नमि राजा के काल में सुमित्र और पद्मावती के पुत्र बीसवें तीर्थंकर मुनि सुव्रत के तीस हजार शिष्य परिवार थे ।
492. जीवकराज राजा के काल में वप्रा और विजय के सुपुत्र इक्कीसवें तीर्थंकर नमिनाथ के बीस हजार शिष्य परिवार थे ।

### तित्थोगाली प्रकीर्णक

493. अट्टारस य सहस्सा सीसाणं आसि रिट्ठनेमिस्स ।  
कन्हेण पणमियस्स य सिवा-समुद्दाण तणयस्स 22 ।।
494. सोलस साहस्सीओ पासजिणिंदस्स सीसपरिवारो ।  
महियस्स पसेणइणा सुयस्स वम्मा-SSससेणस्स 23 ।।
495. चोद्दस साहस्सीओ सीसाणं आसि बड्ढमाणस्स ।  
सेणियरायनयस्सा तिसिला- सिद्धत्थतणयस्स 24 ।।

### (गा. 496- 526. चउव्वीसइजिणाणं अंतराईं नयरीओ य)

496. ओसपिणीइमीसे जिणंतरसमुट्ठिण कालेणं ।  
वोच्छामि चउव्वीसं अरहंते भारहे वासे ।।
497. तइयसमापरिनिव्वुयतिवासअद्धनवमाससेसम्मि ।  
'उसभजिणरायखत्तिय जिणवंसपगट्टवणियाए ।।
498. उसभाओ उप्पणं पण्णासाकोडिसयसहस्सेहिं ।  
तं सागरोवमाणं अजियजिणिंदं विणीयाओ ।।
499. तीसाए सागरोवमकोडिसयसहस्सअंतरुप्पणं ।  
अजियाओ संभवजिणं सावत्थीए वियाणाहि ।।
500. दसकोडि (सय) सहस्साइं अंतरं जस्स उदहिनामाणं ।  
तं संभवाओ अभिणंदणं विणीयाए उप्पणं ।।
501. नवकोडिसयसहस्साइं अंतरं जस्स उदहिनामाणं ।  
अभिणंदणाओ सुमइं उप्पन्नमओ विणीयाए ।।
502. नउती य सागरोवमकोडिसहस्सेहि जो समुप्पण्णो ।  
सुमइंओ पउमाभो सो कोसंबीए नायव्वो ।।
503. पउमाभाओ सुपासं वाणरसिउत्तमं समुप्पणं ।  
तं सागरोवमाणं कोडि<sup>2</sup>सहस्सेहिं नवहिं जिणं ।।
504. कोडिसएहिं नवेहिं उप्पणं चंदपुरवरे रस्से ।  
चंदप्पभं समुद्दोवमाण सिद्धं सुपासओ ।।

1. अत्राSSवष्यकनिर्युक्तौ 'कोसलपुरं' इत्यस्ति, गा. 382 ।।

2. सएहिं प्रतिपाठः

### हिन्दी अनुवाद

493. वासुदेव कृष्ण के समय में शिवा और समुद्र के पुत्र बाइसवें तीर्थकर अरिष्ठनेमि के अठारह हजार शिष्य परिवार थे ।
494. प्रसेनजित राजा के काल में वर्मा और अश्वसेन के पुत्र तेइसवें तीर्थकर पार्श्वनाथ के सोलह हजार शिष्य परिवार थे ।
495. श्रेणिक राजा के काल में त्रिशला और सिद्धार्थ के पुत्र चौबीसवें तीर्थकर वर्द्धमान महावीर के चौदह हजार शिष्य परिवार थे ।

### (चौबीस तीर्थकरों के बीच का अंतराल और उनके नगर)

496. अब एक तीर्थकर के बाद दूसरे तीर्थकर के उत्पन्न होने के बीच के अंतर के माध्यम से इस अवसर्पिणी काल में भरत क्षेत्र में उत्पन्न हुए चौबीस तीर्थकरों के बारे में कहने जा रहा हूँ ।
497. तृतीय आरा की समाप्ति में तीन वर्ष साढ़े आठ मास शेष रहने पर क्षत्रिय कुल, वणिककुल और राजकुल को प्रकट रूप में स्थापित करनेवाले भगवान ऋषभदेव विनीता नगरी में उत्पन्न हुए ।
498. ऋषभदेव के उत्पन्न होने के पचास लाख करोड़ सागरोपम के बाद विनीता नगरी में तीर्थकर अजितनाथ उत्पन्न हुए ।
499. अजितनाथ के उत्पन्न होने के तीस लाख सागरोपम काल पश्चात सयंभवनाथ को श्रावस्ती में उत्पन्न हुआ जानना चाहिए ।
500. सयंभवनाथ के दस लाख करोड़ सागरोपम पश्चात अभिनंदनदेव विनीता नगरी में उत्पन्न हुए ।
501. अभिनंदन के नौ लाख करोड़ सागरोपम बीत जाने पर सुमतिनाथ विनीता नगरी में उत्पन्न हुए ।
502. सुमतिनाथ के नब्बे हजार करोड़ सागरोपम बीत जाने पर कौशाम्बी में पद्मप्रभ को उत्पन्न हुआ जानना चाहिए ।
503. पद्मप्रभ के पश्चात उत्तम वाराणसी नगरी में सुपार्श्व उत्पन्न हुए । इनके बीच का अंतर नौ हजार करोड़ सागरोपम था ।
504. सिद्ध सुपार्श्व के नौ सौ करोड़ सागरोपम बीत जाने पर रमणीय श्रेष्ठ नगरी चन्द्रपुरी में चन्द्रप्रभ उत्पन्न हुए ।

### तित्थोगाली प्रकीर्णक

505. चंदप्पभाओ सुविहिं कुमुद-कमल-मल्लियाधवलदंते।  
कायंदीउप्पणं वियाण नउतीए कोडीहिं।।
506. कोडीहिं नवहिं भदिदलपुरम्मि सीयलजिणं समुप्पणं।  
रयणागरोवमाणं वियाण तं पुप्फदंताओ।।
507. जाणाहि सीयलाओ सेज्जंसं ऊणियाए कोडीए।  
तं सागरोवमाणं सएहि वासेहि य इमेहिं।।
508. छावटिठसयसहस्सा छवीसं खलु भवे सहस्साइं।  
एएहिं ऊणिया खलु मग्गिला कोडि सीहपुरे।
509. सेज्जंस वासुपुज्जं चंपाए सगलचंदसोममुहं।  
चउप्प(प)ण्णा उप्पणं सागरसिरिनामधेज्जाणं।।
510. विमलं च वासुपुज्जा कंपिल्लपुरे विलीणसंसारं।  
तीसाए समुप्पणं सागरसिरिनामधेज्जाणं।।
511. नवहि वियाणसु नवचंपगप्पभं सागरोवम (?सागरा) समुप्पणं।  
तमणंतमउज्जाए विमलाओ गतिगयं विमलं।।
512. चत्तारि अणंतजिणाओ अंतरं जस्स उदहिनामाणं।  
रयणपुरे उप्पणं अप्पड्धिम्मं जिणं धम्मं।।
513. तिहिं सागरोवमेहिं ऊणेहिं गयपुरम्मि संतिजिणं।  
धम्माओ उप्पणं तिहिं च चउभागपलिएहिं।।
514. पल्लिओवमस्स अद्धे संतिजिणाओ य अंतरं होइ।  
गयपुर' उप्पणस्स (उ) कुरुकुलतिलयस्स कुंथुस्स।।
515. पल्लियचउब्भागेण य कोडिसहस्सूणएण वासाणं।  
अरजिणवरं गयपुरे कुंथुजिणाओ समुप्पणं।।
516. मल्लिजिणं महिलाए अराओ एक्कूणवीसमरिहंतं।  
जाणाहि समुप्पणं कोडिसहस्सेण वासाणं।।
517. मल्लिजिणा उप्पणं चउपण्णावाससयसहस्सेहिं।  
मुणिसुक्खयं मुणिवरं हरिवंसकुलम्मि रायगिहे।।

1. ०पुरउ उप्पो प्रतिपाठः।।

### हिन्दी अनुवाद

505. चन्द्रप्रभ के नब्बे करोड़ सागरोपम पश्चात् कुमुद-कमल और मल्लिका सदृश श्वेत दंतवाले सुविधि को काकन्दी में उत्पन्न हुआ जानिए।
506. उस पुष्पदंत भगवान सुविधिनाथ के नौ करोड़ सागरोपम पश्चात् भदिदलपुर में शीतलनाथ भगवान उत्पन्न हुए।
- 507+508. शीतलनाथ से एक करोड़ सागरोपम से सौ सागरोपम 66 लाख 26 हजार वर्ष प्रमाण कम रह जाने के बाद सिंहपुर में श्रेयांसनाथ को उत्पन्न हुआ जानना चाहिए।
509. श्रेयांसनाथ जिनदेव और चंपानगरी में उत्पन्न पूर्णिमा की चंद्र की तरह चन्द्रमुख वासुपूज्य के बीच का अंतर 54 सागरोपम प्रमाण है।
510. वासुपूज्य के 30 सागरोपम समय पश्चात अपने संसार के बंधनों को नष्ट करनेवाले विमलनाथ कांपिल्यपुर में उत्पन्न हुए।
511. विमलनाथ के सिद्धगति प्राप्त होने के नौ सागरोपम पश्चात् नव चंपा के फूल के सदृश शरीर की कांतिवाले अनन्तनाथ को अयोध्या में उत्पन्न हुआ जानिए।
512. अनंत जिन के चार सागरोपम पश्चात अप्रतिहत धर्मवाले अर्थात् जिनके धर्म में कभी व्यवधान नहीं आया, ऐसे धर्म जिनवर रत्नपुर में उत्पन्न हुए।
513. धर्मनाथ के उत्पन्न होने के तीन चौथाई पत्य कम तीन पत्योपम के पश्चात गजपुर में शांतिनाथ उत्पन्न हुए।
514. शांति जिनदेव से आधा पत्योपम के अंतर पश्चात गजपुर में कुरुकुल तिलक कुंथुनाथ का जन्म हुआ।
515. कुंथुनाथ के एक हजार करोड़ वर्ष कम चौथाई पत्योपम पश्चात् गजपुर में ही अर जिनवर उत्पन्न हुए।
516. अरनाथ के एक हजार करोड़ वर्ष पश्चात् मिथिला में उन्नीसवीं तीर्थंकर मल्लीनाथ को उत्पन्न हुआ जानना चाहिए।
517. मल्ली जिन के 54 लाख वर्ष पश्चात् राजगृह में हरिवंश कुल में मुनियों में श्रेष्ठ मुनि सुव्रतनाथ उत्पन्न हुए।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

518. महिलाए नमिजिणिंदं नवनवणीयसुकुमालसव्वंगं ।  
छव्वाससयसहस्सेहिं सुव्वयाओ समुप्पणं ॥
519. वाससयसहस्साणं पंचणहं पुव्ववीरकुलकेउं ।  
सोरियअरिट्ठनेमिं दसारकुलनंदणं जाणे ॥
520. 'तेसीयसहस्सेहिं सएहिं अद्धट्ठमेहिं श्वरिसेहिं ।  
नेमीओ समुप्पणं वाराणसिसंभवं पासं ॥
521. वाससएहिं वियाणह अइढ्ढाइज्जेहिं 'नाइकुलकेउं ।  
पासाओ समुप्पणं कुंडपुरम्मी महावीरं ॥
522. जाव य उसभजिणिंदो जा चेव य वड्ढमाणजिणचंदो ।  
अह सागरोवमाणं कोडाकोडी भवे कालो ॥
523. बायालीससहस्सेहिं ऊणिया वच्छराण जाणाहि ।  
एक्कं कोडाकोडिं उदहिसमाणण माणाणं ॥
524. पुरिम-चरिमेसु अट्ठसु अब्बोच्छिन्नं जिणेसु तित्थं ति ।  
मज्झिमएसु य सत्तसु वोच्छेओ एत्तियं कालं ॥
525. चउभाग चउभागा तिण्णि चउभागा पलियमेगं च ।  
तिन्नेव चउभागा चउत्थभागो चउभागा ॥
526. एवं तु मए भणिया जिणंतरा जिणवरिदचंदाणं ।  
एत्तो परं तु वोच्छं सिद्धिगया जाए वेलाए ॥

1. तेसीसह0 ला0 विना ॥

2. चरिसाओ। ला0 विना ॥

3. नागकु0 ला0 विना ॥

## हिन्दी अनुवाद

518. सुव्रतनाथ के छह लाख वर्ष पश्चात् नवनीत सदृश सर्वांग कोमल नमि जिनदेव मिथिला में उत्पन्न हुए ।
519. अपूर्व वीर कुल के पताका शौर्यवान अरिष्ठनेमि को नमि जिनदेव के पांच लाख वर्ष पश्चात् दशार्हकुल में उत्पन्न हुआ जानना चाहिए ।
520. अरिष्ठनेमि के 83 हजार सात सौ पचास वर्ष पश्चात् वाराणसी में पार्श्वनाथ का जन्म हुआ ।
521. पार्श्वनाथ के 250 वर्ष पश्चात् ज्ञातकुल के पताका भगवान महावीर कुंडलपुर में उत्पन्न हुए थे । ऐसा जानना चाहिए ।
522. जब तक ऋषभदेव विद्यमान थे तब से लेकर जिस समय तक जिनचंद्र वर्द्धमान विद्यमान रहे, अर्थात् ऋषभदेव के निर्वाण से लेकर महावीर के निर्वाण तक के बीच कोडाकोडी सागरोपम काल का अंतर है ।
523. उस काल को एक कोडाकोडी सागरोपम में 42 हजार वर्ष कम जानना चाहिए ।
524. आरम्भ और अंत के आठ-आठ तीर्थकरों का तीर्थ अविच्छिन्न होता है । इसके बीच कोई अंतराल नहीं रहता । बीच के तीर्थकरों के तीर्थ में सात अंतराल होते हैं । अर्थात् इनके तीर्थ इतने काल तक विच्छिन्न होते हैं ।
525. नौवें सुविधिनाथ ओर दसवें शीतलनाथ के बीच एक पत्योपम का चौथा भाग, शीतलनाथ और ग्यारहवें श्रेयांसनाथ के अन्तराल के अंतिमकाल में एक पत्योपम का चौथा भाग, श्रेयांसनाथ और वासुपूज्य जिनदेव के अंतिम समय के बीच एक पत्योपम के चार भागों में से तीन भाग अर्थात् पौन पत्योपम, वासुपूज्य और विमलनाथ के अंत समय के बीच का अन्तराल एक पत्योपम के चतुर्थभाग, विमलनाथ और अनन्तनाथ के अंतिम समय के बीच का अंतराल पौन पत्य, अनन्तनाथ और धर्मनाथ के बीच का अंतराल पाव पत्य और धर्मनाथ तथा शांतिनाथ के अंतिम समय के बीच का अंतराल पाव पत्य जितने काल तक धर्मतीर्थ अर्थात् साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका का विच्छेद हुआ था ।
526. इस प्रकार मैंने जिनवर चन्द्रों के बीच के अंतराल काल को कहा । इसके बाद उनके सिद्धि प्राप्त करने के समय को कहने जा रहा हूँ ।

तित्थोगाली प्रकीर्णक

(गा. 527-54. दसखेत्तसमुब्भूयउसभाइजिणाणं सिद्धि  
गमणनक्खत्ताइ)

527. उसभो य भरहवासे, बालचंदाणणो य एरवए।  
दस वि य उत्तरसाढाहि पूव्वसूरम्मि सिद्धिगया।।
528. अजिओ य भरहवासे, एरवयम्मी सुचंदजिणचंदो।  
रोहिणिजोगे दस वि य सिद्धिगया पुव्वसूरम्मि।।
529. अभिनंदणो य भरहे, एरवए नंदिसेणजिणचंदो।  
दस वि पुणव्वसुजोगे सिद्धिगया पुव्वसूरम्मि।।
530. सुमती य भरहवासे, इसिदिण्णजिणो य एरवएवासे।  
दस वि जिणा उ मघाहिं सिद्धिगया पुव्वसूरम्मि।।
531. भरहे य सुपासजिणो, एरवए सामचंदजिणचंदो।  
दस वि विसाहाजोगे सिद्धिगया पुव्वसूरम्मि।।
532. चंदप्पभो य भरहे, एरवए दीहसेण जिणचंदो।  
दस वि अणुराहजोगे सिद्धिगया पुव्वसूरम्मि।।
533. भरहे य सीयलजिणो, एरवए सव्वई जिणवरिदो।  
दस वि दगदेवयाए सिद्धिगया पुव्वसूरम्मि।।
534. 'भरहे सेज्जंसजिणो, एरवए जुत्तिसेणजिणचंदो।  
दस वि सवणजोएणं सिद्धिगया पुव्वसूरम्मि।।
535. एवमसीति जिणिंदा अट्ठमयट्ठानिट्ठवियकम्मा।  
दससु वि खेत्तेसेए सिद्धिगया पुव्वसूरम्मि।।
536. भरहे य संभवजिणो, एरवए अग्गिसेणजिणचंदो।  
मिगसिरजोगे दस व्ही सिद्धिगया अवरसूरम्मि।।
537. पउमप्पभो य भरहे, वयधारिजिणो य एरवएवासे।  
दस वि मघाजोएणं सिद्धिगया अवरसूरम्मि।।
538. सुविही य भरहवासे, एरवयम्मि य सयाउजिणचंदो।  
दस वि जिणा मूलेणं सिद्धिगया अवरसूरम्मि।।

1. नापलब्धमिदं गाथा (534-35) युगलं कस्मिंश्चिदपि आदर्शं, अनुसन्धानार्थं परिकल्प्यात्र लिखितमिति।।  
2. मी ला० विना।।

हिन्दी अनुवाद

(दस क्षेत्रों में उत्पन्न ऋषभ आदि जिनों के सिद्धिगमन  
नक्षत्र गा. 527-54)

527. भरत क्षेत्रों में ऋषभदेव और ऐरावत क्षेत्रों में बालचन्द्रानन-ये दसों  
जिनदेव उत्तराषाढा नक्षत्र के पूर्वाहन में सिद्धि को प्राप्त हुए।
528. भरत क्षेत्रों में अजितनाथ और ऐरावत क्षेत्रों में सुचन्द्रदेव-ये दसों  
जिनदेव रोहिणी नक्षत्र में पूर्ववेला में सिद्ध क्षेत्र को गए।
529. भरत क्षेत्रों में अभिनंदन और ऐरावत क्षेत्रों में नंदिसेन-ये दसों जिनदेव  
पुनर्वसु नक्षत्र में प्रथम प्रहर में सिद्ध क्षेत्र को गए।
530. भरत क्षेत्रों में सुमतिनाथ और ऐरावत क्षेत्रों में ऋषिदिन्न-ये दसों  
जिनदेव मघा नक्षत्र के प्रातःकाल में सिद्धिगत हुए।
531. भरत क्षेत्रों में सुपाशर्वनाथ और ऐरावत क्षेत्रों में सामचन्द्र-ये दसों  
जिनदेव विशाखा नक्षत्र में प्रातःकाल में सिद्धि को प्राप्त हुए।
532. भरत क्षेत्रों में चन्द्रप्रभ और ऐरावत क्षेत्रों में दीर्घसेन-ये दसों जिनदेव  
अनुराधा नक्षत्र के पूर्वाहन में सिद्धगति को गए।
533. भरत क्षेत्रों में शीतलनाथ और ऐरावत क्षेत्रों में सुव्रतिनाथ-ये दसों  
जिनदेव चन्द्र का उदक देवता के साथ योग होने पर अर्थात् पूर्वाषाढा  
नक्षत्र को योग होने पर पूर्वाहन वेला में सिद्ध गति को प्राप्त हुए।
534. भरत क्षेत्रों में श्रेयांसनाथ और ऐरावत क्षेत्रों में युक्तिसेन जिनवर-ये  
दसों श्रवणा नक्षत्र में पूर्वाहन काल में सिद्धगति को प्राप्त हुए।
535. इस प्रकार अस्सी जिनदेव अपने आठों कर्मों का क्षय कर दसों क्षेत्रों  
से संयमपूर्वक पूर्वाहनकाल में सिद्धगति को प्राप्त हुए।
536. भरत क्षेत्रों में सयंभवदेव तथा ऐरावत क्षेत्रों में अग्निसेन जिनदेव-ये  
दसों मृगशिरा नक्षत्र में अपराहन काल में सिद्धि को प्राप्त हुए।
537. भरत क्षेत्रों में पद्मप्रभ और ऐरावत क्षेत्रों में वज्रधारी-ये दसों जिनदेव  
मघा नक्षत्र में अपराहन काल में सिद्ध हुए।
538. भरत क्षेत्रों में सुविधिनाथ और ऐरावत क्षेत्रों में जिनचन्द्र शतायु-ये  
दसों जिनदेव मूल नक्षत्र में अपराहन काल में सिद्धि को गए।

### तित्थोगाली प्रकीर्णक

539. भरहे य वासुपुज्जो, सेज्जंसजिणो य एरवएवासे।  
दस वि जिणा 'सवणेणं सिद्धिगया अवरसूरम्मि।।
540. एते चत्तालीसं अट्ठमयट्ठाणनिट्ठवियकम्मा।  
दससु वि वासेसेवं सिद्धिगया अवरसूरम्मि।।
541. विमलो य भरहवासे, एरवए सीहसेणजिणचंदो।  
उत्तरभददव दस वी<sup>२</sup> सिद्धिगया पुव्वरत्तम्मि।।
542. भरहे अणंतजिणो, एरवए असंजलो जिणवरिदो।  
रेवइजोगे दस वी सिद्धिगया पुव्वरत्तम्मि।।
543. संती य भरहवासे, एरवए दीह(?देव)सेणजिणचंदो।  
भरणीजोगे दस वी<sup>३</sup> सिद्धिगया पुव्वरत्तम्मि।।
544. कुंथु य भरहवासे, एरवएम्मि य महाहिलोगबलो।  
कित्तिदयजोगे दस वी<sup>३</sup> सिद्धिगया पुव्वरत्तम्मि।।
545. मल्लिजिणिंदो भरहे, मरुदेविजिणो य एरवएवासे।  
रेवइजोगे दस वी<sup>४</sup> सिद्धिगया पुव्वरत्तम्मि।।
546. मुणिसुव्वओ य भरहे, एरवयम्मि य धरो जिणवरिदो।  
सवणेण दस जिणिंदा सिद्धिगया पुव्वरत्तम्मि।।
547. भरहे अरिट्ठनेमी, एरवए अग्गिसेणजिणचंदो।  
दस वि जिणा चित्ताहिं सिद्धिगया पुव्वरत्तम्मि।।
548. पासो य भरहवासे, एरवए अग्गिदत्तजिणचंदो।  
दस वि विसाहाजो सिद्धिगया पुव्वरत्तम्मि।।
549. एवमसीति जिणिंदा अट्ठमयट्ठाणनिट्ठवियकम्मा।  
दससु वि खेत्तेसेए सिद्धिगया पुव्वरत्तम्मि।।
550. धम्मो य भरहवासे, उवसंतजिणो य एरवएवासे।  
दस वि जिणा पुस्सेणं सिद्धिगया अवररत्तम्मि।।

1. समणेणं प्रतिपाठः।। 2. मी सं०। ही हं० की०।।  
3. मी ला० विना।। 4. मी ला० विना।।  
5. समणेणं प्रतिपाठः।। 6. ०ट्ठनेमि प्रतिपाठः।।

### हिन्दी अनुवाद

539. भरत क्षेत्रों में वासुपूज्य और ऐरावत क्षेत्रों में श्रेयांसदेव—ये दसों जिनदेव श्रवणा नक्षत्र में अपराहन में सिद्धि को प्राप्त हुए।
540. इस प्रकार ये चालीस जिनदेव दसों क्षेत्रों से अपने आठों कर्मों को नष्ट कर संयमपूर्वक अपराहन में सिद्धिगति को प्राप्त हुए।
541. भरत क्षेत्रों में विमलनाथ और ऐरावत क्षेत्रों में सिंहसेन—ये दसों जिनदेव उत्तर भाद्रपद नक्षत्र में रात्रि के प्रथम प्रहर में सिद्धि को प्राप्त हुए।
542. भरत क्षेत्रों में अनन्त जिनदेव तथा ऐरावत क्षेत्रों में असंयल देव—ये दसों जिन रेवती नक्षत्र में पूर्वरात्रि में सिद्धिस्थान को गए।
543. भरत क्षेत्रों में शातिनाथ और ऐरावत क्षेत्रों में दीर्घसेन—ये दसों जिनचन्द्र भरणी नक्षत्र में पूर्वरात्रि में सिद्धिगति को प्राप्त हुए।
544. भरत क्षेत्रों में कुंथु और ऐरावत क्षेत्रों में महाधियोगबल—ये दसों जिनदेव कृतिका नक्षत्र में पूर्वरात्रि को सिद्धिस्थान को गए।
545. भरत क्षेत्रों में मल्ली तथा ऐरावत क्षेत्रों में मरुदेवी—ये दसों जिन रेवती नक्षत्र में रात्रि के पूर्व काल में सिद्ध हुए।
546. भरत क्षेत्रों में मुनि सुव्रत और ऐरावत क्षेत्रों में धरनाथ—ये दसों जिनदेव श्रवणा नक्षत्र में रात्रि के प्रथम प्रहर में सिद्ध हुए।
547. भरत क्षेत्रों में अरिष्टनेमि और ऐरावत क्षेत्रों में अग्निसेन—ये दसों जिनदेव चित्रा नक्षत्र में रात्रि के प्रथम प्रहर में सिद्ध हुए।
548. भरत क्षेत्रों में पार्श्वनाथ और ऐरावत क्षेत्रों में अग्निदत्त—ये दसों जिनदेव विशाखा नक्षत्र में रात्रि के पूर्व भाग में सिद्धि को प्राप्त हुए।
549. इस प्रकार अस्सी जिनदेव अपने—अपने आठों कर्मों को नष्ट कर रात्रि के प्रथम प्रहर में दसों क्षेत्रों से संयमपूर्वक सिद्धि को प्राप्त हुए।
550. भरत क्षेत्रों में धर्मनाथ और ऐरावत क्षेत्रों में उपशांतदेव—ये दसों जिनदेव पुष्य नक्षत्र में रात्रि के उत्तरार्द्ध में सिद्धि को प्राप्त हुए।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

551. अरजिणवरो य भरहे, अइपास जिणो य एरवएवासे।  
रेवइजोगे दस १वी सिद्धिगया अवररत्तम्मि।।
552. नमिजिणचंदो भरहे, एरवए सामकोटठजिणचंदो।  
अस्सिणजोगे दस २वी सिद्धिगया अवररत्तम्मि।।
553. भरहे य वड्डमाणो, एरवए वारिसेणजिणचंदो।  
दस वि य सातीजोगे सिद्धिगया अवररत्तम्मि।।
554. एते चत्तालीसं दससु वि वासेसु झीणसंसारा।  
सव्वे ते केवलिणो सिद्धिगया अवररत्तम्मि।।

(गा. 555-61. दसखेत्तसमुम्भूयउसमाइजिणसिद्धिगमणसमये  
आसनं तवो य)

555. उसमो य भरहवासे, बालचंदाणणो य एरवए।  
दस वि निसज्जोवगया दससु वि खेत्तेसु सिद्धिगया।।
556. भरहे ३अरिट्ठनेमी, एरवए अग्गिसेणजिणचंदो।  
दस वि सिज्जोवगया दससु वि खेत्तेसु सिद्धिगया।।
557. भरहे य वड्डमाणो, एरवए वारिसेणजिणचंदो।  
दस वि निसज्जोवगया दससु वि खेत्तेसु सिद्धिगया।।
558. दोण्णि सया उ दहुत्तर जिणवरचंदाण केवलणं तु।  
दससु वि वासेसेए वाघारियपाणिणो सिद्धा।।
559. चंदाणण उसमजिणो आइगरा चोददेसेण भत्तेणं।  
एतेण दस वि सिद्धा दससु वि वासेसु जिणचंदा।।
560. भरहे य वड्डमाणो, एरवए वारिसेणजिणचंदो।  
छट्ठेण दस वि सिद्धा दससु वि वासेसु जिणचंदा।।
561. दोण्णि सया वीसुत्तर तित्थयराणं तिलोगनाहाणं।  
दससु वि वासेसेए मासियभत्तेण सिद्धिगया।।

1. मी ला० विना।।

2. मी हं० की०।।

3. ०ट्ठनेमिं प्रतिपाठः।।

## हिन्दी अनुवाद

551. भरत क्षेत्रों में अरनाथ और ऐरावत क्षेत्रों में अतिपार्श्वदेव—ये दसों जिनदेव रेवती नक्षत्र में रात्रि के उत्तरार्द्ध में सिद्धगति को प्राप्त हुए।
552. भरत क्षेत्रों में नमिनाथ एवं ऐरावत क्षेत्रों में श्यामकोट—ये दसों जिनदेव अश्विनी नक्षत्र में रात्रि के उत्तरार्द्ध में सिद्धि को प्राप्त हुए।
553. भरत क्षेत्रों में वर्द्धमान और ऐरावत क्षेत्रों में वारिसेन—ये दसों जिनदेव स्वाति नक्षत्र में रात्रि के उत्तरार्द्ध में सिद्धि को प्राप्त हुए।
554. दसों क्षेत्रों के ये सभी चालीस केवली जिनदेव अपने संसार को क्षीण कर रात्रि के उत्तरार्द्ध में सिद्धि को प्राप्त हुए।

(दस क्षेत्रों में उत्पन्न ऋषभदेव आदि जिनों के सिद्धिगमन  
समय का आसन और तप)

555. भरत क्षेत्रों में ऋषभ और ऐरावत क्षेत्रों में बालचन्द्रानन—दसों क्षेत्रों के ये दसों जिनदेव निषिद्या में अर्थात् पर्यकासन में सिद्ध हुए।
556. भरत क्षेत्रों में अरिष्टनेमि और ऐरावत क्षेत्रों में अग्निसेन—ये दसों जिनदेव निषिद्या में अर्थात् पर्यकासन में दसों क्षेत्रों से सिद्ध हुए।
557. भरत क्षेत्रों में वर्द्धमान और ऐरावत क्षेत्रों में वारिसेन—ये दसों जिनदेव निषिद्या में विराजमान यानी पर्यकासन में दसों क्षेत्रों से सिद्धगति को गए।
558. शेष 210 केवली जिनदेव दसों क्षेत्रों से व्याघारित पाणि अर्थात् प्रलम्बभुज या लम्बवत् अर्थात् कायोत्सर्ग मुद्रा में सिद्धि को प्राप्त हुए।
559. आदि तीर्थकर चन्द्रानन और ऋषभ दसों क्षेत्रों के ये दसों तीर्थकर चौदह भक्त अर्थात् छह उपवास पूर्ण कर सिद्ध हुए।
560. भरत क्षेत्रों में वर्द्धमान और ऐरावत क्षेत्रों में वारिसेन—ये दसों जिनदेव छठे भक्त अर्थात् दो उपवास करके दसों क्षेत्रों से सिद्ध हुए।
561. शेष 220 तीर्थकरदेव दसों क्षेत्रों से एक-एक महीने का उपवास पूर्ण कर सिद्धगति को प्राप्त हुए।

तित्थोगाली प्रकीर्णक

(गा. 562- 66. दसखेत्तसमुब्भूयउसभाइजिणसिद्धि  
गमणसमयनग-नगरीओ)

562. अट्ठावयम्मि उसभो सिद्धिगओ भारहम्मि वासम्मि ।  
चंदाणणो एरवए सिद्धिगओ मेहकूडम्मि ।।
563. सम्मेयम्मि जिणिंदा वीसं परिनिव्वुया भरहवासे ।  
एरवए सुपइट्ठे वीसं मुणिपुंगवा सिद्धा ।।
564. चंपाए वासुपुज्जो सिद्धिगतो भारहम्मि वासम्मि ।  
एरवए सेज्जंसो सिद्धिगतो नागनगरीए ।।
565. हरिवरकुलनंदिकरो उज्जंते निव्वुओ जिणो नेमी ।  
एरवए अग्गिसेणो सिद्धिगतो चित्तकूडम्मि ।।
566. पावाए वद्धमाणो सिद्धिगतो भारहम्मि वासम्मि ।  
एरवए वारिसेणो सिद्धो कमलुज्जलपुरीए ।।

(गा. 567-68. चउव्वीसइजिणअम्मा-पिऊणं गईओ)

567. अट्ठण्हं जणणीओ तित्थगराणं तु होंति सिद्धाओ ।  
अट्ठ य सणंकुमारे, माहिंदे अट्ठ बोधव्वा ।।
568. नागेसुं उसभपिया, संसाणं सत्त होंति ईसाणे ।  
अट्ठ य सणंकुमारे, माहिंदे अट्ठ बोधव्वा ।।

(गा. 569-76. दुवालसचक्कीणं नामाइं समओ गईओ य)

569. तित्थंकरपढमघरे भणिया वत्तव्वया समासेणं ।  
एत्तो घरम्मि बीए वोच्छं चक्कीण उद्देसं ।।

हिन्दी अनुवाद

(दसों क्षेत्रों में उत्पन्न ऋषभ आदि जिनों के सिद्धिगमन समय  
का पर्वत और नगर)

562. भरत क्षेत्रों में ऋषभदेव अष्टापद (कैलाश) पर्वत से और ऐरावत क्षेत्रों में चन्द्रानन मेघकूट पर्वत पर तप करते हुए सिद्ध हुए ।
563. भरत क्षेत्रों से बीस जिनदेव सम्मेद शिखर से मोक्ष स्थान को गए जबकि ऐरावत क्षेत्रों के बीस जिनदेव सुप्रतिष्ठ पर्वत से सिद्धिस्थान को प्राप्त हुए ।
564. भरत क्षेत्रों में वासुपूज्य जिनदेव चंपानगरी से तथा ऐरावत क्षेत्रों में श्रेयांसनाथ नाग नगरी से सिद्धि को प्राप्त हुए ।
565. श्रेष्ठ हरिवंश कुल को आनंदित करनेवाले अरिष्टनेमि देव उर्जयन्त पर्वत से व ऐरावत क्षेत्रों के अग्निसेनदेव चित्रकूट पर्वत से मोक्ष को गए ।
566. भरत वर्षों में वर्द्धमान स्वामी पावापुरी से तथा ऐरावत क्षेत्रों में वारिसेन स्वामी कमलुज्ज्वल पुरी से मोक्ष को प्राप्त हुए ।

(चौबीसों तीर्थकरों के माता-पिता की गति)

567. प्रथम आठ तीर्थकरों की माताएं सिद्धि को प्राप्त होती हैं । बीच के आठ तीर्थकरों की माताएं मृत्यु के बाद तीसरे लोक में सनत्कुमार देव तथा अंतिम आठ तीर्थकरों की माताएं चतुर्थ लोक में महेन्द्र देव भव में पैदा होती हैं ।
568. ऋषभदेव के पिता मृत्यु के बाद नागकुमार, योनि में पैदा हुए । दूसरे से आठवें तक तीर्थकरों के पिता ईसानेन्द्र, नौवें से 16वें तक जिनों के पिता सनत्कुमार योनि में तथा अंतिम आठ तीर्थकरों के पिता महेन्द्र देवों की योनि में पैदा हुए ।

(बारह चक्रवर्ती के नाम, समय और गति)

569. ऊपर बायें से दायें बने पांच खानों में से प्रथम खाने में उपर से नीचे उल्लिखित तीर्थकरों का वर्णन संक्षेप में किया गया । अब बायें से दायें दूसरे खाने में उपर से नीचे उल्लिखित चक्रवर्तियों का वर्णन करता हूँ ।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

570. भरहो 1 सगरो 2 मघवं 3 सणकुमारो य रायसद्दूलो 4।  
संती 5 कुंथू 6 य अरो 7 हवइ सुभूमो य कोरव्वो 8॥
571. नवमो य महापउमो 9 हरिसेणो चेव रायसद्दूलो 10।  
जयनामो य' नरवती 11 बारसमो बंभदत्तो 12 य॥
572. उसभे भरहो 1, अजिए सगरो 2, मघवं 3 सणकुमारो 4 य।  
धम्मस्स य संतिस्स य जिणंतरे चक्कवट्टिदुगं॥
573. संती 5 कुंथू 6 य अरो 7 अरहंता चेव चक्कवट्टी य।  
अर-मल्लिअंतरम्मि उ हवइ सुभूमो 8 य कोरव्वो॥
574. मुणिसुव्वय महपउमो 9, नमिम्मि हरिसेण 10 होइ बोधव्वो।  
नमि-नेमिअंतरा जतो 11, अरिट्ठ-पासंतरे बंभो 12॥
575. अट्ठेव गया मोक्खं, सुहुमो बंभो य सत्तमिं पुढविं।  
मघवं सणकुमारो सणकुमारं गया कप्पं॥
576. छक्खंडभरहसामी बारस चक्की उ ते उ निदिदट्ठा।  
एत्तो परं तु वोच्छं भरहद्धनराहिवा सब्बे॥

### (गा. 577- 78. नवण्हं वासुदेव-बलदेवाणं नामाइ)

577. तिविट्ठू 1 य दुविट्ठू 2 य सयंभु 3 पुरिसुत्तमे 4 पुरिससीहे 5।  
तह पुरिसपुंडरीए 6 दत्ते 7 नारायणे 8 कण्हे 9॥
578. अयले 1 विजए 2 भद्दे 3 सुप्पमे 4 य सुदंसणे 5।  
आणंदे 6 नंदणे 7 पउमे 8 रामे 9 यावि अपच्छिमे॥

1. उ हं की॥

## हिन्दी अनुवाद

- 570+571. दूसरे खाने में उल्लिखित चक्रवर्ती हैं- 1. भरत, 2. सगर, 3. मघवा, 4. राजशार्दूल सनत्कुमार, 5. शांति, 6. कुंथु, 7. अर, 8. कौरव वंश में उत्पन्न सुभूम, 9. महापद्म, 10. राजशार्दूल हरिषेण, 11. राजा जय और 12. बह्मदत्त।
572. तीर्थकर ऋषभदेव के समय प्रथम चक्रवर्ती भरत, अजितनाथ के काल में दूसरे चक्रवर्ती सगर, तीर्थकर धर्मनाथ और तीर्थकर शांतिनाथ के बीच के काल में दो चक्रवर्ती मघवा और सनत्कुमार पैदा हुए।
573. इसके बाद क्रमशः शांतिनाथ, कुंथुनाथ और अरनाथ चक्रवर्ती और तीर्थकर दोनों हुए। तीर्थकर अरनाथ और तीर्थकर मल्ली के बीच के काल में आठवें चक्रवर्ती सुभूम पैदा हुए।
574. मुनि सुव्रत के काल में नौवें चक्रवर्ती महापद्म, नमिनाथ के काल में दसवें चक्रवर्ती हरिषेण को पैदा हुआ जानना चाहिए। तीर्थकर नमिनाथ और तीर्थकर नेमिनाथ के बीच के काल में ग्यारहवें चक्रवर्ती जय और तीर्थकर अरिष्टनेमि और तीर्थकर पार्श्वनाथ के बीच के काल में बारहवें चक्रवर्ती बह्मदत्त पैदा हुए।
575. मृत्यु के उपरांत आठ चक्रवर्ती मोक्ष को प्राप्त हुए। सुभूम और ब्रह्म सातवें नरक में गए, मघवा और सनत्कुमार तीसरे देवलोक में उत्पन्न हुए।
576. इस प्रकार छह खंड भरत क्षेत्र के स्वामी बारह चक्रवर्तियों का यहां निरूपण किया गया। इसके बाद अर्द्धभरत क्षेत्र के सभी नराधिपतियों अर्थात् वासुदेवों का वर्णन करता हूँ।

### (नौ-नौ वासुदेवों-बलदेवों के नाम)

577. सारणी के बायें से दायें तीसरे खाने में वासुदेवों के नाम इस प्रकार हैं-1. त्रिपृष्ठ, 2. द्विपृष्ठ, 3. स्वयंभू, 4. पुरुषोत्तम, 5. पुरुषसिंह, 6. पुरुष पुंडरीक, 7. दत्त, 8. नारायण और 9. कृष्ण।
578. चौथे खाने में बलदेवों के नाम हैं-1. अचल, 2. विजय, 3. भद्र, 4. सुप्रभ, 5. सुदर्शन, 6. आनन्द, 7. नंदन, 8. पद्म एवं 9. राम।

(गा. 579-601. पढमस्स तिविट्ठु- अयलनामस्स वासुदेव- बलदेवजुयलस्स रिद्धिआइपरुवण)

579. पुत्तो पयावतिस्सा मियावईकुच्छि'संभवो भयवं।  
अनामेण(?नामा) तिविट्ठविण्हू आदी आसी दसाराणं॥
580. पुत्तो पयावतिस्सा भद्दा अयलो वि कुच्छिसंभूतो।  
गरुयपडिवक्खमहणा तिविट्ठु अयलो त्ति दो वि जणा॥
581. अयल-तिविट्ठु दुन्नि वि संगामे आसगीवरायाणं।  
हंतूण सव्वदाहिण दाहिणभरहं अइजिणंति॥
582. उप्पण्णरयणविहवा कोडिसिलाए बलं तुलेऊण।  
अड्ढभरहाहिसेयं अह अयल-तिविट्ठुणो पत्ता॥
583. चककं सुदरिसणं से, संखो वि य पंचयण्णनामो त्ति।  
नंदयनामो य असी रिवुसोणियसुंडतो आसि॥
584. माला य वेजयंती विचित्तरयणोवसोहिया रम्मा।  
सारिक्खा जा धणियं घणसमए इंद'चावस्स॥
585. सत्तुजणस्स भयकरं चावं दरियारिजीव'उब्बाधं।  
जीवानिग्घोसेणं सयसाहस्सी पडइ जस्स॥
586. कोत्थुममणी य दिव्वो वच्छत्थलभूसणो तिविट्ठस्स।  
लच्छीए परिग्गहिओ रयणुत्तमसारसंगहिओ॥
587. अमरपरिग्गहियाइं सत्त वि रयणाइं अह तिविट्ठस्स।  
अमरेसु भूसरेणु य एयाइं अजियपुव्वाइं॥

1. 0कुच्छिमि सं० प्रतिपाठः॥

2. नामेण तिविट्ठुविहू सं० हं० की०॥

3. असी ति रिवु० प्रतिपाठः॥

4. 0दराय० ला० विना॥

5. उब्बावं प्रतिपाठः॥

(प्रथम त्रिपृष्ठ-अचल नामक वासुदेव-बलदेव युगल की ऋद्धि आदि का प्ररूपण)

579. मृगावती के गर्भ से उत्पन्न प्रजापति के पुत्र भगवान त्रिपृष्ठ दशाई कुल के आदि पुरुष थे।
580. प्रथम बलदेव अचल भी प्रजापति के ही पुत्र थे। उनका जन्म प्रजापति की पहली पत्नी भद्रा के गर्भ से हुआ। त्रिपृष्ठ और अचल दोनों ही प्रतिवासुदेवों के गर्व का दलन करनेवाले महापराक्रमी थे।
581. अचल और त्रिपृष्ठ दोनों ने ही युद्ध में उस समय के प्रतिवासुदेव अश्वप्रीव राजा को मारकर दक्षिण भरत के समस्त दक्षिण भाग को जीत लिया।
582. रत्न वैभव के उत्पन्न होने पर अचल-त्रिपृष्ठ दोनों ही कोटिशिला पर अपनी सेना को सजाकर अर्द्धभरत क्षेत्र के राजा पद को प्राप्त करते हैं।
583. इनके सुदर्शन नामक चक्र, पांचजन्य नामक शंख और शत्रुओं के खून की प्यासी नंदन नामक तलवार थी।
584. विचित्र रत्नों से शोभित रमणीय वैजयंतीमाला जो वर्षा के समय के सघन घनघटा के बीच चमकते हुए इन्द्रधनुष सदृश है।
585. उनके पास शत्रुओं के लिए काल के समान भयंकर सारंग नामका धनुष है, जो शत्रुओं के लिए भयंकर और उनके दर्प का दलन करनेवाला है। इसकी टंकार से ही लाखों शत्रु धराशायी हो जाते हैं।
586. त्रिपृष्ठ के वक्षस्थल का दिव्य आभूषण कौस्तुभ मणि सुशोभित था जो लक्ष्मी द्वारा सेवित और उत्तमोत्तम रत्नों के सार से उत्पन्न था।
587. इस प्रकार त्रिपृष्ठ के देवताओं से रक्षित सात रत्न हैं। दिव्य रत्नों में ये आभूषण सदा-सर्वदा अजेय माने गए हैं।

(यहां पर छह रत्नों का ही वर्णन है जबकि उल्लेख सात रत्नों का है। अन्य संदर्भ ग्रंथों से पता चलता है कि इनके सातवें रत्न में कौमोदकी गदा भी थी, लेकिन इस तरह की गाथा यहां उपलब्ध नहीं है। संभव है यह गाथा प्राचीन पांडुलिपियों में कही रही हो जो बाद के काल में संपादन में कहीं लुप्त हो गयी हो।)

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

588. वहइ हली वि हलं जो पण्णयजिभं व तिकखवइरिचमुं।  
परसुं समरमहाभडविढत्तकित्तीण जीवहरं।।
589. सोणंदं चाणिंदिय आसंधियसत्तुमुक्कसत्थदलं।  
मुसलं सोभमहापुरभंजणकुसलं वइरसारं।।
590. सव्वोउयं च मालं कुसुमासवलोलछप्पयविओलं।  
मणिकुंडलं च वामं कुबेरघरसारआरामं।।
591. अचलस्स वि अमरपरिग्गहाइं एयाइं पवररयणाइं।  
सत्तुणं अजियाइं समरगुणपहाणगेयाइं।।
592. बद्धमउडाण निच्चं रज्जधुरुव्वहणधोरवसभाणं।  
भोयनरिदाभाणं सोलस रातीसहस्साइं।।
593. बायालीसं लक्खा हयाण रह-गयवराण पडिपुण्णा।  
अट्ठय देवसहस्सा अभिओगा सव्वकज्जेसु।।
594. अडयाला कोडीओ पाइक्कनराण रणसमत्थाणं।  
सोलस साहस्सीओ सजणवयाणं पुरवराणं।।
595. गण्णासं विज्जाहरनगराण सजणवयाण रम्माणं।  
ण(?)वणंतरालवासी नागा य फणुग्गधरमउडा।।
596. नेगाइं सहस्साइं गामा-SSगर-नगर-पट्टणादीणं।  
वेयड्ढदाहिणेण उ पुव्वावरअंतरठियाणं।।
597. दरियरिवुमाणमहणा अवसे वसमाणइत्तु नरवइणो।  
दाहिणभरहं सगलं भुंजंति विलीणपडिवक्खा।।
598. सोलस साहस्सीतो नरवइतणयाण रूवकलियाणं।  
तावइय च्चिय जणवयकल्लाणीतो तिविट्ठुस्स।।
599. इय बत्तीस सहस्सा चारु पत्तीण ता तिविट्ठुस्स।  
धारिणिपामोक्खाण य अट्ठ सहस्सा य अयलस्स।।

## हिन्दी अनुवाद

588. हल को धारण करनेवाले अचल बलदेव के पास ऐसा हल है जिसका फाल जिससे जमीन को जोतते हैं, शेषनाग के फन के समान पांच तीक्ष्ण जिहवावाला है और समर में शत्रुओं के महाकीर्तिशाली योद्धाओं के जीवन का हरण करनेवाला है।
589. अचल बलदेव के पास सुनन्द नामक मूसल थी जो टिड्डीदल के समान अपार शत्रुसेना और लौहमय नगराकार गगनविहारी विमानों और बड़े-बड़े नगरों को विचूर्णित करनेवाला था।
590. अचल बलदेव के वक्षस्थल पर सभी ऋतुओं के पांच वर्ण के फूलों की माला है जिसका रस लेने के लिए परागलोलुप भौरें चारों आरे गुंजार कर रहे हैं। उनके कानों में धनकुबेर के धनागार के सभी आभूषणों में सारभूत मनोहर मणिकुंडलों की जोड़ी थी।
591. इस प्रकार अचल के भी देवताओं से रक्षित, युद्धकला में प्रवीण, शत्रुओं के लिए अजेय और प्रशंसनीय उपरोक्त ये श्रेष्ठ रत्न थे।
- 592+596. उनके वैभव में राज्यधुरी को धारण करने में श्रेष्ठ वृषभों के सदृश पराक्रमी सोलह हजार शाश्वत मुकुटबद्ध राजा, बयालीस लाख घोड़े-स्थ तथा श्रेष्ठ हाथियों से परिपूर्ण सेना, विभिन्न कार्यों में लगे आठ हजार देवगण, युद्ध में कुशल 48 करोड़ पदाति सेना, सोलह हजार श्रेष्ठ नगर एवं जनपद और आकाश के मध्य रहनेवाले तथा अपने फण के अग्रभाग पर मुकुट धारण करनेवाले पचास नागकुमार देव एवं वैतादय पर्वत के दक्षिण भाग में पूर्व और पश्चिम के बीच स्थित दो विद्याधर श्रेणियों के कई हजार ग्राम, नगर, मुहल्लों आदि का समूह शामिल थे।
597. गर्विष्ठ शत्रुओं का मानमर्दन करके तथा स्वतंत्र राजाओं को अपने अधीन कर दुश्मन व विरोधियों से रहित होकर वे दोनों संपूर्ण दक्षिण भरत खंड का राज भोग करते हैं।
- 598+599. सोलह हजार जनपदों से एक-एक सुन्दरी राजकुमारियों और सोलह हजार अन्य पत्नियों को मिलाकर त्रिपृष्ठ की 32 हजार पत्नियां थी। इनमें धारिणी नामकी रानी प्रमुख थीं। इसी प्रकार अचल की आठ हजार पत्नियां थीं।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

600. ऊसियमगरधयाणं विदिण्णवरछत्त-वालवियणाणं।  
सोलस गणियसहस्सा वसंतसेणापहाणाणं।।
601. एवं तु मए भणियं अयल-तिविट्ठूण दोण्ह वि जणाणं।  
एत्तो परं तु वोच्छं अट्ठण्हं नवर जुयलाणं।।
- (गा. 602-09. वासुदेव- बलदेवाणं पिइ-माउ-पुव्वमवनाम-  
पुव्वमवायरिय-नगरीओ)
602. पयावती 1 य बंभे 2 य रुद्धे 3 सोमे 4 सिवे 5 ति या।  
महसीह 6 अग्गिसीहे 7 दसरह 8 नवमे य वसुदेवे 9।।
603. मिगावती 1 उमा 2 चेव पुहवी 3 सीया 4 य अम्मया 5।  
लच्छिमती 6 सेसवती 7 केकती 8 देवती 9 इ य।।  
एयाओ केसवमायरो।।
604. भद्द 1 सुभद्दा 2 सुप्पभं 3 सुदंसणा 4 विजय 5 वेजयंती 6 य।  
जयंती 7 अपराजिया 8 रोहिणि 9 बलदेवजणणीओ।।  
एयाओ बलदेवमायरो।।
605. विसभूती 1 पव्वयए 2 धणमित्त 3 समुद्ददत्त 4 सेवाले 5।  
पियमित्त 6 ललियमित्ते 7 पुणव्वसू 8 गंगदत्ते 9 य।।
606. विसनंदी 1 सुबंधू 2 य सागर 3 दत्ते 4 असोगललिए 5 य।  
वाराह 6 धम्मसेणे 7 अवराइय 8 रायललिए 9 य ।।

## हिन्दी अनुवाद

600. उनके चारों ओर उन्नत कामदेव के चिन्ह वाली पताकाओं से सज्जित उत्तुंग विजय वैजयंती के समान एवं राजाओं द्वारा प्रदत्त श्रेष्ठ छत्र और चक्र को धारण करनेवाली वसन्तसेना प्रमुख सोलह हजार गणिकाएं भी थीं।
601. इस प्रकार त्रिपृष्ठ- अचल के वैभवों का वर्णन किया गया। इसके बाद केवल वासुदेव और बलदेवों से संबंधित आठ बातों का वर्णन करता हूँ।  
(वासुदेवों-बलदेवों के पिता-माता-पूर्वभव नाम- पूर्वभव आचार्य एवं पूर्वभव के नगर)
602. नौ वासुदेवों और नौ बलदेवों के पिता का नाम क्रमशः इस प्रकार है- प्रथम वासुदेव त्रिपृष्ठ के पिता प्रजापति, दूसरे द्विपृष्ठ के ब्रह्म, तीसरे स्वयंभू के रुद्र, चौथे पुरुषोत्तम के सोम, पांचवे पुरुषसिंह के शिव, छठे पुरुष पुंडरीक के महाशिव, सातवें दत्त के अग्निसिंह, आठवें नारायण के दशरथ और नवें कृष्ण वासुदेव के पिता का नाम वसुदेव था।
603. त्रिपृष्ठ की माता का नाम मृगावती, द्विपृष्ठ की उमा, स्वयंभू की पृथ्वी, पुरुषोत्तम की सीता, पुरुषसिंह की अम्बिका, पुरुष पुंडरीक की लक्ष्मीवती, दत्त की शेषवती, नारायण की कैकयी और कृष्ण की माता देवकी थी।
604. बलदेवों में अचल की माता भद्रा, विजय की सुभद्रा, भद्र की सुप्रभा, सुप्रभ की सुदर्शना, सुदर्शन की विजया, आनन्द की वैजयन्ती, नंदन की जयन्ती, पद्म की अपराजिता और नवमें राम की रोहिणी थी।
605. प्रथम वासुदेव त्रिपृष्ठ के पूर्वभव का नाम विश्वभूति, द्विपृष्ठ का पर्वतक, स्वयंभू का धनमित्र, पुरुषोत्तम का समुद्रदत्त, पुरुष सिंह का शैवाल, पुरुष पुंडरीक का प्रियमित्र, दत्त का ललित मित्र, नारायण का पुनर्वसु और कृष्ण के पूर्व भव का नाम गंगदत्त था।
606. प्रथम बलदेव अचल के पूर्वभव का नाम विश्वनंदी, विजय का सुबंधु, भद्र का सगर, सुप्रभ का दत्त, सुदर्शन का अशोक ललित, आनन्द का वाराह, नंदन का धर्मसेन, पद्म का अपराजित और राम के पूर्वभव का नाम राजललित था।

### तित्थोगाली प्रकीर्णक

607. संभूते 1 सुभद 2 सुदंसणे 3 य सेज्जंस 4 कण्ह 5 गंगे 6 य।  
सागर 7 समुदनामे 8 नवमे दुमसेणनामे 9 य॥
608. एते पुव्वायरिया कित्तीपुरिसाण वासुदेवाणं।  
पुव्वभवे आसी या जत्थ नियाणाइं कासी य॥
609. महुरा 1 य कणवत्थुं 2 सावत्थी 3 पोयणं 4 च रायगिहं 5।  
कागंदी 6 कोसंबी 7 महिलपुरी 8 हत्थिणपुरं 9 च॥

#### (गा. 610- 11. नवपडिवासुदेवनामाइ)

610. आसग्गीवे 1 तारए 2 मेरय 3 महुकेढवे 4 निसुंभे 5 य।  
बलि 6 य हिराए (हिरण्णे) 7 तह रावणे 8 य नवमे जरासिंघू 9॥
611. एते खलु पडिसत्तू कित्तीपुरिसाण वासुदेवाणं।  
सव्वे य चक्कजोही सव्वे वि हया सचक्केहिं॥

#### (गा. 612- 18. वासुदेव-बलदेवविसया विविहा वत्तव्वया)

612. पंच<sup>1</sup>अरहंते वंदंति केसवा पंच आणुपुव्वीए।  
सेज्जंस तिविट्ठादी धम्म पुरिससीहपेरंता॥
613. अर-मल्लिअंतरे दोन्नि केसवा पुरिसपुंडरिय-दत्ता।  
सुव्वय-नमीण मज्झमि अट्ठमो, कण्ह नेमिमि॥
614. अनियाणकडा रामा, सव्वे वि य केसवा निदाणकडा।  
उड्ढगामी रामा, केसव सव्वे अहोगामी॥
615. एक्को य सत्तमाए, पंच य छट्ठीय<sup>2</sup>, पंचमी एगो।  
एगो य चउत्थीए, कण्हो पुण तच्चपुढवीए॥

1. पंच अर० प्रतिपाठः॥

2. छट्ठीइ ह०॥

### हिन्दी अनुवाद

- 607+608. 1. संभूत, 2. सुमद्र, 3. सुदर्शन, 4. श्रेयांस, 5. कृष्ण, 6. गंग,  
7. सागर, 8. समुद्र और 9. द्रुमसेन-ये कीर्तिसंपन्न पुरुष-वासुदेवों के  
पूर्व भव के आचार्य हैं। अब पूर्वभव में जिस नगर में वे थे उसे आरंभ  
से कहेंगा।
609. प्रथम वासुदेव त्रिपृष्ठ पूर्वभव में मथुरा में, दूसरे कनकवस्तु में, तीसरे  
श्रावस्ती में, चौथे पोदनपुर में, पांचवें राजगृह में, छठे काकंदी में, सातवें  
कौशाम्बी में, आठवें मिथिलापुरी में तथा नौवें वासुदेव कृष्ण हस्तिनापुर  
में थे।

#### (नौ प्रतिवासुदेवों के नाम)

610. प्रतिवासुदेवों के नाम इस प्रकार हैं- 1. अश्वग्रीव, 2. तारक, 3. मेरक,  
4. मधुकैटभ, 5. निशुंभ, 6. बालि, 7. हिरण्य, 8. रावण और 9. जरासंध।
611. ये सब कीर्तिसंपन्न पुरुष वासुदेवों के प्रतिद्वंद्वी थे। ये सब चक्र से युद्ध  
करनेवाले थे तथा सब के सब अपने ही चक्रों से मारे गए।

#### (वासुदेव-बलदेव विषयक विविध वक्तव्य)

612. श्रेयांस तीर्थकर से लेकर धर्म तीर्थकर तक पांच अरहंतों की वंदना  
त्रिपृष्ठ वासुदेव से पुरुषसिंह वासुदेव तक पांच वासुदेव करते हैं।
613. अर और मल्ली तीर्थकर के मध्य पुरुषपुंडरीक और दत्त वासुदेव होते  
हैं। सुव्रत और नमि तीर्थकर के मध्य में आठवें वासुदेव नारायण (राम)  
तथा नेमिनाथ के समय में कृष्ण वासुदेव होते हैं।
614. बलदेव पूर्वजन्म में निदान नहीं करते अर्थात् वे पूर्वजन्म में तपस्या के  
प्रतिफल के रूप में ऐश्वर्य की आकांक्षा नहीं करते जबकि सभी वासुदेव  
पूर्वजन्म में निदान करते हैं। इससे सभी बलदेव तो इस भव के बाद मोक्ष  
या स्वर्ग जाते हैं लेकिन सभी वासुदेव अधोगति यानि विभिन्न नरकों में  
जाते हैं।
615. एक वासुदेव सातवें नरक में, पांच छठे नरक में, एक पांचवे नरक में,  
एक चौथे नरक में तथा अंतिम कृष्ण वासुदेव तीसरे नरक में जाकर  
उत्पन्न हुए।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

616. अट्ठंतकडा रामा, एगो पुण बंभलोयकप्पम्मि।  
उववन्नो तत्थ भोए भोत्तुं अयरोवमदसातो।।
617. तत्तो य चइत्ताणं इहेव ओस(उस्स)प्पिणीए भरहम्मि।  
भवसिद्धिओ उ भयवं सिज्जिस्सइ कण्हतित्थम्मि।।
618. तइए घरम्मि एते तिविट्ठुआदी य संठिया सव्वे।  
दुसमसुसमाए सेसे जं होही तं निसामेह।।

(गा. 619. नवखेत्तसमुम्भूयअपच्छिमजिणनिव्वाणसमओ)

619. अद्धनवमा य मासा तिण्णि य वासाइं होंति सेसाइं।  
दुसमसुसमाए एत्तो नवसु वि खेत्तेसु सिद्धिगया।।

(वद्धमाणजिणनिव्वाणं पालयरन्नो य रज्जाभिसेओ)

620. जं रयणिं सिद्धिगओ अरहो तित्थं करो महावीरो।  
तं रयणिमवन्तीए अभिसित्तो पालओ राया।।

(गा. 621- 923. पंचमस्स दूसमाअरगस्स वित्थरओ परूवणं)

(गा. 621-27. पालय-मरुय-पूसमित्त-भाणुमित्त-नहसेण-  
गद्धम-संगवसाणं रज्जकालो दुट्ठबुद्धिरायजम्मो य)

621. पालगरण्णो सट्ठी, पणपण्णसयं वियाण पंदाणं।  
मरुयाणं अट्ठसयं, तीसा पुण पूसमित्ताणं।।
622. बलमित्त-भाणुमित्ता सट्ठी, चत्ता य होंति नहसेण।  
गद्धम सयमेगं पुण, पडिवण्णो तो सगो राया।।

## हिन्दी अनुवाद

- 616+617. आठ बलदेवों ने आठों कर्मों का अन्त किया, यानि मोक्ष यहां से निर्वाण के बाद मोक्ष को गये। लेकिन एक बलदेव नौ बलराम पांचवें ब्रह्मलोक में उत्पन्न हुए। वहां कें अनुपम भोगों को भोगने के बाद वहां से च्यूत होने पर अगले एक भव में आगामी उत्सर्पिणी काल में इसी भरत क्षेत्र में श्रीकृष्ण अर्थात् तीर्थकर अमम के धर्मतीर्थ काल में सिद्ध-बुद्ध-मुक्त होंगे।
618. त्रिपृष्ठ आदि सभी वासुदेवों का बायें से दायें तृतीय खाने में उल्लेख किया गया है। दुषमा-सुषमा में जो शेष घटनाएं होंगी, उसे अब सुनिए।

(नौ क्षेत्रों में उत्पन्न पूर्व जिनों का निर्वाण समय)

619. चौथे आरे दुषमा-सुषमा काल में जब तीन वर्ष साढ़े आठ मास शेष रहने पर इस क्षेत्र यानि जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र की तरह ही शेष नौ क्षेत्रों से तीर्थकर सिद्धि को प्राप्त हुए।

(वर्द्धमान तीर्थकर का निर्वाण, पालक राजा और उसका राज्याभिषेक)

620. जिस रात्रि को अर्हत् तीर्थकर भगवान महावीर सिद्धि को प्राप्त हुए, उसी रात्रि में अवन्ती नगरी में पालक राजा का राज्याभिषेक हुआ।

(पंचम दुसमा आरा का विस्तृत प्ररूपण 621-923)

(पालक-मरुत पुष्यमित्र-बलमित्र-भानुमित्र-नभसेन-गर्दम-शकवंश का राज्यकाल और दुष्टबुद्धि राजा का जन्म, 621-27)

621. भगवान महावीर के निर्वाण के बाद पालक राजा का राज्यकाल साठ वर्ष, नंदों का 155 वर्ष, मौर्यवंश का 108 वर्ष फिर पुष्यमित्रों का राज्यकाल 30 वर्ष जानना चाहिए।
622. बलमित्र-भानुमित्र का 60 वर्ष, नभसेन का 40 वर्ष तथा गर्दभिल्लों का राज्यकाल 100 वर्ष का था। इसके पूर्ण होने पर शक राजा का शासन हुआ। (प्रस्तुत गाथा में "मरुयाणं अट्ठसयं" उल्लिखित है। इसका अर्थ एक सौ आठ है। पर इस अर्थ से आगे एक भ्रम पैदा हो जाता है। गाथा 621 और 622 में विभिन्न राज्यकालों को मिलाकर मात्र 543 वर्ष ही पूरे होते

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

623. पंच य<sup>1</sup> मासा पंच य वासा छ च्चेव हुंति वाससया।  
परिनिव्वयस्स<sup>2</sup>रहतो तो उप्पण्णो सगो राया।।
624. सगवंसस्स य तेरस सयाइं तेवीसइं च<sup>3</sup> वासाइं।  
होही जम्मं तस्स<sup>4</sup> उ कुसुमपुरे दुट्ठबुद्धिधस्स।।
625. पत्तो पत्तकुलम्मि य चेत्ते सुद्ध<sup>5</sup>ट्ठमीय<sup>5</sup> दिवसम्मि।  
रोद्धोवगए चंदे विट्ठीकरणे रविस्सुदए।।
626. जम्मोवगए सूरे, सणिच्छरे विण्हुदेवयगए य।  
सुक्के भोमेण हते, चंदेण हए सुरगुरुम्मि।।
627. ससि-सूर<sup>6</sup>त्थमणम्मि य समागमे तित्थएगपक्खम्मि(?)।  
सत्तरिसयचक्कपमद्दय य धूमए(?)धूमे) य केउम्मि।।

(गा. 628-89. दुट्ठबुद्धि-चउम्मुहाइअवरनामस्स कविकरन्तो  
जण-जणवयाइकट्ठदायगं चरिय)

628. तइया भुवणं पडणस्स जम्मनगरीए राम-कन्हाण।  
घोरं जणक्खयकरं पडिबोहदिणे य विण्हुस्स।।
629. बहुकोण-माण-माया-लोभ<sup>6</sup>पसत्तस्स तस्स जम्मम्मि।  
संघं पुण हेसेही गावीरूवेण अहिउत्ता' (?त्था)।।
630. झिज्झंति य पासंडा, चोरेहि य जणवया विलुप्पंति।  
होहिंति दाणि गामा केवलसंवाहमेत्ता वि।।

1. य वासा पंच य मासा छ हं० की०।।
2. ०स्स अर प्रतिपाठः।।
3. च होंति वा० प्रतिपाठः।।
4. तस उ प्रतिपाठः।।
5. ०ट्ठमीइ हं० की०।।
6. ०पसत्थस्स प्रतिपाठः।।
7. ०उण्हा हं० की०।। ०उन्हा ला०।।

## हिन्दी अनुवाद

- हैं जबकि गाथा 623 में स्पष्ट उल्लेख है कि महावीर निर्वाण के 605 वर्ष बाद शक राजा हुआ। ऐसा लगता है कि यह पाठभेद है और प्रतिलिपिकारों द्वारा बार-बार प्रतिलिपि करने के कारण मूल गाथा में उल्लिखित "सट्ठसयं" प्रमादवश बिगड़ते-बिगड़ते "अट्ठसयं" हो गया है। यदि यहां "सट्ठसयं" पाठ किया जाए तो आगे के विवरणों से इसकी संगति मेल खा जाती है।)
623. इस प्रकार भगवान महावीर के निर्वाण के 605 वर्ष और 5 महीना बीत जाने के बाद शक राजा का राज्यकाल शुरू हुआ।
- 624+625. शक वंश के 1323 वर्ष बीत जाने पर कुसुमपुर (पटना) में चैत्र शुक्लपक्ष अष्टमी के दिन पत्र कुल में चन्द्र के रौद्र योग में आने पर, वृष्टि करण में सूर्योदयके समय उस दुष्टबुद्धि राजा का जन्म हुआ।
- 626+627. जन्मस्थान में सूर्य के शनिश्चर के विष्णुदेवता में योग होने पर शुक्र के भौम यानि बुध द्वारा हत होने और गुरु के चन्द्र द्वारा हत होने पर, एक ही तिथि और एक ही पक्ष में चन्द्र और सूर्य के अस्त होने के समय सप्तर्षि मंडल के धूम्र धूम्रक के केतु द्वारा प्रमर्दित किया जाता है तब.....
- (दुष्टबुद्धि- चतुर्मुख आदि दूसरे नाम के कल्कि राजा द्वारा जन-जनपद आदि पर कष्टदायक अत्याचार का चित्रण)
- 628+629. बलराम और कृष्ण की जन्मनगरी मथुरा में विष्णु उत्थान अर्थात् कार्तिक शुदी एकादशी के दिन वहां जान-माल की भयंकर हानि हुई। भवन बुरी तरह से धराशायी हो गये। उसी दिन अनेक प्रकार के क्रोध, मान, माया और लोभ व्याप्त उस कल्कि का जन्म होने पर लोणा देवी गौ का रूप धारण कर रास्ते पर खड़ी होकर श्रमण संघ को अपने सींगों से प्रताड़ित करेंगी।
630. पाखण्डी अपने आप को सिद्ध कहेंगे। चोरों के द्वारा जनपद को लूटा जाएगा। इस समय ग्राम हमेशा ही लूटेरों के आक्रमणों से सदा भयभीत रहेंगे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

631. एत्थ किर मज्झदेसे पविरलमणुएसु नामदेसेसु।  
हय-गय-गो-महिसाणं कहिचि किच्छाहिं उवलंभो॥
632. चोरा रायकुलभयं, गंध-रसा जिज्झिहिंति अणुसमयं।  
दुब्भिकखमणावुट्ठी य नाम प(?ब)लियं पवज्जि(?ज्जी)ही (?)॥
633. रातीणं च विरोहो ईईबहुला य जणवया तइया।  
जम्मम्मि तस्स एते नियंव(?यय) भावा मुणेयव्वा॥
634. अट्ठारस य कुमारो वरिसा डामरितो' तत्तियं कालं।  
अर(?व)सेसयम्मि काले भरहे राया अणंत(?णण)समे॥
635. जं एयं वरनगरं पाडलिपुत्तं ति विस्सुअं लोए।  
एत्थं होही राया चउम्महो नाम नामेणं॥
636. सो अविणयपज्जत्तो अण्णनरिदे तणं पिव गणंतो।  
नगरं आहिंडंतो पेच्छीही पंच थूमे उ॥
637. पुट्ठा य बेंति मणुया "नंदो राया चिरं इहं आसि।  
बलितो अत्थसमिद्धो रूयसमिद्धो जससमिद्धो॥
638. तेण उ इहं हिरण्णं निक्खित्तं सुबहुबलपमत्तेणं।  
न य णं तरंति अण्णे रायाणो दाणि घेत्तुं जे"॥
639. तं वयणं सोऊणं खणेहिती ते समंतओ थूमे।  
नंदस्स संतियं तं पडिवज्जइ सो अह हिरण्णं॥
640. सो अत्थपडित्थद्धो अण्णनरिदे तणं विअ गणितो।  
अह सव्वतो महंतं खणाविही पुरवरं सव्वं॥

1. डामरितो होंति तत्ति० सं० ला०॥

## हिन्दी अनुवाद

631. यहां और इसके मध्यवर्ती प्रदेशों में इस प्रकार मनुष्यों के प्रमर्दित किये जाने से मनुष्यों के रहने लायक क्षेत्र नाममात्र के रह जाएंगे। इसी तरह घोड़ा, हाथी, गौ, भैंस कठिनाई से कहीं-कहीं थोड़ी संख्या में ही बचे रहेंगे।
632. चोरों और राजकुल का भय लोगों को सदा बना रहता है। गंध, रस आदि अल्प समय में ही समाप्त हो जाते हैं। दुर्भिक्ष और अनावृष्टि का प्रकोप बना रहता है तथा घर्षणित अनुष्ठानों का आयोजन होता रहता है।
633. दुष्टबुद्धि के जन्म के समय जनपदों की भरमार होगी। राजा के प्रति विद्रोह तथा बहुत प्रकार की ईति (धान्य आदि को नुकसान पहुंचाने वाले चूहा, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, शुक, कुत्ता आदि) का उत्पाद अवश्यभावी जानना चाहिए।
634. अठारह वर्ष तक की उम्र तक उस दुष्टबुद्धि का कुमारकाल रहेगा। बाकी के अनेक वर्षों के समय में वह जीवन पर्यंत भरत क्षेत्र में राज्य करेगा।
635. उसके बाद सम्पूर्ण लोक में विख्यात यह पाटलिपुत्र नामक जो श्रेष्ठ नगर है। यहीं पर चतुर्मुख नामक राजा होगा।
636. वह अशिष्टता का पर्याय होगा। अन्य राजाओं को तृणवत् समझता फिरेगा। वह नगर में घूमते समय वहां अवस्थित पांच स्तूपों को देखेगा।
- 637+638. पूछने पर लोग उसे बताएंगे कि बहुत समय पहले यहां नन्द राजा हुआ था। वह अत्यधिक धनवान, रूपवान और कीर्ति संपन्न था। अत्यधिक बलशाली होने से उसके द्वारा यहां पर स्तूप बनवाकर उसमें प्रचूर मात्रा में सोना-चांदी गाड़ा गया है। अब तक उसके जैसा कोई दूसरा राजा नहीं हुआ है जो इस धन को ग्रहण कर सके।
639. लोगों की बात सुनकर वह दुष्टबुद्धि राजा उन स्तूपों को चारों तरफ से खुदवाएगा और नंदों द्वारा रखे गए स्वर्ण आदि को अपने कब्जे में ले लेगा।
640. इस अपार धन को पाकर विस्मित वह दुष्टबुद्धि राजा धन के गर्व में दूसरे राजाओं को तृणवत् भी नहीं समझेगा। और धन के लोभ में वह इस श्रेष्ठ महान् नगर को चारों ओर से खुदवा देगा।

### तित्थोगाली प्रकीर्णक

641. नामेण लोणदेवी गावीरूवेण नाम अहिउत्था (?) ।  
धरिणयला उब्भूया दीसीहि सिलामयी गावी ।।
642. सा किर तइया गावीहोऊणं रायमग्गमोतिण्णा ।  
साहुजणं हिंडंतं पाडेही सूसुयायंती ।।
643. ते भिण्णभिक्षुभायणविलोलिया भिण्णकोप्परनिडाला ।  
भिक्षुं पि हु समणगणा न चयंति हु' हिंडितं नयरे ।।
644. वोच्छंति य मयहरगा आयरियपरंपरागयं तच्चं ।  
'एस अणागयदोसो चिरदिट्ठो वद्धमाणेणं ।।
645. अण्णे वि अत्थि देसा लहुं लहुं ता इतो अवक्कमिमो ।  
एस वि हु अणुकप्पइ(?) गावीरूवेण अहिउत्था'<sup>2</sup> ।।
646. गावीए उवसग्गा जिणवरवयणं च जे मुणेहिंति ।  
गच्छंति अण्णदेसे, तह वि य बहवे न गच्छंति ।।
647. गंगासोणुवसग्गं जिणवरवयणं च जे मुणेहिंति ।  
गच्छंति अण्णदेसे, तह वि य बहुया न गच्छंति ।।
648. 'किं अहं पलायणं ? भिक्षुस्स किमिच्छियाइ लभंते' ।  
एवं विजंपमाणा तह वि य बहुया न गच्छंति ।।
649. पुव्वभवनिम्मियाणं दूरे नियडे व्व अल्लियंताणं ।  
कम्माण को पलायइ कालतुलासंविभत्ताणं ? ।।

1. य हं० की० ।।

2. उच्छा हं० की० । ० उत्ता ला० विना ।।

### हिन्दी अनुवाद

641. उस नगर को खोदते समय पृथ्वी के नीचे से खड़ी अवस्था में शिलामयी गाय रूपी लोण देवी की मूर्ति वहां उद्भूत होगी ।
642. वह गाय राजमार्ग पर आकर उधर से गुजरनेवाले साधुओं को देखते ही गुस्से से चुंसुयाएगी और मारने दौड़ेगी ।
643. वह गाय भिक्षा के लिए भ्रमण करते हुए साधुओं को सींग मार-मारकर गिराएगी जिससे उनके भिक्षापात्र आदि जमीन पर गिरकर टूट फूट जाएंगे । गाय के आक्रमण से साधुओं की कोहनियां और ललाटों पर चोट आएगी और अब वे इस गाय के डर से नगर में घूमकर भिक्षाटन आदि भी नहीं कर पाएंगे ।
- 644+645. इस प्रकार की अनिष्टकारी घटना को देखकर श्रमण संघ के बुजुर्ग परंपरा से सुने तथ्यों को हवाला देकर कहेंगे कि इस तरह के अवश्यभावी दोषों को भगवान महावीर ने बहुत पहले ही देख और जान लिया था । गाय के रूप में उद्भूत यह शक्ति हमारे पर अनुकंपा कर रही है । अब हमलोगों को यह स्थान छोड़कर अन्यत्र के लिए प्रस्थान करना चाहिए ।
646. गाय द्वारा उपस्थित इस तरह उपसर्ग और इसकी पूर्व सूचना के रूप में पहले से ही जिनवर भगवान के कहे वचन की बात सुनकर साधुगण दूसरे क्षेत्रों के लिए प्रस्थान कर जाएंगे । पर बहुत से साधु अब भी वहीं डटे रहेंगे ।
647. जो साधु जिनवर वचन पर विश्वास करेंगे और गंगा-सोन नदियों के उपसर्ग को की बात सुनें, वे सभी अन्य क्षेत्रों के लिए प्रस्थान कर जाएंगे । फिर भी बहुत से साधु वहीं रह जाएंगे ।
648. वे साधु वहीं रुककर बकवास करेंगे कि हम क्यों जाएं? हमें यहां इच्छानुसार भिक्षा मिल रही है । इस तरह कहते हुए कुछ साधु नहीं जाएंगे ।
649. काल के तराजू पर अच्छी तरह से संविभक्त अपने पूर्व भवों में स्वयं द्वारा निर्मित कर्मों से कौन भाग सकता है । क्योंकि वे कर्म तो दूर चले जाने पर भी सदा निकट ही बने रहते हैं ।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

650. दूरे वच्चइ पुरिसो 'तत्थगतो निव्वुइं लभिस्सामि' ।  
तत्थ वि पुव्वकयाइं पुव्वकयाइं पडिक्खंति ।।
651. अह दाणि सो नरिदो चउम्मुहो दुम्मुहो अधम्ममुहो ।  
पासंडे पिंडेउं भणिही 'सव्वे करं देह' ।।
652. रुद्धो य समणसंघो अच्छीहिति, सेसया य पासंडा ।  
सव्वे दाहिति करं सहिरण्ण-सुवण्णया जत्थ ।।
653. सव्वे य कुपासंडे मोयावेही बला सलिंगाइं ।  
अइतिव्वलोहघत्थो समणे वि अभिददवेसी य ।।
654. वोच्छंति य मयहरगा 'अम्हं दायव्वयं न किंचित्थ ।  
जं नाम तुब्भ लुब्भा करेहि तं दायसी राय!' ।।
655. रोसेण सूसयंतो सो कइवि दिणे तहेव अच्छीही ।  
अह नगरदेवया तं अप्पणिया भणिही "रायं! ।।
656. किं तूरसि मरिउं जे निसंस! किं बाहसे समणसंघं ।  
सव्वं ते पज्जत्तं नणु कइवाहं पडिच्छामि" ।।
657. उल्लपडसाडओ सो पडिओ पाएहिं समणसंघस्स ।  
'कोवो दिट्ठो भयवं! कुणह पसायं पसाएमि' ।।
658. 'किं अम्ह पसाएणं?', तह वि य बहुया तहिं न इच्छंति ।  
घोरनिरंतर वासं अ हवासं दाइं वासिहिति ।।

## हिन्दी अनुवाद

650. मनुष्य यह सोचकर दूर भागता है कि वहां जाकर वह दुःखों से छुटकारा पा लेगा। पर वहां भी उसके पहुंचने से पहले ही पूर्वकृत कर्म पहुंचकर उसकी प्रतीक्षा करते रहते हैं।
651. अब यहां चतुर्मुख, दुर्मुख या अधर्ममुख राजा भिक्षाचारी मुनियों, साधु-संन्यासियों को एकत्र कर कहेगा—“तुम सब लोग कर दो।
652. सारे मताबलंबी उस राजा को अपने पास के स्वर्ण आदि जो कुछ भी था उसमें से और भिक्षा में से कर देने लगेंगे। लेकिन श्रमण संघ ने नहीं देगा; इस कारण उन्हें जेलों में बंद कर दिया जाएगा।
653. उस राजा द्वारा सभी अविचारी अन्य तीर्थिक अपने वस्त्र, चिह्न आदि से बलपूर्वक वंचित कर दिए जाएंगे, यानि उनके सारे सामान छीन लिए जाएंगे। राजा के अति तीव्र लोभ के कारण श्रमण संघ भी अत्यंत प्रताड़ित किया जाएगा।
654. संघ के बुजुर्ग स्थविर राजा से कहेंगे—“हे राजन! हमारे पास देने के लिए कुछ भी नहीं है, जिसे तुम अत्यधिक लोभ के वशीभूत होकर कर के रूप में हमसे लेना चाहते हो।”
- 655+656. इसके बाद वह राजा कई दिनों तक क्रोध में सुसुआता हुआ श्रमण संघ को इसी तरह से जेल में रखकर उनके साथ दुर्व्यवहार करता रहेगा। तब नगर देवता स्वयं आकर कहता है—“हे राजा! तुम क्यों श्रमण संघ को नृशंसतापूर्वक मारते हो। इनको क्यों रोके रखे हो। क्या तुम जल्दी मरना चाहते हो। अति हो गयी है। ऐसा रहा तो अब अधिक दिन तक तुम जिन्दा नहीं रह पाओगे।
657. तब वह राजा भयवश अस्त-व्यस्त हो जाएगा। उसके शरीर से कपड़े गिर जाएंगे। वह अंजलिबद्ध होकर श्रमण संघ के पैरों पर गिरेगा और गिड़गिड़ाते हुए कहेगा—“आपके कोप को मैंने देखा भगवन! अब आप मुझ पर प्रसन्न हो जाएं। मेरे पर दया करिए।”
658. श्रमण संघ कहता है—मेरे प्रसन्न होने से क्या? ऐसा कहकर श्रमण संघ अपने स्थान को लौट आते हैं। फिर भी बहुत से साधु वहीं यानि पाटलिपुत्र में ही रह जाते हैं। इसके बाद कई दिनों तक वहां निरंतर रात-दिन घोर वृष्टि होगी।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

659. दिव्वंतरिक्ख-भोमा तइया होहिंति नगरनासा य।  
उप्पाया उ महल्ला सुसमण-समणीण पीडकरा।।
660. 'संवच्छरपारणए होही असिवं' ति तो तओ निति।  
सुत्तत्थं कुव्वंता अइसयमादीहिं नाऊणं।।
661. गंतु पि न चाएंति केई उवगरणवसहिपडिबद्धा।  
केई सावगनिस्सा, केई पुण जंभविस्सा उ।।
662. तं दाणि समणुबद्धं सतरसरातिंदियाहिं वासिहिति।  
गंगा-सोणापसरो उव्वत्तइ तेण वेगेणं।।
663. गंगाए वेगेण य सोणस्स य दुद्धरेण सोतेणं।  
अह 'सव्वतो समंता बुभ्भीही पुरवरं रम्मं।।
664. आलोइयनियसल्ला पच्चक्खाणेसु निच्चमुज्जुत्ता।  
उच्छिप्पिहिंति साहू गंगाए अग्गवेगेणं।।
665. केइत्थ साहुवग्गा उवगरणे धणियरागपडिबद्धा।  
कलुणाइं पलोएंता वसहीसहिया उ वुज्जंति।।
666. 'सामियसणंकुमारा! सरणं ता होहि समणसंघस्स'।  
इणमो वेयावच्चं भणमाणाणं न वट्टिहिति।।
667. आलोइयनियसल्ला पच्चक्खाणेसु धणियमुज्जुत्ता।  
उच्छिप्पिहिंति समणी गंगाए अग्गवेगेणं।।
668. काओ वि साहुणीओ उवगरणे धणियरागपडिबद्धा।  
कलुणपलोइणियातो वसहीसहियाओ वुज्जंति।।

1. सव्वतो महंता प्रतिपाठः।।

## हिन्दी अनुवाद

659. इसके बाद नगर के नाश के सूचक और समण-समणी संघ के लिए पीड़ादायक अनेक दिव्य एवं बड़े-बड़े उत्पात आकाश तथा धरती पर होने लगेंगे।
660. इसके बाद सांवत्सरिक पारणा के दिन ही अनेक अमंगल होंगे। इन्हें देखकर और अपने अतिशय ज्ञान से भविष्य को जानकर साधुगण वहां से सभी सूत्रों और सूत्रों के अर्थ को यानि निर्युक्ति, चूर्ण, वृत्ति को यत्नपूर्वक वहां से ले जाएंगे।
661. वहां से जाते हुए भी कई साधु अपने उपकरण, वसति में आसक्त होकर तो कई अपने श्रावकों के मोह में और कई यह कहते हुए कि भविष्य में जो हेला होगा सो होगा, वहीं यानि पाटलिपुत्र बाहर जा ही नहीं सकेंगे।
662. इसके पश्चात लगातार सतरह रात-दिनों तक मूसलाधार बारिश होगी। गंगा-सोन नदियों में इस वर्षा के वेग से भयंकर बाढ़ आ जाएगी।
663. गंगा और सोन के बाढ़ और मूसलाधार दुर्द्धर्ष वर्षा के कारण रमणीय पाटलिपुत्र नगर पूरी तरह से डूब जाएगा।
- 664+665. आलोचना कर निःशल्य बने तथा प्रत्याख्यान में पूरे यत्न से संलग्न साधु गंगा के तीव्र वेग के द्वारा उस बाढ़ से बाहर फेंक दिये जाएंगे। लेकिन जो साधुगण अपने उपकरणों में अत्यधिक राग से बंधे हुए हैं वे सब करुण दृष्टि से देखते हुए वसति आदि के साथ ही गंगा के प्रवाह में बह जाएंगे।
666. "हे स्वामी सनत्कुमार! तू श्रमणसंघ के शरण बनो। यह श्रमण संघ की वैयावृत्य यानि सेवा करने का समय है।" ऐसा कहते हुए श्रमण बाढ़ में नहीं बहेंगे।
667. इसी तरह आलोचना कर निःशल्य बनी हुई तथा प्रत्याख्यान करने में पूर्णतः मग्न साध्वियां भी गंगा की तीव्र अग्रधारा द्वारा बाढ़ से बाहर फेंक दी जाएंगी। अर्थात् वे भी नहीं डूबेंगी।
668. कुछ साध्वियां जो अपने उपकरणों आदि में अत्यधिक आसक्त हैं, करुण दृष्टि से अपने उपकरणों को देखती हुई वसतियों सहित बाढ़ के पानी में बह जाएंगी।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

669. 'सामियसणकुमारा! सरणं ता होहि समणसंघस्स'।  
इणमो वेयावच्चं भणमाणीणं न वट्टिहिति।।
670. आलोइयनिस्सल्ला समणीओ पच्चकखाइऊण उज्जुत्ता।  
उच्छिप्पिहिति धणियं गंगाए अग्गवेगेणं।।
671. केई फलगविलग्गा वच्चंती समण-समणिसंघाया।  
आयरियादी य तहा उत्तिन्ना बीयकूलम्मि।।
672. नगरजणो वि य वूढो कोई लदधूण फलगखंडाई।  
समुत्तिन्नो बीयतडं, कोई पुण तत्थ निहणगतो।।
673. रण्णो य अत्थजायं पाडिवतो चेव कक्किराया य।  
एयं हवइ उ<sup>३</sup> बुड्ढं, बहुयं वूढं जलोहेण।।
674. पासंडा वि य वण्डा (?) वूढा वेगेण कालसंपत्ता।  
चोइधरं (?चेइहरं) तित्थे (?त्थे) वा पविरलमणुयं च संजायं।।
675. सो अत्थपडित्थदधो मज्झं होही जसो य कित्ती य।  
तम्मि य नगरे वूढे अण्णं नगरं निवेसिहिति।।
676. अह सव्वतो समंता कारेही पुरवरं महारम्मं।  
आरामुज्जाणजुयं विरायते देवनगरं व।।
677. पुणरवि आयतणाई, पुणरवि साहू वि तत्थ विहरंति।  
सम्मं च वुट्टिकाओ वासिहि संती य वट्टिहिति।।
678. पडिएण वि कुंभेणं किणं तया य तहिं न हुंति (?)।  
पण्णासं वासाई होही य समुभवो कालो (?)।।
679. पुणरवि य कुपासंडे मेत्त्वावेहिति बला सलिंगाई।  
अइतिव्वलोहघत्थो समणे वि अभिद्वेसी य।

1. 0समणीण सं० प्रतिपाठः।।

2. श्री अगस्त्यसिंहस्थविराः कल्किराजसंबन्धिप्ररूपणाया निषेधं प्रतिपादयन्ति, तथा च तद्रचितदशवैकालिकसूत्रचूर्णिः—“अणागतमदटं ण निद्वारेज्जा—जधा कक्की अमुको वा एवंगुणो राया भविष्यति।” (अगस्त्यसिंहविरचितदशवैकालिकसूत्रचूर्णिः पृ. 166, पं० 24—25, प्राकृतग्रन्थपरिषत्प्रकाशित पुस्तकं)।।

3. हु ला०।। 4. तण्हा वू० ला० विना।। 5. वोइवरं ला० विना।।

## हिन्दी अनुवाद

669. जो साधवियां यह कहती हैं—“हे स्वामी सनत्कुमार! तुम श्रमणसंघ के शरण बनो! यह श्रमणी संघ के वैयावृत्य का समय है। वे सब बाढ़ से बच जाएंगी।”
670. आलोचना कर निःशल्य बनी हुई तथा प्रत्याख्यान करने में पूर्णतः मग्न साधवियां गंगा की तीव्र अग्रधारा द्वारा बाढ़ से बाहर फेंक दी जाएंगी। अर्थात् वे नहीं डूबेंगी।
671. उसमें से कुछ आचार्य और साधु—साध्वी गण फलक लकड़ी के सहारे तैरते हुए दूसरे किनारे पर पार उतर जाएंगे।
672. कुछ नगरवासी भी नाव, फलक, लकड़ी के टुकड़ों आदि के सहारे दूसरे तट पर पार उतर जाते हैं लेकिन शेष सभी उसी में डूब जाएंगे।
673. कल्कि राजा का खजाना, पाडिवत आचार्य और स्वयं कल्की राजा किसी तरह बच जाते हैं, शेष सब उस भयंकर जलप्लावन में डूब जाएंगे।
674. अन्य तीर्थिक साधु भी तीव्र जलप्लावन में डूबकर काल कवलित हो गए। बहुत थोड़े से चैत्यघर, तीर्थ और थोड़े से मनुष्य बचे रह जाते हैं।
675. इसके बाद अपार धन के गर्व में मदोन्मत्त वह कल्की राजा यश और कीर्ति फैलने का लोभ करते हुए उस नगर के डूब जाने पर दूसरा नगर बसाएगा।
676. वह उद्यानों और आरामों से युक्त सभी प्रकार से अति सुरम्य चारों ओर से समचतुरस्र श्रेष्ठ नगर बसाएगा जो देवनगर तुल्य सुशोभित होगा।
677. फिर वहां बहुत से घर—महल आदि बनते हैं तथा वहां साधु भी विहार करने लगते हैं। अनुकूल वृष्टि होती है। फिर से शांति का विद्यमान हो जाती है।
678. उस समय वहां किसी घड़े के गिरने पर भी शब्द नहीं होगा अर्थात् पूर्णरूपेण शांति का काल होगा। इस प्रकार पचास वर्ष तक वहां सुभिक्ष काल रहता है।
679. इसके बाद पुनः उस दुष्टबुद्धि का अत्याचार शुरू हो जाता है। उसके द्वारा अन्य तीर्थिकों के चिह्न, वस्त्र आदि बलपूर्वक छीन लिए जाएंगे तथा तीव्र लोभ कषाय से युक्त कल्की द्वारा श्रमणों पर भी अत्याचार शुरू हो जाएगा।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

680. तइया वि कप्प—ववहारधारओ संजतो तवाउत्तो।  
आणादिट्ठी समणो भावियसुत्तो पसंस(त)मणो॥
681. वीरेण समाइट्ठो तित्थोगालीए जुगपहाणो त्ति।  
सासणउण्णतिजणणो आयरितो होहिती धीरो॥
682. पाडिवतो नामेणं अणगारो ते य सुविहिया समणा।  
दुक्खपरिमोयणट्ठा छट्ठउट्ठमत(वे) वि काहिंति॥
683. रोसेण मिसिमि(संतो) सो कइवाहं तहेव अच्छी य।  
अह नगरदेवयाओ अप्पणिया वित्तिवेसिया (बेंति हे राय)॥
684. किं तूरसि मरिउं जे निसंस! किं बाहसे समणसंघं?  
सव्वं ते पज्जत्तं नणु कइवाहं पडिच्छामि' ॥
685. तासिं पि य असुणेंतो छट्ठं भिक्खस्स मग्गए भागं।  
काउस्सगं ठिया सक्कस्साराहणट्ठाए॥
686. गोवाडम्मि निरुद्धा समणा रोसेण' मिसिमिसायंता।  
अंबा जक्खो य भणति 'राय! म बाहेहि संघं' ति॥
687. काउस्सगगटिएसुं सक्कस्साकंपियं तओ ठाणं।  
आहोहि(इ)य ओहीए सिग्घं तियसाहिवो एइ॥
688. सो दाहिणलोगपती धम्माणुमती अहम्मदुट्ठमती।  
जिणवयणपडि(डी)कुट्ठं नासेहिति खिप्पमेव तयं॥
689. छासीतीओ समाओ उग्गो उग्गाउ(ए) दंडनीतीए।  
भोत्तू गच्छति निहणं नेव्वाण सहस्स दो पुन्ने॥

## हिन्दी अनुवाद

- 680+681. उस समय वहां पर कल्पसूत्र—व्यवहार के धारक संयमी तप में श्रेष्ठ, आज्ञाकारी, सूत्र के अर्थ में मर्मज्ञ, प्रसन्नमना, शांतचित्त, जिन शासन के उन्नति जनक, वीरस्वामी द्वारा तित्थोगाली में युगप्रधान रूप में निर्दिष्ट आज्ञादृष्टि नामक आचार्य होंगे।
682. उस समय पाडिवत नामक अनागार होंगे जो दुखमुक्ति के लिए छट्ठम—अट्ठम (वेला—तेला) का तप करते रहेंगे।
- 683+684. वह कल्कि राजा क्रोध से गुर्गति—मिसमिसाते हुए कई दिनों तक श्रमण संघ को संताप देता रहेगा। तब नगरदेवता स्वयं आकर गुस्से में कल्की राजा से कहते हैं— ' हे राजन! तुम क्यों श्रमण संघ को दुख देते हो ? क्यों शीघ्र मरने की राह बना रहे हो ? क्यों साधुओं पर क्रूरता करते हो ? बस, अब बहुत हो चुका, बोल तू कितने दिनों तक और जीवित रहना चाहता है।'
685. इस चेतावनी को अनसुना करते हुए वह कल्की राजा उन साधुओं से भिक्षा का छट्ठा भाग कर के रूप में मांगने लगा। तब साधु संघ सहायता के लिए कायोत्सर्ग मुद्रा में खड़े होकर शक्र की आराधना करते हैं।
686. उन क्रुद्ध और गुस्से से फुंफकारते हुए कल्की राजा कर न देने पर साधुओं को गाय के बाड़े में बंद कर देगा। तब अम्बा और यक्ष कहते हैं—'राजा! बस करो, तुम संघ को परेशान मत करो।'
687. कायोत्सर्ग मुद्रा में खड़े साधुओं के प्रभाव से इन्द्र का सिंहासन कंपित हुआ और आधोवसिक (अवधि ज्ञान का एक भेद) अवधि ज्ञान के धारक इन्द्र ऐरावत हाथी पर सवार होकर शीघ्र वहां आए।
688. वे दक्षिण लोक का पति, धर्म की बुद्धिवाला, अधर्म के लिए शत्रु समान मतिवाला इन्द्र जिन प्रवचन के विरोधी उस कल्की को मार डालते हैं।
689. इस प्रकार वह उग्रकर्मा कल्की 86 वर्ष की आयु तक राजभोग कर वीर निर्माण के दो हजार वर्ष पूरे होने पर मृत्यु को प्राप्त करेगा।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

(गा. 690-97. कक्कपुत्तदत्तरज्जाभिसेओ संघथुई  
दत्तरायवंसपरंपरानिददेसो य)

690. तस्स य पुत्तं दत्तं इंदो अणुसासिऊण जणमज्जे।  
काऊण पाडिहेरं गच्छइ समणे पणमिऊणं।।
691. भद्दं धितिवेलापरिगयस्स सज्जायसलिलपुन्नस्स।  
अक्खोभस्स भगवओ संघसमुद्दस्स रुंदस्स।।
692. इंदभुयापच्चइयं इंदाणुमयं सधम्मजणियं च।  
सव्वम्मि भरहवासे होही समणाण सक्कारो।।
693. देवो व समणसंघो पुज्जीही सव्वनगर-गामेसु।  
ऊणा वीस सहस्सा अणोवमो 'होहि सक्कारो।।
694. एवं चिय वासेसुं नवसु वि होहिंति सक्कओ राया।  
एगसमएण दस वी सक्कीसाणा उ काहिंति।।
695. दत्तो वि महाराया जिणाययणमंडियं वसुमतिं तु।  
कारेही सो सिग्घं दिवसे दिवसे य सक्कारं।।
696. तस्स सुओ जियसत्तू तस्स वि य सुतो उ मेघघोसो त्ति।  
अन्नोन्नरायवंसा जाव विमलवाहणो राया।।
697. एवं तु मए भणिओ रातीणं वंससंभवो जाव।  
जाव उ दुप्पसहो वि य, एत्तो वोच्छामि सुयहाणिं।।

(गा. 698-701. संखेवओ केवलनाणाइवोच्छेयपरुवणा)

698. चउसट्ठीवरिसेहिं नेव्वाणगतस्स जिणवरिदस्स।  
साहूण केवलीणं वोच्छेतो जंबुणामम्मि।।

1. होहीति प्रतिपाठः।।  
2. दीस वि प्रतिपाठः।।

## हिन्दी अनुवाद

(कल्की पुत्र दत्त का राज्याभिषेक, संघ की वंदना तथा दत्त  
के बाद राजवंश की परंपरा का निर्देश, गाथा. 690-97)

690. इन्द्र जनसमूह की उपस्थिति में मृत कल्की के पुत्र दत्त को अनुशासन  
का पाठ पढ़ा कर राज्य पर आरूढ करते हैं तथा मुनियों को प्रणाम  
कर वापस चले जाते हैं।
691. धीति यानी धैर्य की मर्यादा में अवस्थित, स्वाध्याय रूपी निर्मल जल  
से पूर्ण, कभी भी क्षुब्ध न होनेवाले भगवत रूपी महान संघ समुद्र का  
कल्याण हो।
692. इन्द्र भुजा द्वारा प्रवर्तित और इन्द्र द्वारा अनुमत सदधर्म की प्रतिष्ठा को  
देखकर संपूर्ण भरत क्षेत्र में श्रमणों का सत्कार होना शुरु हो जाएगा।
693. इस प्रकार उन्नीस हजार वर्ष तक सभी नगरों एवं ग्रामों में देवताओं  
के समान श्रमण संघ का अनुपम सत्कार होगा।
694. इसी प्रकार शेष नौ क्षेत्रों में भी शक राजा होंगे। ये सभी दस शक  
राजा एक ही समय में अपनी राजाज्ञा चलाएंगे अर्थात् शासन करेंगे।
695. दत्त राजा भी जल्दी ही पृथ्वी को जिनमंदिरों से मंडित करवाते हैं तथा  
दिन-प्रतिदिन श्रमण संघ का सत्कार-पूजादि करने लगेंगे।
696. उनके पुत्र जितशत्रु तथा जितशत्रु के पुत्र मेघघोष होंगे। इस प्रकार  
विमलवाहन राजा के शासनकाल तक अन्यान्य राजवंश होंगे।
697. इस प्रकार मैंने यहां नए राजवंशों के उदभव के बारे में कहा। अब मैं  
यहां आगे इस अवसर्पिणी काल के अंतिम आचार्य दुःप्रसह तक  
होनेवाली श्रुतहानि के बारे में कहूंगा।

(संक्षेप में केवल ज्ञान आदि के विच्छेद का प्ररूपण)

698. भगवान महावीर के निर्वाण प्राप्ति के 64 वर्ष बाद जंबू नामक केवली  
साधु के निर्वाण के साथ ही केवल ज्ञानी साधुओं का लोप हो जाएगा।  
यानि, जंबू अंतिम केवली होंगे, इसके बाद इस अवसर्पिणी काल में  
कोई केवली नहीं होगा।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

699. मण परमोहि पुलाए आहारग खमग उवसमे कपे।  
संजमतिय केवलि सिज्जणा य जंबुम्मि वोच्छिन्ना।।
700. नवसु वि वासेसेवं मण-परमोही- पुलागमादीणं।  
समकालं वोच्छेओ तित्थोगालीए निददट्ठो।।
701. चोददसपुव्वच्छेओ वरिससते सत्तरे विणिदिदट्ठो।  
साहूमि थूलभददे अन्ने य इमे भवे भावा।।
- (गा. 702- 806. वदधमाणसामीओ थूलभददपज्जंता पट्टपरंपरा  
थूलभददचरियगढ्मा य पुव्वधरपरुवणा)
702. कोती कयसज्जातो समणो समणगुणनिउणचिंचइओ।  
पुच्छइ गणिं सुविहियं 'अइसयनाणी महासत्तं।।
703. 'भयवं! कह पुव्वातो(?इ) नट्ठाइ उवरिमाइं चत्तारि ?।  
एयं जहोवदिट्ठं इच्छह सभावतो कहिउं'।।
704. "जह पाडलस्स गुणपायडस्स ति(?वि) परंपरागओ गंधो।  
संसग्गीसंकंतो अहिययरं पायडो होइ।।
705. एवं सुयधरपडिपुच्छतो नरो परममंदमेहावी।  
थोव(?प)डिपुच्छतो पुण जसपायडगंधतो होइ।।
706. विण्णाणं जिणवयणं वयाणि न वि दिज्जए अधन्नस्स।  
धण्णस्स दिज्जइ पुणो सददहमाणस्स भावेणं।।
707. अम्हं आयरियाणं सुतीए कण्णाहडं च सोउं जे।  
तित्थोगाली एयं एगमणा मे निसामेह"।।
708. तिण्णि य वासा मासट्ठ अद्ध बावत्तरि च सेसाइं।  
सेसाए चउत्थीए तो जातो वड्ढमाणरिसी।।

1. 'अतिशयज्ञानिनम्' इत्यर्थः।।

## हिन्दी अनुवाद

699. मनःपर्यव ज्ञान, परम अवधि ज्ञान, पुलाक लब्धि, आहारक शरीर, क्षपक श्रेणी, उपसम श्रेणी, जिनकल्प, संयम त्रिक (परिहारविशुद्धि, चारित्र, सूक्ष्म संपराय एवं यथाख्यात) केवली और सिद्धत्व जैसी आध्यात्मिक शक्तियों का जम्बू के साथ ही विच्छेद हो जाएगा।
700. इसी तरह तित्थोगाली में निर्दिष्ट किया गया है कि शेष नौ क्षेत्रों में भी मनःपर्यव, परम अवधि, पुलाक लब्धि आदि अतिशयों का विच्छेद उसी समय में एक साथ ही हो जाएगा।
701. वीर निर्वाण के 170 वर्ष पश्चात स्थूलभद्र मुनि के साथ चौदह पूर्वों का विच्छेद हो जाएगा। साथ ही अन्य घटनाएं होने का निर्देश किया गया है।
- (वर्द्धमान स्वामी से स्थूलभद्र पर्यन्त पट्ट परंपरा, स्थूलभद्र का चरित्र चित्रण एवं पूर्वधरों का प्ररूपण, गाथा-702-806)
- 702+703. साध्वाचार में निपुण तथा प्रसिद्ध कोई श्रमण स्वाध्याय करके अतिशयज्ञानी, पराक्रमी सदाचारी गणाचार्य से पूछता है-"भगवन,! पूर्व काल में प्रथम चार पूर्व कैसे नष्ट हुए। इसे जैसा आपने अपने ज्ञानातिशय से देखा, जाना, सुना है, उसी प्रकार सदभावपूर्वक कहने की कृपा कीजिये।"
- 704+705. "जिस प्रकार सुगंधित गुलाब परंपरा से निजगुणों के आवृत गंधी के संसर्ग को प्राप्त होने पर या स्पर्श करने पर और अधिक सुगंधित हो जाता है, उसी प्रकार श्रुतधर से प्रश्न करते हुए परम मंद व्यक्ति भी मेधावी हो जाता है। लेकिन बार-बार प्रतिपृच्छा करने पर वही दुर्गन्धपूर्ण हो जाता है।"
706. जिनवचन का ज्ञान जानते हुए अयोग्य पात्र को नहीं देना चाहिए। इसे श्रद्धाभाव से भावित योग्य व्यक्ति को ही देना चाहिए।
707. यह सोचकर गणधर कहते हैं-"मैंने आचार्यों से या परंपरागत श्रुति के आधार पर सूत्र रूप में जो तीर्थ के उदभव और पराभव को जाना-सुना है, उसे एकाग्रचित्त होकर सुनो।"
708. चौथे आरे की समाप्ति में 75 वर्ष साढ़े आठ महीने शेष रहने पर वर्द्धमान महावीर का जन्म हुआ।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

709. अट्ठ य सऽद्धा मासा तिन्नेव हवन्ति तह य वासाइं।  
सेसाए चउत्थीए तो कालगतो महावीरो।।
710. तम्मि गए गयरारो वोच्छिन्न'पुण्णभवे जिणवरिदे।  
तित्थोगालिसमासं एगमणा मे निसामेह।।
711. नाणुत्तमस्स धम्मुत्तमस्स धम्मियजणोवदेसस्स।  
आसि सुधम्मो सीसो वायरधम्मो य (?प)उरधम्मो।।
712. तस्स वि य जुबुणाभो जंबूणयरासितवियसमवण्णो।  
तस्स वि पभवो सीसो, तस्स वि सेज्जंभवो सीसो।।
713. सेज्जंभवस्स सीसो जसभददो नाम आसि गुणरासी।  
सुदरकुलप्पसूतो संभूतो नाम तस्सावि।।
714. सत्तमतो थिरबाहू जाणुयसीससुपडिच्छियसुबाहू।  
नामेण भददबाहू अविही(हिं)सा धम्मभददो त्ति।।
715. सो वि य चोददसपुव्वी बारस वासाइं जोगपडिवन्तो।  
सुत्तऽत्थेण निबंधइ अत्थं अज्झयणबंधस्स।।
716. बलियं च अणावुट्ठी तइया आसी य मज्झदेसस्स।  
दुब्भिक्खविप्परद्धा अण्णं विसयं गया साहू।।
717. केहि वि विराहणाभीरुएहिं अइभीरुएहिं कम्माणं।  
समणेहि संकिलिट्ठं पच्चक्खायाइं भत्ताइं।।
718. वेयड्ढकंदरासु य नदीसु सेढी-समुददकूलेसु।  
इहलोगअपडिबद्धा य तत्थ जयणाए वट्ठति।।

1. 0पुण्णभवे सं० ला०।।

## हिन्दी अनुवाद

709. चौथे आरे की समाप्ति में तीन वर्ष साढ़े आठ महीने शेष रहने पर भगवान महावीर को निर्वाण प्राप्त हुआ।
710. वीतराग भगवान महावीर के मोक्ष जाने और अगले काल में पुनः पहले तीर्थंकर के उत्पन्न होने के बीच तीर्थ के ओगगाल यानि प्रवाह को संक्षेप रूप में एकाग्रचित्त होकर सुनो।
711. ज्ञानश्रेष्ठ, धर्मश्रेष्ठ, धर्म का उपदेश जन सामान्य में करने में प्रवीण, आचार धर्म का पालन करने वाले, श्रेष्ठ धार्मिक मुनि जिनके बहिर और अंतर धर्म से आप्लावित था, ऐसे सुधर्मा नामक उनके यानि भगवान महावीर के शिष्य हुए।
712. उनके तप आदि से संपन्न जंबू नामके शिष्य हुए जिनका वर्ण तपाई हुई जंबू नद राशि के समान था। जंबू के शिष्य प्रभव और प्रभव के शिष्य सयंभव हुए।
713. सयंभव के शिष्य यशोभद्र थे। वे गुणों की राशि थे। उनके शिष्य सुंदरकुल में उत्पन्न संभूत हुए।
714. भगवान महावीर के सातवें पटट्ठर आजानु बाहु अर्थात् घुटने के मध्य तक सुप्रतिष्ठित सुन्दर बाहु वाले भद्रबाहु थे। वे हिंसा आदि से विरत होने के कारण धर्मभद्र भी कहे जाते थे।
715. वह 14 पूर्वों के धारक थे तथा 12 वर्षों तक व्रतों तथा योग की साधना में निरत रहे। उन्होंने छेदसूत्रों को निबद्ध किया।
716. उस समय मध्य देश में प्रबल अनावृष्टि हुई। दुर्भिक्ष से पीड़ित अनेक लोग नष्ट हो गये तथा कई अन्य साधु दूसरे देशों को चले गए।
717. कितने ही साधुओं ने व्रतों के खंडन के भय से तथा कर्मों के बंधन से डरकर संक्लेशयुक्त आहार का प्रत्याख्यान कर अनशन का व्रत ले लिया।
718. कोई वैताद्वय पर्वत की गुफाओं में, कोई नदियों के तटों पर, कई साधु पर्वत की तलहटियों में और कितने साधु समुद्र के तटवर्ती इलाकों में जाकर इस लोक तथा अपने शरीर से भी निस्पृह जीवन संयमपूर्वक व्यतीत करने लगे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

719. ते आगया सुकाले सग्गमणसेसया ततो साहू।  
बहुयाणं वासाणं मगहाविसयं अणुप्पत्ता।।
720. ते दाइं एक्कमेक्कं गयमयसेसा चिरं सुददूणं।  
परलोगगमणपच्चागय व्व मण्णति अप्पाणं।।
721. ते बेंति एक्कमेक्कं 'सज्झाओ कस्स केत्तिओ धरति ?।।  
हदि हु दुक्कालेणं अम्हं नट्ठो उ सज्झाओ।।
722. जं जस्स धरइ कंठे तं तं परियट्ठिऊण सवेसिं।  
तो णेहिं पिंडिताइं तहियं एक्कारसंगाइं।।
723. ते बेंति "सव्वसारस्स दिट्ठिवायस्स नत्थि पडिसारो।  
कह पुव्वधरेण विणा पवयणसारं धरेहामो?।।
724. सम्मस्स भद्दबाहुस्स नवरि चोददस वि परिसेसाइं।  
पुव्वाइं अण्णत्थ उ न कहिचि वि अत्थि पडिसारो।।
725. सो वि य चोददसपुव्वी बारस वासाइं जोगपडिवन्नो।  
देज्ज न व देज्ज वा वायणं ति वाहिप्पऊ ताव"।।
726. संघाडएण गंतूण आणितो संमणसंघवयणेणं।  
सो संघथेरपमुहेहि गणसमूहेहिं आभट्ठो।।
727. 'तं अज्जकालियजिणो (?य) वीरसंघो तं (?उ) जायए सब्बो।  
पुव्वसुय'क्कमधारय! पुव्वाणं वायणं देहि'।।
728. सो भणति एव भणिए असि (?लि)ट्ठकिलिट्ठएण व्वयणेणं।  
"न हु ता अहं समत्थो इण्हं भे वायणं दाउं।।
729. 'अप्पट्ठे आउत्तस्स मज्झ किं वायणाए कायव्वं"।।  
एवं च भणियमेत्ता रोसंस्स वसं गया साहू।।

1. 0सुयकम्मघा0 सर्वासु प्रतिषु।।

2. वयणाणं सर्वासु प्रतिषु।।

## हिन्दी अनुवाद

719. इस प्रकार बहुत वर्षों तक अकाल रहने के बाद जब सुभिक्ष हुआ तब परलोक जाते-जाते जो शेष बचे थे, वे सब साधु फिर मगध देश में एकत्र हुए।
720. अकाल में मरने से बच गए वे सब साधु एक-दूसरे को चिरकाल बाद देखकर अपने को मृत्यु के मुख से पुनः वापस आ जाने के समान अनुभव करने लगे।
721. वे सब एक-दूसरे से कहने लगे- " किसो कितना स्वाध्याय आगम पाठ याद है। दुख है! उस दुष्काल में हमारे कितने स्वाध्याय तो नष्ट हो गये हैं।"
722. जिसको जितना याद था, उससे उतना सुनकर सबके आगम पाठों का परावर्तन किया गया। इस प्रकार कहते-सुनते एकत्रित करते हुए उन्होंने यानि उन स्थविरों ने 11 अंगों को क्रमबद्ध तरीके से संकलित कर लिये।
723. इसके बाद वे कहने लगे- " सभी अंगों का सार दृष्टिवाद का ज्ञाता कोई नहीं है। बिना पूर्वधर के प्रवचन के हम सब कैसे इसके सार को धारण कर सकते हैं ?
724. सम्यक्त्वी भद्रबाहु को सभी 14 पूर्वों का ज्ञान कंठस्थ है। पर अन्यत्र किसी किसी के भी स्मृति में पूर्वों का ज्ञान नहीं है।
725. वहां वे चौदहपूर्वी भद्रबाहु 12 वर्षों का योग धारण किये हुए हैं। इसलिए वाचना देंगे या नहीं, यह संशय है। फिर भी उनसे प्रार्थना की जाए।"
726. श्रमण संघ के वचन को लेकर गण के प्रमुख साधुओं के एक समूह ने जाकर भद्रबाहु से श्रमण संघ का वचन सुनाया। संघ के प्रमुख स्थविरों ने भद्रबाहु से निवेदन किया।
727. "हे पूर्व श्रुतकर्म के धारक! वर्तमान काल के जिन भगवान महावीर का संघ आपसे निवेदन करता है कि पूर्वों की वाचना कृपा कर दीजिए।"
- 728+729. तब भद्रबाहु अशिष्ट और क्लिष्ट वचन कहते हैं-"इस समय मैं वाचना देने में असमर्थ हूँ। और अपने आत्मिक कार्य में लगे हुए मुझको वाचना देने का भी क्या प्रयोजन?" उनके ऐसा कहने पर साधु समूह क्रोधित हो गया।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

730. अह विण्णविति साहू 'तं चेव सि पाडिपुच्छणं अहं।  
एव भणंतस्स तुहं को दंडो होइ? तं मुणसु' ॥
731. सो भणति एव भणिए अविस्सन्नो वीरवयणनियमेण।  
'वज्जेयव्वो सुयनिहत्तो त्ति अह सब्बसाहूहिं' ॥
732. 'तं एव जाणमाणो नेच्छसि ने पाडिपुच्छयं दाउं।  
तं थाणं पत्तं ते, कह तं पासे ठवीहामो?' ॥
733. बारसविहसंभोगे (य) वज्जेए तो तयं समणसंघो।  
'जं ने जाइज्जंतो न वि इच्छसि वायणं दाउं' ॥
734. सो भणति एव भणिए जसभरितो अयसभीरुतो धीरो।  
'एक्केण कारणेणं इच्छं भे वायणं दाउं' ॥
735. अप्पट्ठे आउत्तो परमट्ठे सुट्ठु दाणि उज्जुत्तो।  
न वि हं वाहरियव्वो, अहं पि न वि वाहरिस्सामि' ॥
736. पारियकाउस्सग्गो भत्तट्ठित्तो (? ट्ठित्तो) व अहव सज्जाए।  
निंतो व अइंतो वा एवं भे वायणं दाहं' ॥
737. 'बाढं' ति समणसंघो 'अम्हे अणुयत्तिमो तुहं छंदं।  
देहि य, धम्मो(?म्मा)बाहं (?य) तुम्हं छंदेण घेच्छामो' ॥
738. जे आसी मेहावी उज्जुत्ता गहण-धारणसमत्था।  
ताणं पंचसयाइं सिक्खगसाहूण गहियाइं ॥
739. वेयावच्चगरा से एक्केक्स(स्से)व 'उव्वि(ट्ठि)या दो दो।  
भिक्खम्मि अपडिबद्धा दिया य रत्तिं च सिक्खंति' ॥

1. उज्जिया हं। उच्चिया की० ॥

## हिन्दी अनुवाद

730. अब स्थिविरो ने कहा—“दुख है, हमलोग आपसे ही प्रतिप्रश्न पूछते हैं कि आपके ऐसा कहने का क्या दंड विधान है? आप हमें यह बताएं।”
731. अब भद्रबाहु कहते हैं—“वीर शासन के नियमानुसार, ऐसा बोलने वाले श्रुत के अपलापक को सभी साधुओं द्वारा बहिष्कार कर दिया जाना चाहिए।”
- 732+733. साधु समूह कहता है—“आप यह जानते हुए भी संघ की प्रार्थना पर वाचना देने को तैयार नहीं हो रहे हैं। आप भी मिथ्यालाप को प्राप्त हुए हैं। ऐसी स्थिति में हमलोग आपको अपने संघ के साथ कैसे रख सकते हैं? आप जानते हुए भी वाचना देने को तैयार नहीं हो रहे हैं। इसलिए श्रमण संघ आपको सभी बारहों प्रकार के व्यवहार से वंचित करता है।”
734. ऐसा कहने पर अपयश से डरनेवाले, कीर्तिवान, पराक्रमी यशस्वी एवं धैर्यशाली भद्रबाहु ने कहा—“एक शर्त पर मैं वाचना देने को तैयार हूँ।
- 735+736. बिना पूछे संयत रहकर परमार्थ का ज्ञान अच्छी तरह से प्रयत्नपूर्वक ग्रहण करना होगा। आत्मकल्याण में इस तरह से उद्यत मुझसे कुछ भी नहीं पूछना होगा और मैं भी उससे कुछ नहीं कहूँगा। इस तरह मैं केवल कायोत्सर्ग ध्यान पूरा करने के बाद, भोजन के समय और राह में आते-जाते ही वाचना दे पाऊँगा।”
737. श्रमण संघ ने इस शर्त को स्वीकार कर लिया और कहा—“हम आपकी इच्छा के अनुसार ही कार्य करेंगे। आप धर्म की वाचना दें। हम आपको हर प्रकार की छंद यानि शर्त से मुक्त करते हैं।”
738. इस प्रकार उनमें से जो मेधावी, ऋजु, ग्रहण-धारण करने में समर्थ थे, ऐसे 500 साधुओं को वाचना ग्रहण करने के लिए चयन किया गया।
739. उन पाच सौ साधुओं में से प्रत्येक के वैयावृत्त्य के लिए दो-दो सेवक साथ रखे गए। वे सब साधु भिक्षा आदि से निश्चिंत होकर रात-दिन समय-समय पर शिक्षा प्राप्त करने लगे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

740. ते 'एगसंघसाहू वायणपडिपुच्छणाए परितंता।  
वाहारं अलहंता तत्थ य जं किंचि असुणंता।।
741. उज्जुत्ता मेहावी सद्धाए वायणं अलभमाणा।  
अह ते थोवथो(त्थो)वा सव्वे समणा विनिस्सरिया।।
742. एको नवरि न मुंचति सगडालकुलस्स जसकरो धीरो।  
नामेण थूलभद्दो अविही(हिं) साधम्मभद्दो त्ति।।
743. सो नवरि अपरितंतो पयमद्धपयं च तत्थ सिक्खंतो।  
अन्नेइ भद्दबाहुं थिरबाहू अट्ठ वरिसाइं।।
744. सुंदरअट्ठपयाइं अट्ठहिं वासेहिं अट्ठमं पुवं।  
भिंदति अभिण्णहियतो आमेलउं अह पवत्तो।।
745. तस्स वि दाइं समत्तो तवनियमो एव भद्दबाहुस्स।  
सो पारिततवनियमो वाहरिउं जे अह पवत्तो।।
746. अह भणइ भद्दबाहू 'पढमं ता अट्ठमस्स वासस्स।  
अणगार! न हु किलम्मसि भिक्खे सज्जायजोगे य'।।
747. सो अट्ठमस्स वासस्स तेण पढमिल्लयं समाभट्ठो।  
'कीस य परितम्मीहं धम्मावाए अहिज्जंतो'।।
748. एकं ता भे पुच्छं 'केत्तियमेत्तं मि सिक्खितो होज्जा ?।  
केत्तियमेत्तं च गयं? अट्ठहिं वासेहिं किं लद्धं?'।।
749. 'मंदरगिरिस्स पासम्मि सरिसवं निक्खिवेज्ज जो पुरिसो।  
सरिसवमेत्तं विगयं मंदरमेत्तं च ते सेसं'।।

1. एव संघो सं०।।

2. ०परिपु० की० ला०।।

3. वोहरि सं०। वोहरिद्ध हं०। मोहरि० की०।।

## हिन्दी अनुवाद

- 740-741. उन साधुओं का संघ वाचना तथा बार-बार की प्रतिपृच्छा के परिताप से अर्थात् बार-बार की पूछताछ से हतप्रभ हो एवं व्यवहार में उन गहन-गंभीर वाचनाओं की व्याख्याओं को पूरी तरह से न समझ पाने के कारण प्राज्ञ, परिश्रमी, श्रद्धावान सभी साधुगण यथेप्सित वाचना नहीं मिलने के कारण वहां से थोड़े-थोड़े की संख्या में बाहर चले गए।
742. केवल एक साधु शकडालकुल के यशस्वी, धीर, स्थूलभद्र नामके थे जो वहां बचे रह गए। व्रतों का पालन करने के कारण वे धर्मभद्र के नाम से भी जाने जाते हैं।
743. वे किसी प्रकार के परिताप से मुक्त रहकर वहां पद, आद्य पद-जो कुछ भी सिखाया जाता, उसे याद रखते हुए स्थिरबाहु भद्रबाहु की आठ वर्षों तक सेवा करते रहे।
744. पूर्ण के सुंदर, गूढ, गहन अर्थ तथा पदों का अवगाहन करते हुए आचार्य स्थूलभद्र आठवें वर्ष में आठवें पूर्व को हृदयंगम करने में प्रवृत्त रहे।
745. भद्रबाहु भी अब समस्त तप-नियम से निवृत्त हुए अर्थात् उनकी तपस्या पूर्ण हुई। इसके बाद वह भी शिष्य स्थूलभद्र को अधिकाधिक वाचना देने में प्रवृत्त हुए।
746. अब भद्रबाहु आठवें वर्ष में पहली बार पूछते हैं—“अनगार! तुम्हें भिक्षा, स्वाध्याय तथा व्रत आदि में कठिनाई तो नहीं हो रही है?”
747. भद्रबाहु द्वारा आठवें वर्ष में पहली बार पूछे इस प्रश्न पर स्थूलभद्र ने कहा—“धर्मवाद का अध्ययन करते हुए मुझे किसी प्रकार की कठिनाई कैसे हो सकती है।
748. लेकिन, एक बात मैं पूछना चाहता हूँ— हमें कुल कितना सीखना था। आठ वर्षों में इसमें से हमने कितना सीखा है और कितना अभी शेष है?”
749. भद्रबाहु बोले—“मंदराचल पहाड़ के पास में व्यक्ति सरसों के दानों का ढेर लगाए। उसमें से एक सरसों के दाने भर पूर्ण हुआ है और मंदर जितना अभी सीखना बाकी है।”

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

750. सो भणति एव भणिए 'भीतो न वि ता अहं समत्थो मि।  
अप्पं च महं आउं बहू (य) सुयमंदरो सेसो' ॥
751. 'मा भाहि नित्थरीहिसि अप्प(य)तरएण वीर ! कालेणं।  
मज्झ नियमो समत्तो पुच्छाहि दिवा य रत्तिं च' ॥
752. सो सिक्खिउं पयत्तो दिट्ठत्थो सुट्ठु दिट्ठिवायम्मि।  
पुव्वक्खतोवसमियं पुव्वगतं पुव्वनिदिदट्ठं ॥
753. संपति एक्कारसमं पुव्वं अतिवयति वणदवो चेव।  
इत्ति तओ भगिणीतो दट्ठुमणा वंदणनिमित्तं ॥
754. जक्खा य जक्खदिण्णा भूया तह हवति भूयदिण्णा य।  
सेणा वेणा रेणा भगिणीतो थूलभददस्स ॥
755. एया सत्त जणीओ बहुस्सुया नाण-चरणसंपण्णा।  
सगडालबालियातो भाउं अवलोइउं एंति' ॥
756. तो वंदिऊण पाए सुभददबाहुस्स दीहबाहुस्स।  
पुच्छंति 'भाउओ णे कत्थ गतो थूलभददो ?' त्ति ॥
757. अह भणइ भददबाहू 'सो परियट्ठंति सिवघरे अंतो।  
वच्चह तहिं विदच्छिह सज्जाय-ज्जाणउज्जुत्तं ॥
758. इयरो वि य भगिणीओ दट्ठूणं तत्थ थूलभददरिसी।  
चिंतइ गारवयाए 'सुयइडिडं ताव दाएमि' ॥
759. सो धवलवसभमेत्तो जातो विक्खिण्णकेसरजडालो।  
घणमुक्कससि<sup>२</sup>सरिच्छो कुंजरकुलभीसणो सीहो ॥
760. तं सीहं दट्ठूणं भीयाओ सिवघरा विनिस्सरिया।  
भणितोय णाहिं (उ) गुरु 'एत्थ हु सीहो अतिगतो' त्ति ॥

1. इति हं ॥

2. 0सिरिच्छो सं० हं० की० ॥

## हिन्दी अनुवाद

750. स्थूलभद्र बोले—'मैं इससे बहुत भयभीत हूँ। मैं इसे धारण करने में समर्थ नहीं हो सकूंगा। क्योंकि आयु अत्यल्प है और महान श्रुतज्ञान मंदर पर्वत जितना शेष है।'
751. स्थूलभद्र को आश्वस्त करते हुए भद्रबाहु बोले—'हे वीर! डरो नहीं, तुम अब वाचना सागर में तैरकर पार करने में काल से मत डरो। अब मेरा ध्यान-योग समाप्त हो गया है। दिन-रात मुझसे सीखो।'
752. अब स्थूलभद्र प्रोत्साहित होकर दृष्टिवाद में समीचीनता का सार देखकर पूर्व क्षयोपशम के फलस्वरूप पूर्व निर्दिष्ट पूर्वगतों को तेजी से सीखने में प्रवृत्त हो गये।
753. एक दिन स्थूलभद्र एकान्त वन में बैठकर ग्यारहवें पूर्व को कंठस्थ कर रहे थे। तभी उनकी बहनें उनके दर्शन तथा वंदन के निमित्त खुशीपूर्वक वहां आयीं।
- 754+755. स्थूलभद्र की ये सात बहनें बहुश्रुत तथा ज्ञान और चारित्र्य से संपन्न थीं। इनके नाम थे—यक्षा, यक्षदिन्ना, भूता, भूयदिन्ना, सेना, वेणा और रेना। ये सब शकडाल की पुत्रियां अपने भाई के दर्शनार्थ आयीं।
756. वे सब दीर्घबाहु भद्रबाहु के चरणों में वंदन कर उनसे पूछने लगीं—'मेरे भ्राता स्थूलभद्र कहां हैं।'
757. भद्रबाहु बोले—'वह जिनमंदिर के अंदर पठित पाठों को याद कर रहा है तथा स्वाध्याय-ध्यान में निमग्न है। वहीं जाकर दर्शन करो।'
758. इधर बहनों को दर्शनार्थ आता जान स्थूलभद्र मुनि गर्वपूर्वक सोचते हैं—'उन सबको मैं अपनी श्रुत ऋद्धि दिखाऊंगा।'
759. यह सोचकर श्वेत वृषभ सदृश स्थूलभद्र विस्तीर्ण केसर की जटावाले, बादल से मुक्त चंद्र सदृश हाथियों के समूह के लिए भयंकर सिंह बन जाते हैं।
760. उस सिंह को देखकर बहनें जिनमंदिर से भयभीत होकर बाहर भाग आयीं और जाकर भद्रबाहु से कहने लगीं—'गुरुदेव! वहां तो मेरा भाई नहीं है। वहां तो विकराल सिंह बैठा है।'

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

761. 'नत्थेत्थ कोइ सीहो, सो चेव य एस भाउओ तुभं।  
इड्ढीपत्तो जातो (तो) सुयइड्ढिं पयंसेइ' ॥
762. तं वयणं सोऊणं तातो अंचियतणूरुहसरीरा।  
संपत्थियाओ तत्तो जत्तो सो थूलभदरिसी ॥
763. जह सागरो व्व उव्वेलमतिगतोपडिगतो सयं ठाणं।  
संपलियं कनिसन्नो धम्मज्झाणं पुणो झाइ।
764. दुपु(?उग्घु)ट्ठमहुरकंठं सो परियट्ठेइ ताव पाढमयं।  
भणियं च नाहिं 'भाउग! सीहं दट्ठूण ते भीया' ॥
765. सो वि य पागडदंतं दरवियसियकमलसच्छं हसिउं।  
भणइ य 'गारवयाए सुयइड्ढी दरिसिया य मए' ॥
766. तं वयणं सोऊणं तातो अंचियतणूरुहसरीरा।  
पुच्छंति पंजलिउडा वागरणत्थे सुणिउणत्थे ॥
767. इयरो वि य भगिणीओ वीसज्जेऊण थूलभदरिसी।  
उचियम्मि देसकाले सज्झायमुवट्ठिओ काउं ॥
768. अह भणइ भददबाहू 'अणगार ! अलाहि एत्तियं तुज्झं।  
परियट्ठंतो अच्छसु एत्तियमेत्तं चियत्तं मे' ॥
769. अह भणइ थूलभददो पच्छायावेण तावियसरीरो।  
'इड्ढीगारवयाए सुयविसयं जेण अवरदधं' ॥
770. न वि ताव मज्झ मणुं जह मे ण समाणियाइं पुव्वाइं।  
अप्पा हु मए अवराहितो त्ति खलियं खमे मज्झं ॥
771. एतेहि नासियव्वं सए वि णाए वि तह(?) सासणे भणियं।  
जं पुण मे अवरदधं एय पुण डहति सव्वंगं ॥

## हिन्दी अनुवाद

761. भद्रबाहु बोले—“वहां कोई सिंह नहीं है बल्कि तुम्हारा भाई ही है।  
ऋद्धि प्राप्त कर वह श्रुत सिद्धि के प्रभाव को दिखला रहा है।”
- 762+763. उनके वचन सुनकर वे तप से निर्जर और दुबले शरीरवाली हो  
चुकीं बहनें एक बार फिर जिनमंदिर में गयीं, जहां स्थूलभद्र मुनि बैठे  
थे। वहां, जैसे सागर ज्वार आने पर उच्छलित होकर पुनः अपने स्थान  
पर स्थिर हो जाता है, उसी प्रकार स्थूलभद्र ऋषि पद्मासन में धर्म  
यान में बैठे हुए थे।
764. उस समय वह मधुर स्वर में अपने पाठ को दुहरा रहे थे। बहनें आकर  
बोलीं—“भाई! तुम्हें सिंह रूप में देखकर हम सब डर गयी थीं।”
765. स्थूलभद्र इस पर अर्द्धविकसित कमल सदृश दांतों को दिखाते हुए कहते हैं—  
“मैं तुम लोगों को अपनी अति गंभीर श्रुत की सिद्धि का प्रभाव दिखलाया है।”
766. उनके वचन सुनकर वे तप से निर्जर और दुबली शरीरवाली हो चुकीं  
बहनें करबद्ध होकर उनसे सुनने के लिए व्याकरण के अति सुंदर गूढार्थ को  
पूछने लगीं।
767. कुछ देर बाद बहनों को विदा कर स्थूलभद्र मुनि उचित समय पर स्वा  
याय प्राप्त करने भद्रबाहु के पास पहुंचे।
768. वहां भद्रबाहु ने कहा—“हे अनगार! इसके बाद तुझे अब पढ़ने की कोई  
जरूरत नहीं है। मैंने तुम्हें जो ज्ञान अब तक दिया है, वही पर्याप्त है।  
अब इसी को दुहरा कर याद करते रहो।”
769. तब स्थूलभद्र का शरीर पश्चाताप की आग में जलने लगा। क्योंकि  
ऋद्धि के गर्व से वशीभूत होकर उन्होंने श्रुत विषयक अपराध किया  
था। उन्होंने ग्लानियुक्त होकर भद्रबाहु से निवेदन किया।.....
770. मुझे इस बात का दुख नहीं है कि मैंने पूर्वो का अध्ययन पूरा नहीं कर  
सका। मैंने अपनी आत्मा के साथ अपराध किया है। इससे मैं गिर  
गया हूं। मुझे क्षमा कर दें।
771. जैसा कि जिन शासन में कहा गया है, इन पूर्वो का नष्ट होना तो मेरे  
बिना भी निश्चित है। लेकिन अपराध मेरे द्वारा हुआ, यह सोचकर मेरा  
पूरा शरीर बुरी तरह जल रहा है।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

772. वोच्छंति य मयहत(?हय)रया अणागता जे य संपतीकाले।  
गारवियथूलभदम्मि नाम नट्ठाइं पुब्बाइं" ॥
773. अह विण्णविति साहू सगच्छया करिय अंजलिं सीसे।  
"भददस्स ता पसीयह इमस्स एक्कावराहस्स ॥
774. रागेण व दोसेण व जं च पमाएण किंचि अवरद्धं।  
तं भे सउत्तरगणु अपुणक्कारं खमावेति" ॥
775. अह सुरकरिकरउवमाणबाहुणा भददबाहुणा भणियं।  
"मा गच्छह निब्बंधं, कारणमेगं निसामेह ॥
776. रायकुलसरिसभूते सगडालकुलमि एस संभूतो।  
डहराओ चेव पुणो निम्मातो सब्वसत्थेसु ॥
777. कोसानामं गणियां समिद्धकोसा य विउलकोसा य।  
जीए घरे उवरद्धो रतिसंवेसंवि(?सम्मि) वे(?दे)सम्मि ॥
778. बारसवास पउत्थो कोसाए घरम्मि सिरिधरसम्मि।  
सोऊण य पिउमरणं रण्णो वयणेण निग्गच्छी ॥
779. तेगिच्छिसरिसवण्णं कोसं आपुच्छए तयं धणियं।  
'खिप्पं खु एह सामिय! अहयं न हु 'वायरा सेयं(?)' ॥
780. भवणोरोहविमुक्को छज्जइ चंदो व सोमगंभीरो।  
परिमलसिरिं वहंतो जोण्हानिवहं ससी चेव ॥
781. भवणाओ निग्गओ सो सारंगे परियणेण कड्ढित्तो।  
मत्तवरवारणगओ इ(?अ)ह पत्तो राउलददारं ॥
782. अंतेउरं अइगतो विणीयविणओ परित्तसंसारो।  
काऊण य जयसददो रण्णो पुरतो ठिओ आसि ॥

1. वायरा हं0 की0। वायरा सेद्धं सं0। वायरा सेहं ला0 ॥

## हिन्दी अनुवाद

772. वर्तमान और भविष्य में होनेवाले साधु कहेंगे कि स्थूलभद्र के अभिमान के कारण ही पूर्वो का ज्ञान नष्ट हो गया।"
- 773+774. उस गच्छ के साधुगण भी सिर झुकाकर विनती करते हैं— "हे भद्र! इनके एक अपराध को क्षमा कर दें। राग—द्वेष या प्रमादवश यह अपराध हुआ है। वे अब अवान्तर गुण के साथ वैसा अपराध दुबारा नहीं करेंगे। इन पर कृपा करें।"
775. अपने गच्छ के साधुओं की प्रार्थना सुनकर ऐरावत हाथी के सूंड के समान भुजावाले भद्रबाहु कहते हैं— "वाचना न देने का एक कारण है। उसे सुनिए। आप लोग दुखी मत होइए।"
776. यह स्थूलभद्र राजकुल के सदृश शकडाल कुल में पैदा हुए हैं। बचपन से ये सभी शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त करने में निपुण रहे हैं।
777. एक समय ये प्रचुर धन—धान्य से संपन्न कोशा नामकी गणिका के घर में, जो कि रति के भी प्रासाद से अनुपम था, निवास कर चुके हैं।
778. इन्होंने लक्ष्मी सदृश कोशा गणिका के घर 12 वर्षों तक निवास किया। वहां से पिता की मृत्यु का समाचार सुन तथा राजा की आज्ञा से निकले।
779. उस समय पराग सदृश कोमल वर्णवाली कोशा ने पूछने पर कहा— हे स्वामी! आप जल्द ही इस भवन में फिर वापस आइए। मैं आपके विछोह को सहन नहीं कर सकूंगी।
780. कोशा के भवन की सीढियों से उतरते हुए स्थूलभद्र गंभीर और अमृत के संसर्ग से गंभीर चंद्र की तरह कांतिवाले परिमल की शोभा से शोभित थे।
781. कोशा के भवन से निकलकर परिजनों से घिरे हुए वह स्थूलभद्र मदोन्मत्त गजराज की भांति चलते हुए राजभवन में पहुंचे।
782. राजकुल के अंतःपुर में प्रवेश कर संसार में अनुरक्त स्थूलभद्र विनयपूर्वक सबको प्रणाम कर और राजा का जयकार कर उनके सामने आसन पर बैठ गए।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

783. अह भणइ नंदराया 'मंतिपयं गिण्ह थूलभदद! महं।  
पडिवज्जसु तेवट्ठाइं तिण्णि नगराऽऽगरसयाइं ॥
784. रायकुलसरिसभूए सगडालकुलम्मि तं सि संभूओ।  
सत्थेसु य निम्मातो गिण्हसु पिउसंतियं एयं ॥
785. अह भणइ थूलभददो गणियापरिमलसमप्पियसरीरो।  
'सामी! कयसामत्थो पुणो (वि) भे विण्णवेसामि' ॥
786. अह भणति नंदराया ' केण समं दाइं तुज्झ सामत्थं?।  
को अण्णो वरतरतो निम्मातो सब्बसत्थेसु?' ॥
787. कंबलरयणेण ततो अप्पाणं सुट्ठु संवरित्ताणं।  
अंसूणि' निण्हयंतो असोगवणियं अह पविट्ठो ॥
788. जत्तियमेत्तं दिण्णं जत्तियमेत्तं इमं मि भुत्तं ति।  
एत्तो नवरि पडामो झसो व्व मीणाउलघरम्मि ॥
789. आणा रज्जं भोगा रण्णो पासम्मि आसणं पढमं।  
सुव्वत्त इमं न खमं, खमं तु अप्पक्खमं काउं ॥
790. केसे परिचिंतंतो रायकुलाओ य जे परिकिलेसे।  
नरएसु य जे केसे तो लुंचति अप्पणो केसे ॥
791. तं चिय परिहियवत्थं छेत्तूणं कुणइ अगगतो आरं।  
कंबलरयणोगुंठिं काउं रण्णो ठिओ पुरतो ॥
792. 'एयं मे सामत्थं भणाइ अवणेहि(इ) मत्थतो गुंठिं'।  
तो णं केसविहूणं केसेहि विणा पलोएति ॥

1. अंसूण निण्हयंतो हं की० ॥

## हिन्दी अनुवाद

783. तब नंद राजा ने उनसे कहा, "हे स्थूलभद्र ! आप श्रेष्ठ मन्त्रिपद को ग्रहण करिए। आप 6300 नगरों और 300 कोशागारों का भार संभालिए।
784. आप राजकुल के सदृश शकडाल के कुल में पैदा हुए हैं। सभी शास्त्रों में निष्णात हैं। इसलिए अपने पिता के इस पद को आप ग्रहण करें।
785. तब वेश्या के मोहपाश में बंधे और उसके प्रति अनुरक्त गुणसंपन्न स्थूलभद्र ने कहा, "हे स्वामी ! इस पर अपनी सामर्थ्य का विचार करने के बाद आपसे इस बारे में निवेदन करूंगा अर्थात् आपको जवाब दूंगा।"
786. नंदराजा ने कहा, "आपके समान दूसरा कौन समर्थ हो सकता है। आप सर्वशास्त्रों में निष्णात हैं, आपसे अधिक निष्णात कौन हो सकता है?"
787. इसके बाद रत्नकंबल से अच्छी तरह से आविष्ट स्थूलभद्र आंखों में आंसू भरे हुए अशोक उद्यान में प्रविष्ट कर गए।
788. वह सोचने लगे—“जितना पूर्व जन्म में दिया उतना इस जन्म में उपभोग कर लिया। अब आगे पुनः मैं व्याकुल मछली की तरह संसार सागर में नहीं गिरूंगा।”
789. आज्ञा, राज्यभोग और राजा के पास प्रथम उच्च आसन, ये सब शुभ नहीं हैं। अर्थात् आत्मकल्याण में समर्थ नहीं हैं। अपनी आत्मा को समर्थ बनाना ही आत्मकल्याण के लिए समुचित है।
790. संसार के अनेक क्लेशों, राजकुल में होनेवाले क्लेशों के साथ ही नरकों के भयावह क्लेशों का का चिंतन करते-करते स्थूलभद्र ने अपने ही केशों का लुंचन कर लिया।
791. इसके बाद उन्होंने पहने हुए वस्त्रों को फाड़कर उसे अपना अग्रहार बना लिया। रत्नकंबल को फाड़ उसका रजोहरण बनाया और राजा के समक्ष आ खड़े हुए।
792. राजा को दंडवत प्रणाम कर स्थूलभद्र ने कहा, "मैं इसी कार्य में समर्थ हूँ। अर्थात्, मुनि बनना ही मेरा अभीष्ट है। मेरे सिर का भार दूर कीजिये। राजा उस स्थूलभद्र को केशलुंचित साधु वेश में देखकर देखते ही रह गये।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

793. अह भणइ नंदराया 'लाभो ते धीर! नित्थराहि य णं।  
'बाढं' ति भाणिरुण अह सो संपत्थितो तत्तो।।
794. अह भणति नंदराया 'वच्चइ गणियाघरं जइ कहंघि।  
'तो णं असच्चवादी तीसे पुरतो विवाएमि'।।
795. सो कुलघरसामिदिधं गणियाघरसंतियं च सामिदिधं।  
पाएण पणोल्लेउं नीती नगरा अणवयक्खो।।
796. जो एवं पव्वइओ एवं सज्जाय-झाणउज्जुत्तो।  
गारवकरणेण हिओ सीलभरूव्वहणधोरेयो।।
797. जह तह एही कालो तह तह अप्पावराहसरद्धा।  
अणगारा पडिणीते निसंसयं उवदद(?उदद)वेहिंति।।
798. उप्पायणीहि अवरे, केई विज्जाय<sup>4</sup> उप्पइत्ताणं।  
विउरुव्विहि विज्जाहिं दाइं काहिंती उड्डाहं।।
799. मंतेहि य चुण्णेहि य कुच्छियविज्जाहि तह निमित्तेणं।  
काऊणं उवधाय भमिहिंति अणंतसंसारे"।।
800. अह भणइ थूलभददो 'अन्नं रूवं न किंचि काहामो।  
इच्छामि जाणित्तं जे अहयं चत्तारि पुव्वाइं'।।
801. 'नाहिसि तं पुव्वाइं सुयमेत्ताइं च उग्गहाहिंति।  
दस पुण ते अणुजाणे, जाण पणट्ठाइं चत्तारि'।।

1. तो हं ओ सं० ला०।।  
2. 'असत्यवादिनम्' इत्यर्थः।।  
3. पडिणीते हं० की० ला०।।  
4. 'विद्यया' इत्यर्थः।।

## हिन्दी अनुवाद

793. तब नंदराजा ने कहा, 'हे वीर! आपका कल्याण हो। आपको इच्छित का लाभ हो। अब आपके मार्ग में कोई अवरोध नहीं है। इसके बाद स्थूलभद्र 'बाढम' कहकर राजमहल से प्रस्थान कर गये।
794. स्थूलभद्र के जाने के बाद नंद राजा कहता है— अब अगर यह कोशा गणिका के घर की ओर जाता है तो मैं इस असत्यवादी को उस गणिका के सम्मुख ही वध कर डालूंगा।
795. इधर, कुलपरंपरा से प्राप्त प्रसिद्धि, राजकुल की समृद्धि और वेश्याघर से प्राप्त समृद्धि को पैर से टुकराकर स्थूलभद्र नगर से बाहर निकल जाते हैं।
796. जो इस प्रकार प्रव्रजित हुआ और स्वाध्याय-ध्यान में निमग्न रहा, वही शील के भार को वहन करने में समर्थ स्थूलभद्र गर्व के कारण श्रुत के प्रति अपराध कर अपना अहित कर बैठा।
797. जैसे-जैसे यह पंचम आरा आगे बढ़ेगा, वैसे-वैसे मुनिगण भी अपराध उपद्रव करनेवाले होंगे।
798. कुछ साधु उत्पादनियों से बहुत प्रकार की विद्याओं को उत्पन्न कर यानि, चार प्रकार की निमित्त विद्याओं से लोगों का उच्चाटन आदि करेंगे, उत्पीड़न करेंगे।
799. इस प्रकार वे मंत्रों से, चूर्ण आदि से वशीकरण, कुत्सित निमित्त विद्याओं से लोगों का उत्पीड़न कर अनन्त काल तक संसार में भ्रमण करनेवाले बने रहेंगे।
800. स्थूलभद्र ने निवेदन किया—'हे आचार्य ! दूसरी और कोई बात नहीं कहूंगा। केवल मैं शेष रह गए चार पूर्वों को जानने की इच्छा करता हूँ।'
801. भद्रबाहु ने कहा—'तुम्हें पूर्वों का ज्ञान तो नहीं दूंगा। केवल शेष रह गए चारों पूर्वों का सूत्र ही बताऊंगा। अब तक जो दस पूर्वों का ज्ञान तुमने प्राप्त किया है, वह तो तुम्हारे बाद भी अन्य साधुओं को देने की आज्ञा तुम्हें देता हूँ, लेकिन अंतिम ये चार पूर्वों को तुम अपने साथ ही नष्ट हुआ समझना। इसे किसी को नहीं देना।'

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

802. एतेण कारणेण उ पुरिसजुगे अट्ठमम्मि वीरस्स।  
सयराहेण पणट्ठाइं जाण चत्तारि पुवाइं ।।
803. अणवट्ठप्पो य तवो तवपारंची य दो वि वोच्छिन्ना।  
चोद्दसपुव्वधरम्मी, धरति सेसा उ जा तित्थं ।।
804. तं एवमंगवंसो य नंदवंसो य मरुयवंसो य।  
सयराहेण पणट्ठा समयं <sup>1</sup>सज्जायवंसेण ।।
805. पढमो दसपुव्वीणं सयडालकुलस्स जसकरो धीरो।  
नामेण थूलभददो अविहिंसोसाधम्मभददो त्ति ।।
806. नामेण सच्चमित्तो समणो समणगुणनिउणचिंचइओ।  
होही अपच्छिमो किर दसपुव्वी धारओ धीरो ।।

### (गा. 807-36. सुयवोच्छेयकमनिरुवणं)

807. एयस्स पुव्वसुयसायरस्स उदहि व्व अपरिमेयस्स।  
सुणसु जह अथ(?इत्थ) काले परिहाणी दीसते पच्छा।
808. पुव्वसुयतेल्लभरिए विज्जाए सच्चमित्तदीवम्मि।  
धम्मावायनिमिल्लो होही लोगो<sup>2</sup> सुयनिमिल्लो ।।
809. वोलीणम्मि सहस्से वरिसाणं वीरमोक्खगमणाओ।  
उत्तरवायगवसभे पुव्वगयस्सा भवे छेदो ।।
810. वरिससहस्से पुण्णे तित्थोगालीए वड्ढमाणस्स।  
नासीही पुव्वगतं अणुपरिवाडीए जं जस्स ।।
811. पण्णासा वरिसेहिं य बारसवरिससएहिं वोच्छेदो।  
दिण्णगणि-पूसमित्ते <sup>3</sup>सविवाहाणं छलंगाणं ।।
812. नामेण पूसमित्तो समणो समणगुणनिउणचिंचइओ।  
होही अपच्छिमो किर विवाहसुयधारको धीरो ।।

1. सज्जाणवंओ की० ।।

2. लोगो य सुयमिल्लो हंओ की० ।।

3. सविवाहरणं सर्वासु प्रतिषु ।।

## हिन्दी अनुवाद

802. इसी प्रकार भगवान महावीर के बाद आठवें पट्टधर स्थूलभद्र के समय में उनके स्वयं के अपराध के कारण अंतिम चार पूर्वों का ज्ञान लुप्त हुआ जानना चाहिए।
803. इसके साथ ही चतुर्दश पूर्वधर में स्थित तप के दो प्रायश्चित्त अनवस्थाप्य तथा पारंचित तप भी व्युच्छिन्न हो जाते हैं। शेष को साधुगण तीर्थ के अंत तक धारण करते रहेंगे।
804. इसी प्रकार सज्जाय वंश के साथ-साथ अंग वंश, नंद वंश और मौर्य वंश काल के वंश में होकर अपने-अपने ही अपराधों के कारण नष्ट हो गए।
805. इस तरह शकडाल कुल के यशस्वी धीर पुरुष स्थूलभद्र जो अहिंसा आदि के पालन के कारण धर्मभद्र भी कहे जाएंगे, प्रथम दसपूर्वी होंगे।
806. दसपूर्वों के अंतिम धारक श्रमण गुणों से विभूषित, सभी गुणों में निपुण सत्यमित्र नामके प्रतापी मुनि होंगे।

### (श्रुत व्युच्छेद क्रम का निरूपण, गाथा 807- 36)

807. इस समुद्र के समान अपरिमित पूर्वों का विनाश इस काल के अंत तक जिस तरह से दृष्टिगोचर हो रहा है, अब उसे सुनिए।
808. पूर्वश्रुत रूपी तेल से भरे हुए सत्यमित्र मुनि रूपी दीपक के बुझ जाने पर यानी, निधन हो जाने पर, लोक या श्रमण वर्ग श्रुत पर आश्रित हो जाएगा यानि, दृष्टिवाद का लोप हो जाएगा।
809. वीर प्रभु के मोक्ष गमन के हजार वर्ष पश्चात, उत्तर वाचक वंश में उत्तम वृषभ समान यानि श्रेष्ठ अर्थात् देवद्विगणि क्षमाश्रमण के साथ पूर्वगत का उच्छेद हो जाएगा।
810. वर्द्धमान स्वामी के निर्वाण के 1000 वर्ष पूर्ण होने पर परिपाटी के अनुसार जिनके पास जितना पूर्वगत ज्ञान होंगे, वह क्रमशः नष्ट हो जाएंगे।
811. वीर निर्वाण के 1250 वर्ष व्यतीत होने पर दिन्नगणि-पुष्यमित्र के समय में व्याख्या प्रज्ञप्ति के साथ अन्य छह अंगों का उच्छेद हो जाएगा।
812. श्रावकाचार में निपुण तथा यशस्वी पुष्यमित्र नामक श्रमण व्याख्याप्रज्ञप्ति तक के ज्ञान का अंतिम धारक होगा।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

813. तम्मि य विवाहरुक्खे चुलसीतीपयसहस्सगुणकलिओ।  
सहस च्विय संभंतो होही गुणनिष्फलो लोगो।।
814. समवायववच्छेदो तेरसहिं सतेहिं होहि वासाणं।  
माढरगोत्तस्स इहं संभूतजतिस्स मरणम्मि।।
815. तेरसवरिससतेहिं पण्णासासहिं एहिं वोच्छेदो।  
अज्जवजतिस्स मरणे ठाणस्स जिणेहिं निदिदट्ठो।।
816. चोददसवरिससतेहिं वोच्छेदो जेट्ठभूतिसमणम्मि।  
कासवगोत्ते णेओ कप्प-व्ववहारसुत्तस्स।।
817. भणिदो दसाण छेदो पन्नरससएहिं होइ वरिसाणं।  
समणम्मि फग्गुमित्ते गोयमगोत्ते महासत्ते।।
818. भारद्दायसगुत्ते सूयगडंगं महासमणनामे।  
अगुणव्वीससतेहिं जाही वरिसाण वोच्छित्तिं।।
819. वरिससहस्सेहिं इहं दोहि विसाहे मुणिम्मि वोच्छेदो।  
वीरजिणधम्मतिथे होहि निसीहस्स निदिदट्ठो।।
820. विण्हुमुणिम्मि मरंते हारितगोत्तम्मि होति वीसाए।  
वरिसाण सहस्सेहिं आयारंगस्स वोच्छेदो।।
821. अह दूसमाए सेसे होही नामेण दुप्पसहसमणो।  
अणगारो गुणऽगारो धम्मागारो तवागारो।।
822. सो किर आयारधरो अपच्छिमो होहिती भरहवासे।  
तेण समं आयारो नस्सीहि समं चरित्तेणं।।
823. अणुओगच्छिण्णयारो (?) अह समणगणस्स दावियायारो (?रे)।  
आयारम्मि पणट्ठे होहिति तइया अणायारो।।
824. चंकमिउं<sup>1</sup> वरतरं (?तरयं) तिमिसगुहाए व मंधकाराए।  
न य तइया समणाणं आयारसुत्ते पणट्ठमि।।

1. चंकमिउं सं.ला.

## हिन्दी अनुवाद

813. उस व्याख्या प्रज्ञप्ति रूप वृक्ष में चौरासी हजार पद रूपी गुण फलिकाएं हैं। उसके अध्ययन के गुणों से हीन होकर समस्त लोक सहसा त्रस्त हो जाएगा।
814. वीर निर्वाण से 1300 वर्ष व्यतीत होने पर माढर गोत्रिय संभूत मुनि की मृत्यु के साथ समवायांग का विच्छेद हो जाएगा।
815. वीर निर्वाण के 1350 वर्ष व्यतीत होने पर आर्यव यति की मृत्यु के साथ जिन प्रणीत स्थानांग का विलोप हो जाएगा।
816. वीर निर्वाण से 1400 वर्ष बीत जाने पर काश्यप गोत्रिय ज्येष्ठभूति मुनि के साथ कल्पसूत्र और व्यवहार सूत्र का विच्छेद जानना चाहिए।
817. वीर निर्वाण से 1500 वर्ष व्यतीत होने पर गौतम गोत्रिय महायशस्वी फल्गूमित्र मुनि के पश्चात दशाश्रुतस्कन्ध का विलोप हो जाएगा।
818. वीर निर्वाण के 1900 वर्ष बीत जाने पर भारद्वाज गोत्रिय महाश्रमण नामक मुनि के साथ ही सूत्रकृतांग रूप वृक्ष का मूल नष्ट हो जाएगा।
819. वीर प्रभु के धर्मतीर्थ में उनके निर्वाण के 2000 वर्ष बीत जाने पर विशाख नामक मुनि के साथ निशीथ सूत्र का विच्छेद निर्दिष्ट किया गया है।
820. वीर निर्वाण के 20,000 वर्ष बीत जाने पर हारित गोत्रिय विष्णु मुनि के निधन के साथ ही आचारांग का विच्छेद हो जाएगा।
821. इसके बाद दुसमा आरे के शेष थोड़े से काल में दुष्प्रसह नामक मुनि होंगे जो गुणों की खान, धर्मनिष्ठ, तपोनिष्ठ होंगे।
822. वह भरत क्षेत्र का अंतिम आचारांगधर होंगे। उनके साथ आचारांग और चरित्र दोनों का साथ ही विनाश हो जाएगा।
823. अनुयोग सहित आचारांग ही श्रमणों को प्रदीप के समान आचार का बोध करानेवाला है। आचारांग के विच्छिन्न होने पर सर्वत्र अनाचार का साम्राज्य व्याप्त हो जाएगा।
824. उसके बाद आगे चलकर सब लोग घोर अंधकारपूर्ण तिमिस्र गुफा में ही रहेंगे। आचारांग के नष्ट होने के बाद श्रमणों का नाममात्र भी बचा नहीं रह पाएगा।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

825. निज्झीणा पासंडा चोरेहिं जणो विलुप्पते अहियं !  
होहिंति तथा गामा केवलनामावसेसा उ।।
826. वीसाए सहस्सेहिं पंचहिं य सतेहिं होइ वरिसाणं।  
पूसे वच्छसगोत्ते वोच्छेदो उत्तरज्जाए।।
827. वीसाए सहस्सेहिं वरिससहस्सेहिं (?वरिसाण सएहिं) नवहिं वोच्छेदो।  
दसवेतालियसुत्तस्स दिण्णसाहुम्मि बोधव्वो।।
828. पविरलगाम—जणवइं पविरलमणुएसु नामदेसेसु।  
नामेण नाइलो नाम गणहरो होही(होहिइ) महप्पा।।
829. धम्मम्मि निरालोए जिणमतदुस्सद्दहम्मि लोगम्मि।  
पव्वावेही सीसं दुप्पसहं नाम नामेणं।।
830. सो पुण संपतिकाले कामालोएसु देवलोएसु।  
लोगही(?टिट्ठ)ते विमाणे अच्छिंति य विमाणितो देवो।।
831. सो सागरगंभीरो देवाउं सागरोवमं तस्स।  
तत्तो चुओ विमाणा आयाही मज्झदेसम्मि।।
832. सो दाइ अट्टवासो दियलोयसुहं सुयं अणुगणंतो।  
पव्वइही दुप्पसहो अणुसट्ठो नाइलज्जेणं।।
833. सो पव्वइतो संतो महया जोगेण सुंदरुज्जोगो।  
कम्मखतोवसमियं सिक्खीहि सुतं दसवे(वि)तालं।।
834. दसवेतालियधारी पुज्जीहि जणेण जह व दसपुव्वी।  
सो पुण सुट्टुतरागं पुज्जीही समणसंघेणं।।
835. अउणावीससहस्सो(?स्सा) समणा होहिंति सक्कया लोए।  
दुस्सहदूसमकाले खीणे अप्पवसेसजगे।।
836. धम्मो य जिणाणुमतो राया य जणस्स लोयमज्जाया।  
ण(तो) ते हवति खीणा जं सेसं तं निसामेह।।

## हिन्दी अनुवाद

825. उस समय लोग निर्लज्ज और पाखण्डी हो जाएंगे। वे आए दिन चोरों द्वारा लूटे जाएंगे। उस समय ग्राम केवल अवशेष मात्र होंगे।
826. वीर निर्वाण के 20,500 वर्ष पश्चात वत्स गोत्रिय पुष्य मुनि के साथ उत्तराध्ययन का विच्छेद हो जाएगा।
827. वीर निर्वाण के 20,900 वर्ष पश्चात दिन्न मुनि के साथ दसवैकालिक सूत्र का विनाश जानना चाहिए।
828. काल बीतने पर अति अल्प ग्राम, जनपद के अत्यल्प मनुष्यों की संख्या होगी। उस समय नाइल्ल नामक महात्मा गणधर होंगे।
829. उस समय जब लोग बड़ी कठिनाई से जिनमत पर श्रद्धा कर पाएंगे और लोक से धर्म का लोप हो जाएगा, उस समय वे नाइल्ल नामक आचार्य दुष्प्रसह नामक शिष्य को श्रमण धर्म में दीक्षित करेंगे।
830. उस दुष्प्रसह नामक आचार्य का जीव वर्तमान काल में कर्मलोक से पूर्ण देवलोकों के लोहित नामक विमान में वैमानिक देव के रूप में विद्यमान है।
831. सागर के समान गंभीर उस देव की आयु एक सागरोपम की है देव आयु पूर्ण करके उस विमान से च्यूत होकर वह यहां मध्य देश में उत्पन्न होंगे।
832. शिष्ट और चरित्र से युक्त दुष्प्रसह आठ वर्ष की आयु में नाइल्ल मुनि से दिव्य लोक के सुखों के बारे में सुनकर उस पर चिंतन करते हुए नाइल्ल आचार्य के पास प्रव्रजित होंगे।
833. वह मुनि प्रव्रजित होने के बाद असाधारण उद्योग पूर्वक कठिन साधना से कर्म के क्षयोपशम के फलस्वरूप दशवैकालिक सूत्र का अध्ययन करेंगे।
834. उस समय दशवैकालिक सूत्र के धारक मुनि लोक में दसपूर्वी की तरह पूजित होंगे तथा श्रमण संघ द्वारा वह अतिशय श्रद्धा के साथ पूजे जाएंगे।
835. जब पाचवें आरे के समाप्त होने में अत्यल्प समय शेष रह जाएगा तब उस दुष्प्रसह मुनि का निधन हो जाएगा और वे 19,000 देव परिवार वाले सामानिक देव के रूप में शक्रलोक यानि स्वर्ग में उत्पन्न होंगे।
836. उस समय जिन प्रतिपादित धर्म, राजा तथा जनता की लोकमर्यादाएं—ये तीनों बातें क्षीण होती हैं। जो शेष रहता है, उसे सुनिए।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

(गा. 837- 78. दूसमासमाए अंते संघवण्णणाइ)

837. सावगमिहुणं समणो समणी राया तहा अमच्चो य।  
एते हवंति सेसं 'अण्णो (य) जणो बहुतरातो।।
838. ओसप्पिणीइमीसे चत्तारि अपच्छिमाइ संघस्स।  
अंतम्मि दूसमाए दससु वि वासेसु एवं तु।।
839. दुप्पसहो अणगारो नामेण अपच्छिमो पवयणस्स।  
फग्गुसिरी समणीणं सा वि य समणीणपच्छिमिया।।
840. विगगहवती विव दया, कमलविहूणा सिरि व्व पच्चक्खा।  
होहिति तइया समणी फग्गुसिरी नाम नामेणं।।
841. तम्मि य नगरे सेट्ठी होही नामेण नाइलो नामं।  
सो सव्वसावगाणं होही तइया अपच्छिमओ।।
842. सेट्ठी य नाइलो नाम गहवती सावगाण पच्छिमतो।  
सच्चसिरि साविगाणं सा वि य तइया अपच्छिमिया।।
843. अभिगतजीवाऽजीवा सा या किर साविया अपच्छिमिया।  
धम्मम्मि निच्छित्तमती सच्चसिरी नाम नामेणं।।
844. राया य विमलवाहणो स(?सु)मुहो नामेण तस्स य अमच्चो।  
इय दूसमाए कालेरायाऽमच्चो अपच्छिमगो।।
845. दुप्पसहो फग्गुसिरी सच्चसिरी नाइलो य राया य।  
इय दूसमचरिमंते वीसतिवासाउया एते।।
846. छट्ठ चउत्थं च तया होही उक्कोसयं तव्वोकम्मं।  
(?दुप्पसहो आयरिओ) काही किर अट्ठमं भत्तं।।
847. सो दाहिणलोगवती इंदो धम्माणुरागरत्तो य।  
आगतूणं तइया पुणो पुणो वंदते संघं।।
848. गुणभवणगहण ! सुयरयणभरिय ! दंसणविसुद्धरच्छागा !।  
संघनगर ! भददं ते अक्खंडचरितपागारा !।।

1 . अण्णो जाणो वो सं० ला०।।

2. गुणगहणभवण सर्वासु प्रतिशु। अत आरभ्य गाथापंचकं नन्दिसूत्रे उपलभ्यते।।

हिन्दी अनुवाद

(दूसमाकाल के अंत में संघ का वर्णन, गाथा, 837- 78)

837. इस अवसर्पिणी काल के दुसमाकाल के अन्त में एक ही श्रावक मिथुन यानि एक श्रावक, एक श्राविका, एक श्रमण, एक श्रमणी, एक राजा और एक मंत्री होते हैं। इसके अलावा, अन्य बहुत से शेष लोग होते हैं।
838. इस अवसर्पिणी काल के दुसमा काल के अंत में पांचों भरत और पांचों ऐरावत क्षेत्रों में इसी प्रकार से प्रत्येक में श्रमण संघ होता है।
839. जिन प्रणीत सिद्धांत को माननेवाला अंतिम अनगार दुप्पसह और अंतिम साध्वी फल्गूश्री नामकी श्रमणी होगी।
840. उस समय वह फल्गूश्री नामकी साध्वी दया की प्रतिमूर्ति और लक्ष्मी के समान होंगी। बस उसका आसन कमल नहीं होगा।
841. उस नगर में नाइल्ल नाम का श्रेष्ठी होगा, वह उस समय का यानि इस अवसर्पिणी काल का अंतिम श्रावक होगा।
842. नाइल्ल नामका वह गृहपति श्रेष्ठी सभी श्रावकों में अंतिम होगा तथा उस समय सबसे अंतिम श्राविका सत्यश्री होगी।
843. वह अंतिम श्राविका सत्यश्री जीव-अजीव के भेद को भली प्रकार जाननेवाली तथा धर्म के प्रति संशय रहित होगी।
844. उस दुसमाकाल में सभी राजाओं में अंतिम राजा विमलवाहन तथा मंत्रियों में अंतिम उसका सुमुख नामका मंत्री होगा।
845. दुसमा काल के अंत में दुप्पसह आचार्य, फल्गूश्री साध्वी, सत्यश्री श्राविका, नाइल्ल श्रावक एवं राजा-सबकी आयु बीस-बीस वर्ष की होगी।
846. उस समय उत्कृष्ट तपकर्म में छट्ठभक्त (तेला) एवं चतुर्थभक्त (उपास) तप होंगे। केवल दुप्पसह आचार्य अष्टम भक्त (तेला) का तप कर पाएंगे।
847. तब दक्षिण लोक का अधिपति इन्द्र वहां आकर बार-बार संघ की इस तरह से वंदना करेंगे....
848. उत्तम गुण रूपी भवनों से गहन व्याप्त, श्रुत-शास्त्र रूप रत्नों से पूरित, विशुद्ध सम्यक्त्व रूप स्वच्छ वीथियों से संयुक्त, अतिचार रहित मूल गुण रूप चारित्र के परकोटे से सुरक्षित, हे संघ नगर ! तुम्हारा कल्याण हो।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

849. भद्रं सीलपडागूसितस्स तवनियमतुरगजुत्तस्स।  
संघरहस्स भगवतो सज्जायसुनंदिघोस्स॥
850. संजम-तवतुंबारयस्स नमो सम्मत्तपारिअल्लस्स<sup>1</sup>।  
अप्पडिचक्कस्स जतो होउ सता संघचक्कस्स॥
851. <sup>2</sup>कम्मजलविसोहिसमुब्भवस्स सुयरयणदीहनालस्स।  
पंचमहव्वयथिरकण्णियस्स गुणकेसरालस्स॥
852. सावगजणमहुयरिपरिवुडस्स जिणसूरतेबुद्धस्स<sup>3</sup>।  
संघपउमस्स भद्रं समणगणसहस्सपत्तस्स॥ (जुम्म)
853. नवसु वि वासेसेवं इंदो थोऊण समणसंघं तु।  
ईसाणो वि तह च्विय खणेण अमरालयं पत्तो॥
854. दसवेतालियअत्थस्स धारतो संजओ तवाऽऽउत्तो।  
समणेहिं विप्पहीणो विहरीहो एक्कगो धीरो॥
855. अट्ठेव त गिहवासे, बारस वरिसाइं तस्स परियातो।  
एवं वीसतिवासो दुप्पसहो होहिही धीरो॥
856. छज्जीवकायहियतो सो समणो संजमे तवाउत्तो।  
भत्ते पच्चक्खाते गच्छी अमरालयं धीरो॥
857. अट्ठ य वरिसे जम्मं (?म्मा) बारस वरिसाइं होइ परियाओ।  
कालं काहि य तइया अट्ठमभत्तेण दुप्पसहो॥

1 . 0पारितालस्स सं0 ला0॥  
2 . कम्मरयजलोहविणिग्गयस्स सुय0 नन्दिसूत्रे॥  
3 . 0तेयमुद्धस्स सर्वासु प्रतिषु॥

## हिन्दी अनुवाद

849. शीलांग रूप पताकाएं जिसपर फहरा रही हैं, तप और संयम रूप अश्व जिसमें जुते हुए हैं, स्वाध्याय (वाचना, पृच्छना, परावर्तना, अनुप्रेक्षा और धर्मकथा) का मंगलमय मधुर घोष जिससे निकल रहा है, ऐसा संघ रथ का कल्याण हो।
850. (सतरह प्रकार के) संयम संघ चक्र का तुम्ब नाभि है। छह बाह्य और छह आभ्यंतर इस प्रकार तप के कुल 12 आरे हैं तथा सम्यक्त्व जिस चक्र का घेरा है, तथा अप्रतिहत है अर्थात् अन्य तीर्थिकों द्वारा अजेय है। ऐसे संघ चक्र सदा जयवन्त रहे।
- 851+852, जो कर्म-रज रूपी जल-राशि से ऊपर उठा हुआ है, अलिप्त है, श्रुत रत्न रूपी जिनकी दीर्घ नलिकाएं हैं, पंच महाव्रत रूपी जिनकी सुदृढ़ कर्णिकाएं हैं, उत्तर गुण जिनका पराग है, जो श्रावक जन रूपी भ्रमरों से घिरे हैं, जिनदेव के केवल ज्ञान रूपी सूर्य के प्रकाश से खिले हुए हैं और श्रमण गण रूपी हजारों पत्रों से युक्त हैं, ऐसे हे संघ कमल! आपका कल्याण हो।
853. शेष नौ क्षेत्रों में भी इसी प्रकार श्रमण संघ की स्तुति कर शक्रेन्द्र और इषानेन्द्र क्षणभर में अमरपुर को चले गये।
854. उस समय संयम और तप से युक्त होकर, दशवैकालिक के धारक, साधुओं से रहित वह दुष्प्रसह आचार्य अकेले ही धीरतापूर्वक विचरण करेंगे।
855. वे धीर गंभीर दुष्प्रसह आचार्य आठ वर्ष की आयु तक गृह में वास करेंगे तथा बारह वर्ष तक प्रव्रज्या धारण कर विहार करेंगे। इस प्रकार वे 20 वर्ष की आयुवाले होंगे।
856. संयम और तप से आवृत्त होकर वह धीर मुनि षट्जीवनिकाय के प्रति उपकार की भावना रखते हुए भक्तप्रत्याख्यान मरण को प्राप्त कर अमरपुर को जाएंगे।
857. जन्म से आठ वर्ष का समय बीत जाने के पश्चात बारह वर्षों तक प्रव्रज्या में रहकर अष्टमभक्त यानी तेला का तप करके, दुष्प्रसह मुनि मृत्यु को प्राप्त हो जाएंगे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

858. सोहम्मे उववातो दुप्पसहजइस्स होइ नायव्वो।  
तस्स य सरीरमहिमा कीरीही लोगपालेहिं॥
859. काउं मुणस्स महिमं निययावासेसु तो गता तियसा।  
दससु वि वासेसेवं होही महिमा उ तित्थस्स॥
860. उववज्जिही विमाणे सागरनामम्मि सो य सोहम्मे।  
तत्तो य चइत्ताणं सिज्जीही नीरजो धीरो॥
861. पढमाए पुढवीए उप्पण्णो विमलवाहणो राया।  
सोहम्मे उववण्णं सावगमिहुणं च समणी य॥
862. वासाण सहस्सेण य इकवीसाए इहं भरहवासे।  
दसवेतालियअत्थो दुप्पसहजइम्मि नासिहिती॥
863. पुव्वाए संजाए वोच्छेदो होहि धम्मचरणस्स।  
मज्झण्हे रातीणं अवरण्हे जायतेयस्स॥
864. रायाणो दंडधरा ओसहि अग्गी य संजया चेव।  
चरिमदिवसावसाणे अणुसज्जिंता न होहिंति॥
865. इगवीस सहस्साहं वासाणं वीरमोक्खगमणाओ।  
अव्वोच्छिन्नं होही आवसगं जाव तित्थं तु॥
866. इगवीस सहस्साइं वासाणं वीरमोक्खगमणाओ।  
'अणियोगदार-नंदी अव्वोच्छिन्ना उ जा तित्थं॥
867. सामाइयं च पढमं छेओवट्टावणं भवे बीयं।  
एते दोन्नि चरित्ता होहिंती जाव तित्थं तु॥
868. जो भणति नत्थि धम्मो न च सामइयं न चेव य वयाइं।  
सो समणसंघबज्जो कायव्वो समणसंघेणं॥

1. अणुओग हं. की.॥

## हिन्दी अनुवाद

858. वहां वे दुष्प्रसह मुनि सौधर्म विमान में उत्पन्न होंगे, ऐसा जानना चाहिए। उनके पार्थिव शरीर का अंतिम संस्कार लोकपालों के द्वारा महिमापूर्वक किया जाएगा।
859. मुनि की महिमा करके वे देवगण वापस अपने लोक को चले जाएंगे। दसों क्षेत्रों में इसी प्रकार तीर्थ की महिमा अर्थात् अंतिम संस्कार किया जाएगा।
860. इस लोक में मृत्यु को प्राप्त कर दुष्प्रसह मुनि सौधर्म लोक के सागर नामक विमान में देवयोनि में उत्पन्न होंगे। वहां से च्यूत होकर वह धीर-वीर आठों कर्मों की रज को दूर कर सिद्धगति को प्राप्त करेंगे।
861. विमलवाहन राजा प्रथम नरक भूमि में उत्पन्न होंगे तथा नाइल्ल श्रावक-सर्वश्री श्राविका एवं फल्गुश्री साध्वी सौधर्म देवलोक में उत्पन्न होंगी।
862. इस प्रकार पंचम दुसमा आरे के इक्कीस हजार वर्ष पूर्ण होने के पश्चात् इस भरतक्षेत्र से दुष्प्रसह मुनि के साथ दशवैकालिक सूत्र नष्ट हो जाएगा।
863. दुसमा आरा की समाप्ति की पूर्व संध्या में धर्माचरण का, मध्याह्न में राजाओं का और अपराहन में अग्नि का नाश हो जाएगा।
864. राजा का दंडधर यानि राजाज्ञा का पालन करानेवाला, औषधि, अग्नि और संयम-यम-नियम, ये सब पंचम आरे के अंतिम दिन की समाप्ति के पश्चात् नहीं रहेंगे।
865. भगवान महावीर के तीर्थ की विद्यमानता तक आवश्यक सूत्र विद्यमान रहेंगे। अर्थात् महावीर के मोक्ष गमण के 21,000 वर्ष पश्चात् आवश्यक सूत्र नष्ट हो जाएगा।
866. इसी तरह भगवान महावीर के मोक्ष गमण के 21,000 वर्ष पश्चात् तक अनुयोगद्वार और नंदी सूत्र विद्यमान रहेंगे।
867. प्रथम सामायिक और द्वितीय छेदोपस्थानिक-ये दोनों चरित्र तीर्थ के अंतिम दिन तक विद्यमान रहेंगे।
868. जो भी यह बोलता है कि अब धर्म नहीं है, सामायिक नहीं हैं और व्रत नहीं है। श्रमण संघ को चाहिए कि उसे श्रमण संघ से निष्कासित कर दे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

869. जइ जिणमतं पवज्जह ता मा ववहारदंसणं मुयह।  
ववहारनउच्छेदे तित्थुच्छेदो जओऽवस्सं॥
870. इच्चेयं गणिपिडगं निच्चं दव्वट्टयाए नायव्वं।  
पज्जाएण अणिच्चं, निच्चाऽनिच्चं च सियवादो॥
871. जो सियवायं भासति पमाण—नयपेसलं गुणाधारं।  
भावेइ मणेण सया सो हु पमाणं पवयणस्स॥
872. जो सियवायं निंदति पमाण—नयपेसलं गुणाधारं।  
भावेण दुट्ठभावो न सो पमाणं पवयणस्स॥
873. ओसप्पिणीइमीसे चत्तारि अपच्छिमाइं इह भरहे।  
अंतम्मि दूसमाए संघस्स चउव्विहस्सावि॥
874. तेसु य कालगतेसुं तदिदवसं चेव होहिइ अधम्मो।  
इय दूसमाए काले वच्चंते पावभुइट्ठे॥
875. सामाइय समणणं महाणुभावाण चेइयायारो।  
सव्वा य गंधजुत्ती दोसु वि संजासु नासिहिति॥
876. चक्कमिउं वरतरयं तिमिसगुहाते! वमंधयाराए।  
न य तइया मणुयाणं जिणवरतित्थे पणट्ठम्मि॥
877. पावा पावायारा निद्धम्मा धम्मबुद्धिपरिहीणा।  
रोददा कुणिमाहारा नरा य नारी य होहिंति॥
878. जह जह झिज्जइ कालो तह तह सज्जाए—ज्ञाणकरणाइं।  
झिज्जंति जाव तित्थं भणियं सज्जायवंसो य॥

1 . 0हाते व धम्मरायाए हं0 की0॥

2 . सव्वावयं सो अ हं0 की0। सज्जायधम्मो य सं0॥

## हिन्दी अनुवाद

869. यदि जिनमत को स्वीकार करते हो तो व्यवहार दर्शन को मत छोड़ो।  
क्योंकि व्यवहार के विच्छेद होते ही तीर्थ का नाश अवश्यभावी है।
870. इस प्रकार गणिपिटक यानी आगमों को द्रव्यार्थिक नय से नित्य,  
पर्यायार्थिक नय से अनित्य समझना चाहिए। क्योंकि स्याद्वाद की  
दृष्टि से इसे नित्यानित्य कहा गया है।
871. जो प्रमाण नयों एवं गुणों के आधारभूत स्याद्वाद का विवेचन करता है  
वह वस्तुतः प्रवचन के प्रमाण को जानता हुआ मन में सदा शुद्ध भावना  
से भावित होता है।
872. जो प्रमाण नयों एवं गुणों के आधारभूत स्याद्वाद की निंदा करता है,  
तथा उसी तरह की दुष्ट भावना का मन में चिंतन करता है, वह  
प्रवचन का प्रमाण—सार नहीं है।
873. इस भरत क्षेत्र में वर्तमान अवसर्पिणी काल में श्रमण संघ में चार यानि  
दुष्प्रसह आचार्य, फल्गुश्री साध्वी, नाइल्ल श्रावक और सर्वश्री श्राविका—  
धर्मतीर्थ के अंतिम सदस्य होंगे। दुसमा काल के अंत तक चतुर्विध संघ की  
हानि होगी।
874. उपरोक्त चारों के दिवंगत होते ही इस भरत क्षेत्र में अधर्म का साम्राज्य  
फैल जाएगा।
875. इस काल में श्रमणों के सामायिक और श्रद्धालु गृहस्थों के चैत्यों में  
पूजा—आचार आदि, सभी प्रकार की धूप—दीप पूजा आदि संबंधी गंध  
युक्ति आदि सभी आचार दसों क्षेत्रों से नष्ट हो जाएंगे।
876. लेकिन इस काल में मनुष्य और तिर्यच तमिस्र गुफा के अंधकार में  
घूमते रहेंगे। भगवान महावीर के तीर्थ का विच्छेद हो जाने के कारण  
उन मनुष्यों में सामायिक आदि धर्माचार नहीं रहेंगे।
877. उस समय के नर—नारी, पापी, पापाचारी, अधर्मी, धर्मबुद्धि से हीन,  
क्रोधी तथा कृत्सित आहार करनेवाले होंगे।
878. जैसे—जैसे समय बीतता है, वैसे—वैसे स्वाध्याय, ध्यान, कर्म आदि  
धीरे—धीरे जर्जरित होता जाएगा लेकिन जब तक तीर्थ है तब स्वाध्याय  
रहेगा। इस प्रकार यहां स्वाध्याय वंश का कथन किया गया।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

(गा. 879-92 तित्थयरसमए भरहवाससरूव)

879. जणवय'वंसं पत्तो सज्जाए रायवंसआहारं (?)।  
सुव्वउ जिणवरभणियं तित्थोगालीए संखेवं॥
880. रिद्धिद्धिथिमियसमिद्धं भारहवासं जिणिंदकालम्मि।  
बहुअइसयसंपण्णं सुरलोगसमं गुणसमिद्धं॥
881. गामा (य) नगरभूया, नगराणि य देवलोगसरिसाणि।  
रायसमा य कुडुंबी, वेसमणसमा य रायाणो॥
882. चंदसमा आयरिया, अम्मा-पितरो य देवतसमाणा।  
मायसमा वि य सासू, ससुरा वि य पितिसमा आसि॥
883. धम्माऽधम्मविहन्नु विणयण्णू सच्च-सोयसंपण्णो।  
गुरु-साहुपूयणरतो सदरनिरतो जणो तइया॥
884. अप्प(?)इ य सविण्णाणो, धम्मे य जणस्स आयरो तइया।  
विज्जापुरिसा पुज्जा, धरिज्जइ कुलं च सीलं च॥
885. भंग-त्तासविरहितो डमरुल्लोल'भय-डंडरहितो य।  
दुब्भिकख-ईति-तक्कर-करभर(य)जिवज्जिओ लोगो॥
886. रिद्धिद्धिथिमियसमिद्धं भारहवासं जिणिंदकालम्मि।  
बहुअच्छेरयपुण्णं उसमातो जाव वीरजिणो॥
887. दससु वि वासेसेवं दस दस अच्छेरगाइं जायाइं।  
ओसप्पिणीए एवं तित्थोगालीए भणियाइं॥
888. उवसग्ग 1 गभहरणं 2 इत्थीतित्थं 3 अभव्विया परिसा 4।  
कण्हस्स अवरकंका 5 अवयरणं चंद-सूराणं 6॥
889. हरिवंसकुलुप्पत्ती 7 चमरुप्पाओ 8 य अट्ठसय सिद्धा 9।  
अस्संजयाण पूया 10 दस वि अणंतेण कालेणं॥

1. 0वययं हं0 की0।

## हिन्दी अनुवाद

(तीर्थकर के समय में भरत क्षेत्र का स्वरूप, गाथा 879-92)

879. स्वाध्याय वंश, राजवंश और आहार या आचार इत्यादि सब अब तक जिन वचनों के अनुसार ही चला आ रहा है। तित्थोगाली प्रकीर्णक में भगवान जिनवर ने जो कहा है, उसे संक्षेप में सुनिये।
880. तीर्थकरों के समय में भरत क्षेत्र रिद्धि-सिद्धि से भरपुर होता है। उस समय यहां बहुत प्रकार के अतिशय और देवलोक सदृश गुण होते हैं।
881. ग्राम, नगर के समान और नगर देवलोक के सदृश होते हैं। सामान्य जन राजा के समान और राजा कुबेर सदृश थे।
882. आचार्य शीतल चंद्रमा के समान, माता-पिता देवता के समान, सास माता के समान और ससुर पिता की तरह होते हैं।
883. उस समय लोग धर्म-अधर्म से पूरी तरह अवगत, विनय संपन्न, सत्य-शौच युक्त, गुरु-साधु की पूजा में रत तथा स्वपत्नी में संतोष रखनेवाले होते हैं।
884. उस समय के लोग विशिष्ट ज्ञान से संपन्न, आत्मा आदि के ज्ञान को जानने में उत्सुक और धर्म में आचरण करनेवाले होते हैं। वे सब विद्वान पुरुषों को पूजनेवाले तथा कुल और शील को धारण करनेवाले होते हैं।
885. उस समय के लोग विनाश, त्रास, राजद्रोह, उपद्रव, भय, दंड, दुर्भिक्ष, ईति, चोर, कर के भार आदि से मुक्त होते हैं।
886. भगवान ऋषभदेव से लेकर भगवान महावीर तक के तीर्थकर काल में भरत क्षेत्र रिद्धि-सिद्धि आदि से समृद्ध होता है। इस काल में बहुत प्रकार के आश्चर्य उत्पन्न होते हैं।
887. इसी प्रकार अवसर्पिणी काल में दसों क्षेत्रों में दस-दस आश्चर्य उद्भूत होते हैं। ऐसा तित्थोगाली में कहा गया है।
- 888+889. अनंतकाल के पश्चात ये दस आश्चर्य प्रकट होते हैं। ये हैं-  
1. उपसर्ग (तीर्थकर महावीर को), 2. गर्भापहरण (महावीर की माता का),  
3. स्त्री तीर्थकर (मल्लीनाथ), 4. अभव्य परिषद, 5. कृष्ण का अमरकंका गमन, 6. चन्द्र-सूर्य का अवतरण, 7. हरिवंश कुल की उत्पत्ति, 8. चमरेन्द्र का उत्पात, 9. एक समय में आठ सौ सिद्ध और 10. असंयत पूजा।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

890. लोगुत्तमपुरिसेहिं चउपण्णाए इहं अतीएहिं ।  
सुबहूहिं केवलीहि य मणपज्जव-ओहिनाणे(णी)हिं ॥
891. बहुरिदिधप्पत्तेहि य मइ-सुयनाणे(णी)हि पुहइसारेहिं ।  
कालगतेहिं बुहेहिं मोक्खं विण्णाणरासीहिं ॥
892. तेहि य समतीएहिं भरहे वासम्मि राय-दोसेहिं ।  
'अप्पोदतो व्व वप्पो जातो संभिण्णमज्जादो ॥
- (गा. 893-923. दूसमासमाए भावा)**
893. जह जह वच्चति कालो तह तह कुल-सील-दाणपरिहीणो ।  
अहियं अहम्मसीलो सच्चवयणदुल्लभो लोगो ॥
894. विवरीयलोगधम्मे परिहायंते पणट्ठमज्जाए ।  
सक्कार-दाणगिद्धा कुहम्मपासंडिणो जाता ॥
895. होहिंति य पासंडा मंतक्खर-कुहगसंपउत्ता य ।  
मंडल-मुद्दाजोगा वस-उच्चाडणपरा य दढं ॥
896. तेहिं मुसिज्जमाणो लोगो सच्छंदरइयकव्वेहिं ।  
अवमग्गि(?न्नि)यसब्भावो जातो अलितो य पलितो य ॥
897. होहिंति साहुणो वि य सपक्खनिरवेक्ख निद्दया धणियं ।  
समणगुणमुक्कजोगी केई संसारछेत्तारो ॥
898. हितिहिति गुरुकुलवासो, मंदा य मती य समणधम्ममि ।  
एयं तं संपत्तं 'बहुमुंडे अप्पसमणेय' ॥
899. रह गावि सिला 'सत्थो गोयममादीण वीरकहिया उ ।  
कप्पद्दुम<sup>२</sup> सीहा वि य तित्थोगालीए दिट्ठंता ॥

1. अव्वोदतो सं० हं० ला० ॥

2. सत्थे ला० ॥

3. कप्पदुमे सी० सं० ला० ॥

## हिन्दी अनुवाद

- 890+891. यहां 54 लोकोत्तम पुरुषों के हो चुकने के पश्चात, बहुत से केवल ज्ञानी, मनःपर्यव ज्ञानी, अवधि ज्ञानी, अपार रिद्धिधारी, मति-श्रुत ज्ञान से संपन्न, संपूर्ण पृथ्वी के स्वामी, समय बीतने पर मोक्ष को जानेवाले तथा अतिशय ज्ञान की राशि लोगों के परलोक जाने के बाद ।
892. इस भरत क्षेत्र से इन महापुरुषों के अवसान के बाद टूटे परकोटे वाले नगर के नागरिकों के समान लोग मर्यादाहीन हो गये ।

## (दुषमा समय का भाव, गाथा 893- 923)

893. जैसे-जैसे समय व्यतीत होता जाता है, वैसे-वैसे कुल-शील-दान की हानि होती जाती है । लोग अधिक अधर्मी, कुशील होते जाते हैं और सत्य वचन बोलनेवाले लोग दुर्लभ होते जाते हैं ।
894. उस समय मर्यादाओं के नष्ट हो जाने पर, लोकधर्म के विपरीत आचरण करनेवाले, सत्कार-दान के लोलुप कुधर्मी, पाखंडी साधु उत्पन्न होंगे ।
895. ये संप्रदाय के साधु गण मंत्र-तंत्र तथा इन्द्रजालादि कौतूक आदि से संबद्ध होंगे । वे अंग विन्यास, योग मुद्रा, वशीकरण-उच्चाटन आदि में संलग्न रहेंगे ।
896. लोग ऐसे साधुओं के चाटुकारिता पूर्ण सुंदर छन्दों में रचित कविताओं से और गलत आचरण से घृणित अनुष्ठानों, मिथ्याचार से और असद्भाव से ठगे जाकर अलित-पलित हो जाएंगे । लोग वीतराग उपदिष्ट आगमों की अवमानना करेंगे ।
897. साधु भी अपने धर्म से निरपेक्ष या रहित एवं अत्यंत निर्दयी होंगे । वे श्रामण्य गुण से रहित होंगे । कोई विरला साधु ही संसार सागर को पार करनेवाले होंगे ।
898. वे साधुगण गुरु के आश्रम के नियमों के पालन और श्रमण धर्म में मंदमति के होंगे । इस प्रकार मुंडित तो बहुत दिखेंगे पर पर सच्चे साधु अति अल्प होंगे ।
899. महावीर स्वामी ने गौतम आदि गणधरों को शास्त्र और साधु का संबंध सत्य ही रथ और बैल के तुल्य कहा है और तित्थोगाली में साधु को कल्पवृक्ष और सिंह के समान बताया गया है ।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

900. लुद्धा य साहुवग्गा संपत्ति उप्फालसूयगा<sup>1</sup> बहुगा।  
अलियवयणं च पउरं धम्मो य जितो अहम्मेष॥
901. लुद्धा य पुहइपाला पयतीउप्फल्लसूयगा बहुला।  
अलियवयणं च पउरं धम्मो य जितो अहम्मेष॥
902. गामा मसाणभूता, नगराणि य पेयलोयसरिसाणि।  
दाससमा य कुडुंबी, जमदंडसमा य रायाणो॥
903. राया भिच्चे, भिच्चा य जणवए, जणवए य रायाणो।  
खायंति एकमेकं मच्छा इव दुब्बले बलिया॥
904. जे अंता ते मज्झा, मज्झा य कमेण होंति पंच(?)त्ता।  
अपडागा इव नावा डोल्लंति समंततो देसा॥
905. पगलितगो-महिसाणं उत्तत्थाणं पलायमाणं।  
अजहन्निया पविस्ती उच्चक्खाणं जणवयाणं (?)॥
906. संपत्ता य जणवदा पणट्ठसोभस्सवा(? या) गिरभिरामा।  
हियदार-सावएज्जा चोराउलदुग्गमा देसा॥
907. चोरे हणंति देसे, रायाकरपीडियाइं रट्ठाइं।  
अहरोददडज्जवसाणा भिच्चा य हणंति रायाणो॥
908. धण-धण्णे अवि(धि)तण्हो भिक्खा-बलि-दाणधम्मपरिहीणो।  
पावो मोहमतीओ गुरुजणविपरम्मूहो लोगो॥
909. सीसा वि न पूइंती<sup>2</sup> आयरिए दूसमाणुभावेणं।  
आयरिया (उ) सुमणसा न देंति उवदेसरयणाहं॥

1. उप्फालसूयगा सं०। वप्फालसूयगा हं० की०॥

2. जंतिस० हं० की०॥

## हिन्दी अनुवाद

900. उस समय का साधु वर्ग धन में लुब्ध होगा मर्यादा को तोड़नेवाला होगा। बहुत से साधु दुर्जनता के सूचक होंगे। असत्य बातों की प्रचुरता होगी तथा अधर्म द्वारा धर्म को जीत लिया जाएगा।
901. राजा अपने पद में आसक्त होगा तथा प्रजा भी हर तरह की मर्यादाओं को तोड़नेवाली होगी। उसमें भी असत्य बातों की प्रचुरता होगी तथा अधर्म द्वारा धर्म को जीत लिया जाएगा।
902. ग्राम श्मशान सदृश तथा नगर प्रेतलोक के समान होंगे। गृहस्थ लोग दास की तरह दीन-हीन होंगे और राजा साक्षात् यमदण्ड के समान उत्पीड़क होंगे।
903. राजा नौकर को, नौकर जनपद को तथा राजा भी जनपद को लूट-पाटकर उसी तरह खाएंगे जैसे सबल मछली निर्बल मछली को खा जाती है।
904. जो नीचकुल के हैं वे मध्यम वर्ग में और मध्यम वर्ग के हैं वे क्रमशः परित्यक्त हो जाएंगे। नदी में पड़ी बिना पाल की नौका की तरह वे चारों ओर भटकते फिरेंगे।
905. गायें-भैंसे दुर्बल तथा त्रस्त होकर इधर-उधर भागती फिरेंगी। अस्त-व्यस्त जनपद की यह दयनीय स्थिति बनी रहेगी।
906. उस समय आज के ये जनपद कुरुपता और शोभाहीनता को प्राप्त होते हैं। प्रदेश चोरों से आकुल-व्याकुल होंगे और दुर्गम हो जाएंगे।
907. चोर पूरे देश को तबाह कर देंगे। राजा पूरे राष्ट्र से निर्मम कर वसूल कर नागरिकों को पीड़ित करेगा। अतिक्रूर स्वभाव वाले दास लोग भी राजा को मार डालने से भी नहीं हिचकेंगे।
908. लोग धन-धान्य में लुब्ध, भिक्षा-दान-बलिकर्म आदि से हीन, पापी, मिथ्यादृष्टि तथा गुरुजनों से परांडमुख होंगे।
909. दुसमा काल के प्रभाव से शिष्य आचार्य का आदर सत्कार नहीं करेंगे तथा आचार्य भी प्रसन्न मन से शिष्यों को उपदेश रूपी रत्नों को नहीं देंगे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

910. समणाणं गोयरतो नासीहिति दूसमप्पभावेणं।  
सावगधम्मो वि तहा अज्जाणं पण्णवीसा वि(?)।।
911. देवा न देति दरिसणं धम्मे य मती जणस्स पम्हुट्ठा।  
सत्ताकुला य पुढवी बहुसकिण्णा य पासंडा।।
912. सयणे निच्चविरुद्धो निसोहियसाहिवासमित्तेहिं(?)।  
चंडो दुराणुयत्तो लज्जारहितो जणो जातो।।
913. पुत्ता अम्मा-पितरो अवमण्णंति कडुयाइं भासंति।  
सुण्हा य जंत'समिया, सासू वि य \*कण्हसप्पसमा।।
914. सहपंसुकीलिय(?)सा अणवरयं गरुयनेहपडिबद्धा।  
भित्ता दरहसिएहिं लुभंति वयंसभज्जासु।।
915. हसितेहि जंपिएहि य अच्चिविकारेहिं नट्टलज्जातो।  
सिवलासनियत्थेहि य \*पहुवा(?वहुया) सिक्खंति वेसाणं।।
916. सावग-साविगहाणी भावण-तव-शील-दानपरिहीणं(?)हाणी।  
समणाणं समणीणं असंखडाईणि थोवे\* वि।।
917. विज्जाण य परिहाणी पुप्फ-फलाणं च ओसहीणं च।  
आउय-सुह-रिद्धीणं सद्धाणुच्चत्तधम्मणं।।
918. केवलिवयणं सच्चं तित्थोगालीए भाणियं एयं।  
ताव न छिज्जइ तित्थं जाव \*मपत्तं तु दुप्पसहं।।
919. विज्जाण य परिहाणी रोहिणिपमुहाण सोलसण्हं पि।  
मंडल-मुद्दाऽऽतीणं जह भणिया वीयरगेणं।।
920. चुण्णंजणाण हाणी पायपलेवाण ओसहीणं च।  
अंतद्धाण-वसीकरण-खग्ग-गोरोयणादीणं।।

1. किण्हो की० ला०।।  
2. पहुवा की०।।  
3. थेवे की० ला०।।  
4. अत्र मकारोऽलाक्षणिकः।।

## हिन्दी अनुवाद

910. दुसमा काल के प्रभाव से साधुओं की भिक्षावृत्ति नष्ट हो जाएंगी तथा पच्चीस प्रकार के श्रावक धर्म भी नष्ट हो जाएंगे। साध्वियों के आचार भी धीरे-धीरे नष्ट हो जाएंगे।
911. देवता दर्शन नहीं देंगे तथा लोगों की मति धर्म से भ्रष्ट हो जाएगी। पृथ्वी सत्ता की होड़ से आकुल हो जाएगी और यहां बहुत प्रकार के मिथ्या दृष्टि साधु विचरण करने लगेंगे।
912. स्वजन हमेशा आपस में झगड़ने वाले होंगे, हमेशा साथ रहनेवाले मित्रों में भी विरोध उपजता रहेगा। इस समय चंड, दुष्ट प्रवृत्तियों में संलग्न रहनेवाले तथा लज्जाहीन लोग उत्पन्न होंगे।
913. पुत्र, माता-पिता की अवमानना करने लगेंगे और कटू वचन बोलेंगे। पुत्रवधू वशीकरण करनेवाली होगी और सास नागिन के समान होंगी।
914. कुलबधुएं अपने बाल मित्र के साथ स्नेहासक्त होंगी। मित्रों का आदर भाव कम होगा और मित्रों की पत्नियों में मित्रों की आसक्ति बढ़ेगी।
915. वे कुलबधुएं लज्जाहीन होकर हास्य, प्रेमालाप, नयन वाण चलाएंगी। वे विलासपूर्ण कटाक्ष करने जैसे वेश्याओं के अनेक लक्षणों को सीखेंगी।
916. उस समय के श्रावक-श्राविकाओं, तप-शील-दान आदि की वृत्ति, साधु-साध्वी के संघाटकों की निरंतर हानि होती जाएगी।
917. उस विशेष ज्ञान-फूल-फल, औषधियों, आयु, सुख, धन, वैभव अणुव्रत धर्म आदि की लगातार हानि होती जाएगी।
918. लेकिन इन सबके बावजूद तीर्थ तब तक नष्ट नहीं होगा, जब तक कि दुष्प्रसह मुनि का स्वर्गवास नहीं हो जाता। इस तित्थोगाली में कहा गया तीर्थकर का वचन सत्य है।
919. रोहिणी प्रमुख सोलह विद्याओं तथा मंडल मुद्रादि की परिहानि जैसा वीतराग भगवान ने कहा है, वैसा ही जानना चाहिए।
920. जादुई चूर्ण, पांव में किये जानेवाले लेप की औषधियों तथा अन्तर्ध्यान, वशीकरण, खग्ग, गोरोचन आदि विद्याओं की हानि दिनोंदिन होती जाएगी।

### तित्थोगाली प्रकीर्णक

921. मंताण य परिहाणी 'पसिणावच्चल्लसाणजोयाणं (?)।  
कलहऽबक्खाणाणं वुड्ढी एवं जिणा बेंति ।।
922. कलहकरा डमरकरा असमाहिकरा अनेवुड्ढकरा य।  
होहिंति एत्थ समणा नवसु वि खेत्तेसु एमेव ।।
923. दूसमकाले होही एवं एयं जिणा परिकहेति ।  
एगंतदूसमाए पावतरागं अतो एं(ए)ति ।।
- (गा. 924-75. छट्ठस्स अइदूसमासमाए भावा)
924. एव परिहायमाणे लोगे चंदो व्व कालपक्खम्मि।  
जे धम्मिया मणुस्सा सुजीवियं जीवियं तेसिं ।।
925. दुस्समसुस्समकालो महाविदेहेण आसि परितुल्लो।  
सो उ चउत्थो कालो वीरे परिनिव्वुते छिन्नो ।।
926. तिहिं वासेहिं गतेहिं गएहिं मासेहि अद्धनवमेहिं।  
एवं परिहायंते दूसमकालो इमो जातो ।।
927. एयम्मि अइक्कंते वाससहस्सेहि एकवीसाए ।।  
फिट्ठिहिंति लोगधम्मो अग्गीमग्गो जिणऽक्खातो ।।
928. होही हाहाभूतो (य) दुक्खभूतो य पावभूतो य।  
कालो अमाइपुत्तो गोधम्मसमो जणो पच्छा ।।
929. खर-फरुसधूलिपउरा अणिट्ठफासा समंततो वाया।  
वाहिंति भयकरा वि अ दुव्विसहा सब्बजीवाणं ।।
930. धूमायंति दिसाओ रओ-सिला-पंक-रेणुबहुलाओ।  
भीमा भयजणणीओ समंततो अंतकालम्मि ।।

1. परिणा० ला० ।।

2. 'अतिदूसमाए' इत्यर्थः ।।

### हिन्दी अनुवाद

921. जिनों ने बताया है कि उस काल में मंत्र विद्या, प्रश्न विद्या, मनोयोग विद्या, योग विद्या आदि की परिहानि होती है। कलह और अभ्याख्यान बढ़ते जाते हैं।
922. कलहप्रिय, युद्धप्रिय, समाधि-ध्यान आदि से हीन और आसक्त साधु इस क्षेत्र में और अन्य सभी नौ क्षेत्रों में उस समय विद्यमान होते हैं।
923. जिनदेवों की प्ररूपणा के अनुसार, दुसमा काल का स्वरूप इसी तरह का होगा। अब अंतिम दुसमा-दुसमा काल में पापों की पराकाष्ठा का वर्णन इस प्रकार से है।
- (छठे दुषमा-दुषमा आरे का भाव-प्ररूपण, गाथा 924-75)
924. छठे आरे में लोग कृष्ण पक्ष के चंद्रमा के समान हीयमान होते हैं। जो धार्मिक मनुष्य होते हैं, उनका जीवन सुखपूर्वक व्यतीत होता है।
- 925+926. दुसमा-सुषमा नामक चौथा काल महाविदेह क्षेत्र के समान होता है। वह काल महावीर के परिनिर्वाण के तीन वर्ष साढ़े आठ महीना व्यतीत हो जाने पर खंडित हो जाता है। उसका पतन हो जाने पर पंचम दुषमा काल प्रारम्भ हुआ।
927. इस पांचवे आरे के इक्कीस हजार वर्ष बीत जाने के पश्चात जिनदेव के कथनानुसार लोकधर्म का नाश हो जाएगा। इसके साथ ही लोक से अग्नि का भी विच्छेद हो जाएगा।
928. उस काल में चारो तरफ हाहाकार, दुःख और पाप का साम्राज्य होगा। इस अंतिम काल के मनुष्यों में माता-पुत्र का विवेक नहीं रहेगा। सब पशुवत व्यवहार करेंगे।
929. चारो तरफ प्रचूर मात्रा में खर-पतवार तथा धूलिकण से भरी आंधियां चलेंगी। उस समय की आंधियां प्राणिमात्र के लिए अनिष्टकारी, कठोर तथा भयंकर कष्ट देनेवाली होंगी।
930. उस अंतिम काल में सभी दिशाएं धूमयुक्त होंगी। रज-कण-पत्थर-कीचड़-धूल आदि की प्रचूरता होगी। चारो ओर भयंकर भय का वातावरण रहेगा।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

931. अह दूसमाए तीसे वीतिककंताए चरिमसमयम्मि।  
वासीहि सव्वरत्तिं सुमहंत निरंतरं वासं।।
932. तेण हरिया य रुक्खा तण-गुम्म-लया-वणफ्फतीओ य।  
अग्गिस्स य किर जोणी तमहोरत्तं पडिस्सिहिति।।
933. एते सणियं सणियं सव्वे वि य पव्वया न होहिति।  
वेयड्ढो रयणड्ढो नवरं किच्छाए दीसिहिति।।
934. चंदा मुतिहिति हिमं, 'अहिययरं सूरिया उ तविहिति।  
जेण इहं-नर-तिरिया सी-उण्हहया किलिस्संति।।
935. अहियं होही सीतं, अहियं उण्हा वि होहिती सततं।  
होही तइया लोगो मुम्मुरनिउरुंबसारिच्छो।।
936. होही सुसिरा भूमी पडंतइंगालमुम्मुरसरिच्छा।  
अग्गी हरियतणाणि य नवरं सो तीहि सोविही (ऊ?)।।
937. उदएणं बूढो सो उ जणे पुप्फ-फल-पत्तपरिहीणो।  
कलुणकिवणो वराओ होहिति उव्वाहुलो दट्ठुं।।
938. चिक्खल्लकालियाओ चिक्खल्लपिसाइयाओ महिलाओ।  
ववगतनियंसणाओ नवरं केसेहिं पडिवज्जा।।
939. 'भेसुंडियरुवगुणा विवन्नदेहच्छवी निरभिरामा।  
नग्गा विगयाभरणा बीभच्छा दीहरोम-नहा।।
940. कृणिम-सिरीसव-कद्दम-मुत्त-पुरीसासिणो मडहदेहा।  
हण-छिंद-भिंदपउरा दोग्गतिगामी य होहिति।।
941. पुणरवि अभिक्खभिक्खं अरसं विरसं च खार खट्टं च।  
अग्गि-विस-असणिसहितं मुतिहिन्ति (मुइंति) मेहा जलमणिट्ठं।।
942. जेण इहं मणुयाणं कासो सासो भगंदरं कोढा।  
होहिति एवमादी रोगा अण्णे अणेगविहा।।

1. अहियं च मूत वहिहिति। सर्वासु प्रतिशु।।  
2. 0परिहाणी की0 ला0। 0परिहाणा हं0।।  
3. पडिपुद्धा हं0की0 ला0।। 4. भसुंडियो सं0 ला0।।

## हिन्दी अनुवाद

931. अति दुसमा काल के अंतिम समय में रात-दिन घोर मूसलाधार वर्षा होगी।
932. इसके कारण दूब, वृक्ष, तृण, गुल्म, लता वनस्पति तथा अग्नि का मूल-ये सब समूल रूप से एक दिन और रात में नष्ट हो जाएंगे।
933. यहां धीरे-धीरे सभी पर्वत भी समाप्त हो जाएंगे। केवल रत्नों की खान वैतादय पर्वत ही बहुत थोड़ा सा दिखाई देगा।
934. उस समय में चंद्रमा अधिक शीत निश्चित करेंगे तथा सूर्य भी अधिक तपेंगे। यहां जो नर-नारी और तिर्यच होंगे, वे सब अत्यधिक शीत और गर्मी से पीड़ित होंगे।
935. उस समय निरन्तर प्रचंड गर्मी और अत्यधिक शीत पड़ेगा। उस समय लोक उपले की आग की ढेर के समान हो जाएगा।
936. भूमि अंगारे गिरने से जलते हुए उपले के भुंभुर की तरह हो जाएगी। अग्नि के साथ ही सभी तृण-पात नष्ट हो जाएंगे जो फिर नहीं होंगे।
937. लोग पानी में बहते हुए पुष्प-फल-पत्र आदि को भी प्राप्त नहीं कर सकेंगे। वे लोग करुण, कृपण और दीन-हीन बने रहेंगे। उनका दिखना भी दुर्लभ हो जाएगा।
938. महिलाएं कीचयुक्त काली तथा कीचयुक्त पिशाचिनी की तरह होंगी। वे वस्त्र से रहित केवल केश धारण करेंगी।
939. उस समय के लोग कौए की तरह रूपवाले कुरूप तथा शरीर की कांति से हीन, नग्न, आभरण रहित, वीभत्स तथा लंबे-लंबे रोम और नखवाले होंगे।
940. वे लोग सर्प-कीचड़-मुत्र-विष्टा आदि को भक्षण करनेवाले, छोटे कदवाले, मुर्दे के समान देहवाले, प्रचूर मात्रा में हत्या-छेदन-भेदन करनेवाले तथा दुर्गाति प्राप्त करनेवाले होंगे।
941. बार-बार भीषण दुष्काल पड़ेंगे। बादल भी अरस, विरस, कड़वा, शुष्क, खट्टा, अग्नि, विष एवं वज्र समेत अनिष्टकारी जल को बरसाने वाले होंगे।
942. इन कारणों से जो मनुष्य होंगे, उन्हें खांसी, भगंदर, श्वास रोग, कुष्ठ और इसी प्रकार के अन्य अनेक असाध्य रोग होंगे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

943. होहिइ तिरिए य दुहा जल-थल-खहचारिणो य तिविहे वि।  
नासीहिति रुक्खादी कूव-तडागा नदीओ य।।
944. दससु वि खेत्तेसेवं नर-नारीओ हवंति नग्गाइं।  
गोधम्मसमाणाइं तेसिं मणुयाण सुरताइं।
945. जह किर इण्हं महिला पुत्ते जंपति 'जीव वाससयं'।  
वाच्छिंति तदा महिला 'सोलसवासाउया होह'।।
946. सोलसवासा मणुया' पणत्तुए णत्तुए य दच्छिंति<sup>२</sup>।  
ऊणगछव्वरिसाओ तदा पयाहिंति महिलाओ।।
947. छव्वरिसी गब्भघरी होही नारी उ दुक्खबीभच्छा।  
दच्छिंति पुत्त-नत्तुय दस-सोलसवासिया थेरा।।
948. सोलसवासा महिला पणत्तुए नत्तुए य दच्छिंति।  
एगंतदूसमाए पुत्त-पउत्तेहिं परिकिण्णा।।
949. भ(?भे)सुंडियरूवगुणा सव्वे तव-नियम-सोयपरिहीणा।  
उक्कोसरयनिमित्ता मेत्तीरहिया य होहिंति।।
950. होहीति सममणुण्णय वेयड्ढ-महानदीओ मोत्तूण।  
मोत्तूण उसभकूडे चेइयकूडे य<sup>३</sup> सेसं तु।।
951. इंगालमुम्मुरसमा (य) छारभूया भविस्सती धरणी।  
तत्त<sup>४</sup>कवल्लुगभूता तत्तायसजोइभूया य।।
952. धूली-रेणूबहुला धणचिक्कणकदमाउला धरणी।  
चंकम(म्म)णे य असहा सव्वेसिं मणुयजातीणं।।
953. मणुया खर-फरुसनहा उब्भडघाडामुहा विगडनासा।  
वण्णादीहि गुणेहि य सुनिट्ठुरतरा भवे सव्वे।।

1. 0या नत्तूयपणओए य सं० ला०। नत्तूयपणओए य हं० की०। अत्र मूलस्थः पाठः संपादकेन स्वयं लिखितो ज्ञेयः।।

2. दच्छिंति पाठस्थाने ला० विना वत्थिंति इति पाठः।।

3. तु हं० की०।।

4. 0कवल्लग० हं० की०।।

## हिन्दी अनुवाद

943. उस समय जल-थल-आकाश में विचरण करनेवाले तीनों प्रकार के प्राणी और तिर्यच दुखी होंगे। इस समय वृक्षादि, कूप-तलाब तथा नदियां नष्ट हो जाएंगी।
944. दसों क्षेत्रों में नर-नारी नग्न रहनेवाले होंगे तथा उन मनुष्यों की संभोग क्रिया पशुवत होंगी।
945. जैसे आज के समय में कोई महिला पुत्र को आशीर्वाद में कहती है- 'शतायु हो', वैसे उस समय की महिला पुत्र से कहेगी- 'सोलह साल तक जीवित रहो'।
946. उस काल में सोलह वर्ष की आयु में ही लोग पौत्र-प्रपौत्र को देख लेंगे। महिलाओं को छह वर्ष से कम उम्र में ही प्रसव होने लगेंगे।
947. छह वर्ष की आयु में गर्भधारण कर चुकी महिलाओं को भयंकर दुःख उठाना पड़ेगा। सोलह वर्ष में ही वह दस पुत्र-पौत्रों को देखकर वृद्धा हो जाएंगी।
948. इस अंतिम दुसमा काल में सोलह वर्षीय महिलाएं परपौत्रों-परनातियों तक को देख लेती हैं। इसी उम्र में वे पौत्र-प्रपौत्रों से भरी-पुरी हो जाएंगी।
949. उस समय के गांव शूकर की तरह के रूप और गुणवाले होंगे। उस समय के वे लोग सभी प्रकार के तप-नियम और शौच और मैत्री भाव से रहित होंगे। उनकी अधिक से अधिक लंबाई एक मुंड हाथ होगी।
950. वैतादय पर्वत, महानदी, ऋषभ कूट और चैत्य कूट मंदिर को छोड़कर सभी जगह धरती समतल हो जाएगी।
951. उस काल में पृथ्वी उपले की आग के समान, क्षारभूत और तप्त लोहे की ज्योति के समान हो जाएगी।
952. धूल तथा रजकण की बहुलता तथा काईयुक्त कीचड़ से पृथ्वी भरी रहेगी। सभी मनुष्य जाति को चलना-फिरना असह्य हो जाएगा।
953. उस समय के मनुष्य कठोर-परुष, बड़े-बड़े नखवाले, अनगढ़ घड़े के समान मुखवाले तथा विकट नाकवाले होंगे। ये सब लोग वर्ण और गुण आदि से निष्ठुर और अत्यधिक रूक्ष स्वभाववाले होंगे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

954. रयणीपमाणमेत्ता उक्केसेणं तु वी-सोलाऊ ।  
बहुपुत्त-नत्तुसहिया निल्लज्जा विणयपरिहीणा ॥
955. नट्ठग्गिहोमसक्कर(?य) भोइणो सूरपक्कमंसासी ।  
अणुगंगसिंधु-पव्वयबिलवासी कूरकम्मा य ।
956. होहिंति य बिलवासी बावत्तरि ते बिला उ वेयड्ढे ।  
उभतो तडे नदीणं नव नव एककेक्कए कूले ॥
957. सेसं तु बीयमेत्तं होही सव्वेसु जीवजातीसु ।  
कृणिमाहारा सव्वे नासाए संज्ञकालस्स ॥
958. रहपहमेत्तं तु जलं होही बहुमच्छ-कच्छभाइणं ।  
तम्मि समए नदीणं गंगादीणं दसण्हं पि ॥
959. अहमा य सूरभीरू निसाचरा बिलगया द दिवसम्मि ।  
गंगा-सिंधुनदीणं काहिंति ततो थले मच्छा ।
960. गंगा सिंधू य नदी वयेड्ढगिरी य भरहवासम्मि ।  
एयाइं नवरिं तिन्नि वि होहिंति, न होहिती सेसं ॥
961. इगवीससहस्साइं भणिया अतिदूसमा उ वीरेणं ।  
रायगिहे गुणसिलए गोयममादीण सीसाणं ॥
962. ओसपिणी उ एसा कोडाकोडीओ होइ दस चव ।  
अयरोवमाण निययं अरगा छ च्चेव वक्खाया ॥
963. एत्तो परं तु वोच्छं ओसपिणीए उ किंचि उद्देसं ।  
इगवीससहस्साइं अइदूसम होइ वासाणं ॥
964. दससु वि वासेसेसा काहिंति दुक्खाइं मणुय-तिरियाणं ।  
होही असुरा भूमी मुम्मुरइंगालसमवण्णा ॥

## हिन्दी अनुवाद

954. उनकी लंबाई एक मुंड हाथ तक होगी। अधिकतम आयु बीस से सोलह वर्ष प्रमाण मात्र ही होगी। वे सब इतनी ही उम्र में बहुत से पुत्र-पौत्रों से युक्त, निर्लज्ज और विनय आदि गुणों से हीन होंगे।
955. वे लोग होम-यज्ञादि से रहित, अग्नि के नष्ट हो जाने के कारण सूर्य की रोशनी में पकाया हुआ मांस खानेवाले, गंगा-सिंधु के किनारे और पर्वतों में रहनेवाले तथा क्रूर कर्म करनेवाले होंगे।
956. वे लोग बिलों में रहनेवाले होंगे। उस समय वैताद्व्य पर्वत पर बहनेवाली नदियों-गंगा-सिंधु-के चारों तटों पर 18-18 यानी, 72 बिल होंगे।
957. उस समय सभी जीव जातियों का बीज मात्र ही शेष बचेगा। वे सभी संघाकाल में मत्स्य आदि खानेवाले होंगे।
958. उस समय दसों क्षेत्रों में गंगा आदि नदियों में रथ पथ की चौड़ाई बराबर ही जल होंगे तथा उसमें बहुत सारी मछलियां और कछुए वास करेंगे।
959. अधम और कायर और रात को निकलने वाले निशाचर मनुष्य दिन को बिलों में चले जाएंगे। उस समय गंगा-सिंधु के किनारे पर मछलियां-कछुए निकला करेंगे, जिन्हें वे शाम के समय किनारे की धूलि में दबा देंगे।
960. उस काल में गंगा-सिंधु नदी और वैताद्व्य पर्वत-यही तीन शेष रहेंगे और कुछ भी नहीं रहेगा।
961. राजगृह के गुणशील नामक चैत्य में भगवान महावीर ने गौतम आदि गणधरों को अतिदुसमा काल का प्रमाण इक्कीस हजार वर्ष बताया था।
962. इस प्रकार दस कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण का उत्सर्पिणी काल होता है। इस उत्सर्पिणी काल के अंतर्गत नियत छह आरों का वर्णन किया गया है।
963. इसके बाद उत्सर्पिणी के कुछ उद्देशक या कुछ पाठ कहूंगा। इसमें प्रथम इक्कीस हजार वर्ष का अतिदुसमा काल होता है।
964. दसों क्षेत्रों में मनुष्यों, तिर्यचों के दुःख अवसर्पिणी के अंतिम आरे की तरह ही उत्पन्न होंगे। भूमि भी असुर स्वभाव यानी उपले की आग के समान जलती हुई होगी।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

965. सी-उण्हं बिलवासी गमेति कहकहवि दुक्खसंतत्ता।  
वसणविहूणा मणुया, इत्थीओ विगयचेलाओ॥
966. कुणिमाहारा सव्वे निसाचरा 'बिलगता य दिवसम्मि।  
गंगादीहरमेत्ता (?) काहिति ततो थले मीणे॥
967. ....।  
..... मेत्तीरहिया उ होहिति॥
968. बीसतिवासा मणुया दुहत्थउच्चा य होति अंतम्मि।  
पढमं सोलसवासा हत्थुच्चा चेव होहिति॥
969. तियपक्खिवग्ग सीहा चउप्पया पंचइदिया जे य।  
गय-गो-महिसि-खरोट्टं पसू य विविहो य पाणिगणो॥
970. आगमियाए उस्सप्पिणीए होहिति बीयमेत्ताइं।  
बावत्तरि जुयलाइं नराण तत्तो पसवणाओ॥
971. होहिंती बिलवासी बावत्तरि ते बिला उ वेयइडे।  
उभओ तडे नईणं नव नव एक्केक्कए कूले॥
972. सेसं तु बीयमेत्तं होही सव्वेसि जीवजातीणं।  
कुणिमाहारा सव्वे निसा(स्सा)ए संझकालस्स॥
973. रहपहमेत्तं तु जलं होही बहुमच्छ-कच्छभाइण्णं।  
तम्मि समए नदीणं गंगादीणं दसण्हं पि॥
974. विस-अग्गि-खारपाणियवरिसा मेघा य घोरवरिसा य।  
एक्केक्क सत्त राइं होही भरहस्स अंतम्मि।
975. चुन्नियसेलं संभिण्णसलिलगंभीरविसमभूमितलं।  
उदही जहा समतलं होही भरहं निरभिरामं॥

1. विगलता त दि० सर्वासु प्रतिषु॥

2. सर्वास्वपि प्रतिषु गाथेयं खण्डितैवोपलब्धा॥

## हिन्दी अनुवाद

965. उस काल में भी शीत-उष्ण की प्रचंडता से दुःख संतप्त बिलवासी  
चीत्कार करेंगे। मनुष्य वस्त्रहीन होते हैं और स्त्रियां नग्न रहने  
वाली होंगी।
966. मत्स्य, मकर आदि कुत्सित आहार करनेवाले वे सभी लोग निशाचर  
होंगे और दिन के समय बिलों में चले जाया करेंगे। वे सब संध्या के  
समय गंगा नदी से मछली निकालकर तटों पर गाड़ देंगे।
967. .... मित्रता से रहित हो जाएंगे।
968. इस काल के अंतिम समय में मनुष्य बीस वर्ष की आयु और दो हाथ  
ऊंचाई वाले होते हैं। इस काल के प्रारम्भ में उनकी आयु सोलह वर्ष  
और ऊंचाई केवल एक मुंड हाथ की ही होगी।
- 969+ 970. तिर्यच, पक्षीवर्ग, सिंह, चतुष्पद तथा जितने भी पंचेन्द्रिय जीव,  
हाथी-गाय-भैंस-गधा आदि जानवर तथा विविध प्रकार के प्राणिगण-ये  
सब आगामी उत्सर्पिणी काल में बीज मात्र ही शेष होंगे। उस समय  
मनुष्यों के 72 युगल ही होंगे।
971. उस समय के लोग वैतादय पर्वत पर बहनेवाली गंगा और सिंधु-  
दो नदियों के दोनों तटों पर बने 18-18 यानी, कुल 72 बिलों में  
वास करेंगे।
972. सभी जीव जातियों का केवल बीजमात्र ही शेष बचा रहेगा। वे सब  
संध्या काल के अंधकार में कुत्सित आहार भक्षण करनेवाले ही होंगे।
973. उस काल में दसों क्षेत्रों में गंगा आदि नदियों का जल रथ के रास्ते  
के प्रमाण मात्र चौड़ाई जितना ही होगा तथा उसमें बहुत सारी  
मछलियां और कछुए निवास करेंगे।
974. बादल विष, अग्नि, क्षार की वर्षा करेंगे तथा इस काल के अंत में प्रत्येक  
भरत क्षेत्र में सात रात तक मूसलाधार वर्षा होगी।
975. उस बारिश से पर्वत चूर्ण हो जाएंगे तथा कठोर और विषम भूमितल पर  
जल व्याप्त रहेगा। भरत क्षेत्र समुद्र की तरह समतल और सौंदर्यहीन  
हो जाएगा।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

(गाथा 976-84. आगमेस्सुस्सप्पिणीए पढमस्स अइदुसमा  
अरगस्स भावा)

976. ओसप्पिणीइमीसे वीतिककंताए चरिमसमयम्मि।  
तो आगमेसियाए उस्सप्पिणिए उ पट्ठवणा॥
977. ओसप्पिणीइमाए जो होही (?होहऽइ) दुस्समाए अणुभावो।  
सो चव (य) अणुभावो उस्सप्पिणिपट्ठवणगम्मि॥
978. सी-उण्हपउलिएहिं वित्ती तेसिं तु होइ मच्छेहिं।  
इगवीससहस्साइं वासाणं निरवसेसा उ॥
979. सी-उण्हपउलिएहिं वित्ती तेसिं तु होइ मच्छेहिं।  
बायालीससहस्सा वासाणं निरवसेसा उ॥
980. अवसप्पिणीए अद्धं अद्धं उस्सप्पिणीए तहिं (?ह) होइ।  
एयम्मि गते काले होहिंति उ पंच मेहा उ॥
981. पुक्खलसंवट्टो 1 वि य खीरोद 2 घतोए 3 अमयमेहो 4 या।  
पंचमओ रसमेहो 5 सव्वे दसवरिसखेत्ता उ॥
982. एककेक्को अणुबद्धं (?अणवरय) वासीहिंति सत्त सत्त दिवसाइं।  
पंचतीसं (?से) दिवसे वद्धलिया होहिंति सोमा॥
983. पढमो उ निव्ववेहिंति, धण्णं बितिओ करेहिइ मेहो।  
तइओ नेहं जणयइ, ओसहिमादी चउत्थो उ॥
984. पंचमतो रसमेहो तेसिं चिय पुढवि-रुक्खमादीणं।  
एवं कमेण जायं धण्णाइगुणेहिं उववेयं॥
- (गाथा 985-98. आगमेस्सुस्सप्पिणीए बिइयस्स  
दूसमासमाअरगस्स भावा)
985. अस्सप्पिणिदूसमदूसमाए पत्ताइ चरिमरातीए।  
वासिहिंति सव्वराइं महंतर (?य) निरंतरं वासं॥

## हिन्दी अनुवाद

(आगामी उत्सर्पिणी काल में प्रथम अति दुषमा आरे का भाव)

976. इस अवसर्पिणी काल के आदि से अंत समय तक जो स्थिति रहती है वही स्थिति आगामी उत्सर्पिणी काल में होगी। लेकिन उल्टे क्रम में। यानि जो इस समय पहले हुआ वह तब बाद में होगा और जो इस समय अंत में होनेवाला है वह उस काल के पुरु में हो जाएगा।
977. इस अवसर्पिणी काल के अतिदुसमा आरे में जो-जो प्रभाव होता है, वही प्रभाव उत्सर्पिणी के प्रारम्भ होने पर होता है।
978. शीत- उष्ण से पकी हुई मछलियों से उस समय के लोगों का आहार होगा। यह समस्त उत्सर्पिणी काल इक्कीस हजार वर्ष का होगा।
979. शीत-उष्ण से दग्ध मछलियों से उस समय के लोगों का आहार चलने का यह समस्त काल बयालीस हजार वर्ष का होगा।
980. इस बयालीस हजार वर्ष में से आधा काल अवसर्पिणी में और और आधा काल उत्सर्पिणी काल में होगा। इस काल के समाप्त होने पर पांच प्रकार के मेघ बरसेंगे।
981. ये पांच प्रकार के मेघ हैं-1. पुष्करसंवर्त्त, 2. क्षीरोद, 3. घृतोद, 4. अमृतमेघ और 5. रसमेघ। ये मेघ दसों क्षेत्रों में बरसेंगे।
982. एक-एक मेघ अनवरत सात-सात दिनों तक बरसेंगे। इस प्रकार पैंतीस दिनों की सौम्य बदरी होगी।
983. प्रथम पुष्करसंवर्त्त मेघ पृथ्वी के ताप को शांत करेगा। दूसरा धन-धान्य उत्पन्न करेगा। तीसरा स्नेह तथा चौथा औषधि आदि को उत्पन्न करेगा।
984. पांचवां रसमेघ पृथ्वी, वृक्ष आदि को उत्पन्न करेगा। इस प्रकार क्रम से गुणयुक्त धन-समृद्धि आदि उत्पन्न होंगे।
- (आगामी उत्सर्पिणी के दूसरे दुषमा आरा के समय का भाव.  
गाथा 985-98)
985. उत्सर्पिणी के दुसमा-दुसमा आरा की अंतिम रात्रि आने पर अनवरत घोर मूसलाधार वर्षा होती है।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

986. तेण हरिया य रुक्खा तण-गुम्म-'लया-वणप्फतीओ य।  
अमियस्स किरणजोणी पंचत्तीसं अहोरत्ता।।
987. हारावलिधवलाहि य अह ते धाराहि आहया संता।  
आसत्था मणुयगणा चिंतेउं जे अह पयत्ता।।
988. अच्छेरयं महल्लं अब्भातो पडइ सीयलं उदयं।  
किं दाइं इण्हि काही अण्णं एत्तो य परमतरं ?।।
989. तो ते बिलवासिनरा पासित्ता तं महंतसामिदिधं।  
काहिंति इमं सव्वं सव्वे वि समागता संता।।
990. जातं खु सुहविहारं कुसुमसमिद्धं इहं भरहवासं।  
तो जो कुणिमं खाहिइं अहं सो वज्जणिज्जो उ।।
991. नवसु वि वासेसेवं भणितं वीरेण आयमेसं<sup>2</sup> तु।  
रायगिहे गुणसिलए गोयममादीण सीसाणं।।
992. एवं कमेण पुणरवि दससु वि वासेसु दुस्समा एसा।  
इगवीससहस्साइं वासाणं वट्टए जाव।।
993. एवं संघयणाइं बलविरियाइं तहेव आउं च।  
सद्द-रस-रुव-गंधा फासा अहियं पवड्ढंति।।
994. पीती पणओ नेहो सभावो सोहियं च विणओ य।  
लज्जा य पुरिसकारो जसो य कित्ती य वड्ढंति।।
995. जह जह वड्ढइ कालो तहा तहा रुव-शीलपरिवेदी।  
दो रयणीओ मणुया आरंभे, अंते छ च्चेव।।
996. एव परिवड्ढमाणे लोए चंदे व्व धवलपक्खम्मि।  
तेसिं मणुयाण तया सहस च्चिय होइ मणसुद्धी।।

1. 0लया व जेणप्फत्तीओ सं0। 0लया य जेणप्फत्तीओ की0। 0लया व जेण प्फत्तीओ  
हं0 ला0। अत्र मूले सम्पादकेन परिकल्पितः पाठोऽस्ति।।  
2. 0यमेसिं तु हं0 की0।।

## हिन्दी अनुवाद

986. इस वर्षा से पैंतीस दिन-रात में ही हरियाली, वृक्ष, गुल्म, लता और  
वनस्पति अमृत किरणों के प्रभाव से उत्पन्न हो जाएंगे।
987. उस वर्षा के अटूट धारा प्रवाह से थकावट से रहित होकर, आश्चर्यचकित  
मनुष्यगण, उस प्राप्य वर्षा का विचार करते हैं-
988. यह महान आश्चर्य की बात है कि आकाश से शीतल जल प्रचूर मात्रा  
में गिर रहा है। अब इस मत्स्य आदि मांस खाने का क्या कारण हो  
सकता है जबकि इससे अधिक श्रेष्ठ और स्वादिष्ट चीजें उपलब्ध हो  
रही हैं।
989. तब वे सब बिलवासी मनुष्य इस महान समृद्धि को देखकर वहां जमा  
होकर सर्वसम्मत रूप से इस प्रकार का निर्णय करेंगे- :
990. निश्चय ही सुख को बढ़ानेवाला फूलों की समृद्धि इस भरत वर्ष में  
उत्पन्न हुई है। अब ऐसे में हमलोगों में से जो भी कुत्सित आहार  
खाएगा, वह बहिष्कृत कर दिया जाएगा।
991. आगामी काल में शेष नौ क्षेत्रों में भी ऐसा ही होगा। ऐसा भगवान  
महावीर ने राजगृह के गुणशील चैत्य में गौतम आदि शिष्यों को  
कहा है।
992. इस क्रम से पुनः दसों क्षेत्रों में दुष्मा आरा होगा। वह इक्कीस हजार  
वर्ष तक विद्यमान रहेगा।
993. इस प्रकार संहनन आदि, बलवीर्य आदि तथा आयु एवं शब्द-रस-  
रूप-गंध-स्पर्श इत्यादि अत्यधिक वृद्धि को प्राप्त होते हैं।
994. इसी प्रकार से प्रीति, तप, स्नेह, सद्भाव, शुद्धि, विनय, लज्जा, पौरुष,  
यश तथा कीर्ति आदि भी उत्तरोत्तर बढ़ती रहेगी।
995. जैसे-जैसे काल व्यतीत होता है, वैसे-वैसे रूप, शील परिवर्तित होता  
जाता है। अर्थात् वह सुंदर से सुंदरतम होता जाता है। आरंभ में  
मनुष्य दो मुंड हाथ ऊंचा तथा अंत में छह मुंड हाथ ऊंचा होते हैं।
996. इस प्रकार लगातार शुक्ल पक्ष की चंद्रमा के समान वृद्धि को प्राप्त  
उस समय में लोक के मनुष्यों का मन अचानक शुद्ध हो जाएगा।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

997. विज्जाण य परिवेढी पुप्फ-फलाणं च ओसहीणं च।  
आउय-सुह-रिद्धीणं संठाणुच्चत्त-धम्माणं॥
998. दूसमकालो होही एवं एयं जिणो परिकहेइ।  
दूसमसूसमकाले पवट्टमाणं अतो बेति॥
- (999-1024. आगमेस्सुस्सप्पिणीए तइयस्स दूसमसुसमाअरगस्स भावा)
999. पव्वय-नदीण वुड्ढी विन्नाण-नाण-सोक्खाणं।  
छण्ह वि रज्जिण वुड्ढी दससु वि वासेसु बोधव्वा॥
1000. सणसत्तरसं धण्णं फलाइं मूलाइं सब्वरुक्खाणं।  
खज्जूर-दक्ख-दाडिम-फणसा तउसा य वड्ढति॥
1001. विहरति भरहवासं नर-नारीओ जहिच्छियं रम्मं।  
दससु वि वासेसेवं चउप्पदा पक्खिणो चेव॥
1002. वासंति अमयमेहा, चंदाऽऽइच्चा य सीय-उण्हसुहा।  
वासा दिसा य सोमा भूमी उदगं च महुराइं॥
1003. पुणरवि अभिक्खभिक्खं अमियरसरसोवमं महावासं।  
जेण इहं मणुयाणं होहिति न रोगसंघाया॥
1004. अह दुसमातोवीसे (?दूसमाइमीसे) सत्तण्हं कुलगराण उप्पत्ती।  
कायव्व आणुपुव्वी जहपरिवाडीए सब्वेसिं॥
1005. \*पढमेत्थ विमलवाहण 1 सुदाम 2 संगम 3 सुपासनामे 4 य।  
दत्ते 5 सुनहे 6 तसमं (?वसुमं) 7 इय (ते) सत्तेव निदिददा॥
1006. उस्सप्पिणीइमीसे बितियाए समाए गंग-सिंधूणं।  
एत्थ बहुमज्झदेसे उप्पण्णा कुलगरा सत्त॥

1. जंबुददीवे णं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए सत्त कुलगरा भवति, तं-  
मित्तवाहण सुभोमे य सुप्पमेय सयंपभे। दत्ते सुहुमे सुबंधू य आगमेरिस्सण होक्खती॥  
(आगमोदयसमितिप्रकाशिते स्थानांगसूत्रे पत्रम् 398)। जंबुददीवे णं दीवे भारहे वासे  
आगमिस्साते उस्सप्पिणीए दस कुलकरा भविस्सति, तं - सीमंकरे सीमंधरे खेमंकरे  
खेमंधरे विमलवाहणे सम्मुती पडिसुते ददधणू दसधणू सतधणू। (तत्रैव पत्रम् 518)।  
समवायांगसूत्रेऽप्यत्र निर्दिष्टस्थानांगसूत्रानुसारि पाठद्वयं वर्तते ॥

## हिन्दी अनुवाद

997. इस समय चारों ओर विद्याओं, पुष्प, फल तथा औषधियों की वृद्धि होगी। इस समय आयु, सुख, रिद्धी, संस्थान, ऊंचाई तथा धर्म की भी उन्नति होगी।
998. इस प्रकार का दुषमा काल होता है। ऐसा जिनदेवों ने बार-बार कहा है। इसके बाद के दुषमा-सुषमा काल को प्रवर्द्धमान काल कहा गया है।
- (आगामी उत्सर्पिणी काल के तृतीय दुषमा-सुषमा आरा का प्ररूपण गाथा 999-1024)
999. उत्सर्पिणी काल के तृतीय दुसमा-सुसमा आरे में पर्वतों, नदियों की वृद्धि होगी तथा ज्ञान-विज्ञान और सौख्य भाव बढ़ेंगे। सभी छह ऋतुओं की वृद्धि दसों क्षेत्रों में जानना चाहिए।
1000. इस काल में सतरह प्रकार के धान्य, फल, मूल, सभी प्रकार के वृक्ष, खजूर, अंगूर, अनार, कटहल, खीरा, ककड़ी आदि की वृद्धि होगी।
1001. उस काल में भरत क्षेत्र सहित सभी दस क्षेत्रों में नर-नारी एवं पशु-पक्षी इच्छानुसार विचरण करेंगे।
1002. उस काल में अमृत मेघ बरसता है। चन्द्र और सूर्य सुखदायक शीत-उष्ण प्रदान करते हैं दिशाएं सुवासित, भूमि सौम्य और जल मधुर स्वाद के होते हैं।
1003. पुनः यथासमय अमृत के समान सरसजल की अच्छी वर्षा होगी जिससे कि मानवों में रोग-संघात आदि का नाश हो जाए।
- 1004+1005. तत्पश्चात्, इस दुषमा-सुषमा काल में सात कुलकरों की उत्पत्ति होगी। निम्नलिखित कुलकरों को आनुपूर्वी परिपाटी से जानना चाहिए। इनमें प्रथम विमलवाहन, 2. सुदाम, 3. संगम, 4. सुपाशर्व, 5. दत्त, 6. सुनभ एवं 7. तसम (वसुम)-ये सात कुलकर निर्दिष्ट किये गये हैं।
1006. इस प्रकार उत्सर्पिणी काल के द्वितीय आरे में गंगा-सिंधु के बहुत मध्यदेश में सात कुलकर उत्पन्न होंगे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1007. एरावयम्मि सत्तेव कुलगरा विमलवाहणो पढमो 1।  
बीओ उ विउलवाहणो नयमग्गविसारदो धीरो 2।।
1008. दढधणु 3 दसधणुगो 4 वि य तत्तो सयधणु 5 पडिस्सुई 6 चेव।  
सम्मृति 7 सत्तमगो वि य गाम-नगर-पट्टणाइगरा।।
1009. उस्सपिणीइमीसे बीतिसमाए य उत्तरंतीए।  
एत्थ बहुमज्झदेसे उप्पण्णा कुलगरा सत्त।।
1010. चउसु वि एरवएसुं एवं चउसु वि य भरहवासेसु।  
एक्केक्कम्मि उ खेत्ते होहिंति उ कुलगरा सत्त।
1011. गाम-नगराऽऽगराणं गोउल-संवाह-सन्निवेशाणं।  
कुलनीति-रायनीतीण कारगा' कुलगरा तइया।।
1012. आसा हत्थी गावो गहियाइं रज्जसंगहनिमित्तं।  
ववहारो लेहवणं होही सामाइ एसिं तु।।
1013. उग्गा भोगा राइण्ण खत्तिया संगहो भवे तइया।  
उप्पण्णे अगणिम्मि य रंधणमातीणि काहिंति।। ग्गाथासहरस्सं गतं।।
1014. जह जह वड्ढति कालो तह तह वड्ढंति रूव-सोभग्गा।  
जस कित्ति सील लज्जा नर-नारिगणाण रिद्धीओ।।
1015. हलकरिसण'कम्मत्ता सुवण्ण-मणि-रयण-कंस-दूसा वि।  
भोयण-गंधविहीओ वड्ढंती नरगणाण तहिं।।
1016. दुद्ध दही नवणीयं घयं च तेल्लं च होहिती रम्मं।  
महु-मज्ज-भोयणाइं वड्ढंती नरगणाण चिरं।।
1017. पढमो उ कुलगराणं नामेणं विमलवाहणो तइया।  
जातीसरो उ<sup>3</sup> राया काही कुल-रायधम्मे उ।।
1018. एवं सव्वे काहिंति सुम्मती कुलगरो उ सत्तमतो।  
वेयड्ढगिरिसमीवे पुंडम्मि य जणवदे रम्मे।।

1. कालगा ला0 विना।।

2. 'ग्गाथासहरस्सं-गतं' इति हं0-की0 प्रत्योर्नास्ति।।

3. 0ण कंमन्ना सं0। 0णकंसत्ता ला0।।

## हिन्दी अनुवाद

- 1007+1008. ऐरावत क्षेत्रों के सात कुलकरों में प्रथम विमलवाहन दूसरे नयमार्ग के प्रकांड विद्वान धीर विपुलवाहन, 3. दृढधणु, 4. दसधनुक, 5. शतधनु, 6. प्रतिश्रुति एवं 7. संभुति—ये सातों ही ग्राम-नगर-मुहल्लों आदि का निर्माण करानेवाले होंगे।
1009. इस उत्सर्पिणी काल के द्वितीय आरे के अंत में इस बहुत मध्यदेश में सात कुलकर उत्पन्न होंगे।
1010. इसी प्रकार शेष चारों ऐरावत और चारो भरत क्षेत्रों में से प्रत्येक में सात-सात कुलकर होंगे।
1011. उस समय में कुलकर, ग्राम, नगर, आकर, गोकुल, संवाह, सन्निवेश, कुलनीति तथा राज्य व्यवस्था आदि का निर्माण कराएंगे और सबको सुव्यवस्थित करेंगे।
1012. वे कुलकर घोड़ा, हाथी, गाय आदि को राज्य में संग्रह के निमित्त ग्रहण करेंगे। यहां लौह और लकड़ी का व्यापार होगा। इस समय सब सम्भाव होंगे।
1013. उस समय वहां उग्रकुल, भोगकुल, राजन्यकुल और क्षत्रियकुल का संग्रह होगा। अग्नि के उत्पन्न होने पर भोजन पकाने की क्रिया प्रसभ होगी।
1014. जैसे-जैसे काल व्यतीत होगा, वैसे-वैसे रूप, सौभाग्य यश, कीर्ति, शील, लज्जा और रिद्धियों की वृद्धि नर-नारियों में होती जाएगी।
1015. उस समय के मनुष्यों में हल से कृषि कार्य, हजामत, सुवर्ण, मणि, रत्न, कांस्य, वस्त्र तथा भोजन में उत्तम सुगंधियों का उपयोग बढ़ेगा।
1016. चिर काल तक मनुष्यों के भोजन में मधु और मद्य की मात्रा बढ़ेगी। उस समय दूध, दही, मक्खन, घी, तेल आदि बहुत ही स्वादिष्ट होंगे।
1017. उस समय विमलवाहन नामक प्रथम कुलकर को जातिस्मरण से राजा होने का ज्ञान प्राप्त होगा। इससे वे कुलधर्म और राजधर्म का प्रतिपादन करेंगे।
1018. इसी प्रकार वैतादय पर्वत के समीप पुंड नामक रमणीय जनपद में निवास करते हुए सातवें कुलकर सुमति तक सभी कुलकर इसी तरह से राजधर्म और कुलधर्म का प्रतिपादन करेंगे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1019. नगरम्मि सयदुवारे होही राया उ सुम्मतीनामो।  
सव्वकलाणं णिहसो सव्वपयाणं च' बुद्धिदकरो।।
1020. हय-गय-वरजोहजुतो हेलाविद्ध<sup>2</sup>वियदरियपडिवक्खो।  
गरुयपरक्कमपयडो वेसमणसमाणविभवो य।।
1021. उत्तमरुवसुरुवो उत्तमविन्नाण-नाणसंपन्नो।  
वज्जरिसभसंघयणो इंदीवरलोयणो राया।।
1022. होही भद्दा पत्ती सुवण्णवण्णा वराणणा सुभगा।  
पढमिल्ले संघयणे चउसट्ठिकलाण गहियत्था।।
1023. उस्सपिणीइमीसे बीतिसमाए उ वण्णियं किंचि।  
इगवीससहस्साइं बीओ अरगो उ नायव्वो।।
1024. दूसमसुमसाकालो उदहिसमाणाण कोडिकोडीओ।  
जिण-चक्कि-दसाराणं किंचि समासं पवक्खामि।।
- (गा. 1025- 1114. आगमेस्सुस्सपिणीए पढमस्स  
महापउमत्तित्थयरस्स चरियं जिणंतराइं च)
1025. नगरम्मि सतदुवारे सम्मुइरायस्स भारिया भद्दा।  
सयणिज्जे सुहसुत्ता चोद्दस सुमिणे उ पेच्छिहिति।।
1026. गय<sup>1</sup> उसम<sup>2</sup> सीह<sup>3</sup> अभिसेय<sup>4</sup> दाम<sup>5</sup> ससि<sup>6</sup> दिणयरं<sup>7</sup> झयं<sup>8</sup> कुंभं<sup>9</sup>।  
पउमसर<sup>10</sup> सागर<sup>11</sup> भवणविमाण<sup>12</sup> रयणुच्चय<sup>13</sup> सिहिं<sup>14</sup> च।।
1027. एते चोद्दस सुमिणे पासइ भद्दा सुहेण पासुत्ता।  
जं रयणिं उववण्णो कुच्छिसि महायसो पउमो।।
1028. एरावते वि एवं सम्मुइरायस्स भारिया भद्दा।  
सयणिज्जे सुहसुत्ता चोद्दस सुमिणे य दच्छिहिति।।

1. य हं0 की0।।

2. च पुट्ठिकरो हं0 की0।। 4. 0विद्धरियो सं0।।

## हिन्दी अनुवाद

1019. इसके बाद शतद्वार नामक नगर में सुमति नामक राजा होंगे। वे सभी कलाओं में सिद्धहस्त तथा सारी प्रजा की उन्नति करनेवाले होंगे।
1020. वे श्रेष्ठ घोड़ों, हाथियों और योद्धाओं से युक्त होकर शीघ्रतापूर्वक गर्विष्ठ प्रतिपक्षियों यानी शत्रुओं का नाश करनेवाले, अद्भुत पराक्रम को प्रकट करनेवाले तथा वैभव में कुबेर के सदृश होंगे।
1021. राजा सुमति उत्तम रूप से सुशोभित, श्रेष्ठ ज्ञान-विज्ञान से संपन्न, वज्रऋषभनाराच संहनन तथा कमल के समान नेत्र से सुशोभित होंगे।
1022. उनकी भद्रा नामकी स्वर्ण वर्णवाली, श्रेष्ठ तथा सौभाग्यवती पत्नी वज्रऋषभनाराच संहनन तथा चौसठ कलाओं को धारण करने वाली होगी।
1023. उत्सर्पिणी काल के द्वितीय आरे का यहां कुछ वर्णन किया गया। इस दूसरे आरे को इक्कीस हजार वर्ष का जानना चाहिए।
1024. दुषमा-सुषमा काल कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण का होता है। यहां तीर्थकर, चक्रवर्ती, और दशार्हो (वासुदेवों) का कुछ वर्णन संक्षेप में करूंगा।

### (आगामी उत्सर्पिणी काल में प्रथम महापद्म तीर्थकर का चरित तथा जिन अंतर का वर्णन. गाथा 1025-1114)

1025. सौ द्वारवाले नगर में सुमति राजा की भद्रा नामक पत्नी शय्या पर सुखपूर्वक सोती हुई चौदह स्वप्नों को देखेंगी।
1026. ये स्वप्न होंगे-1. गज, 2. वृषभ, 3. सिंह, 4. अभिषेक, 5. माला, 6. चन्द्र, 7. दिनकर, 8. मछली, 9. कुंभ, 10. पद्म सरोवर, 11. सागर, 12. भवन विमान, 13. रयनोच्चय और 14. पर्वत।
1027. जिस रात्रि को भद्रा रानी के गर्भ में महायशस्वी पद्म आएंगे, वह रानी उसी रात्रि में सुखपूर्वक सोती हुई उपरोक्त चौदह स्वप्नों को देखेंगी।
1028. ऐरावत क्षेत्र में संभूति राजा की भद्रा नाम की पत्नी सुखपूर्वक सोती हुई चौदह स्वप्नों को देखेंगी।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1029. गय<sup>1</sup> उसभ<sup>2</sup> सीह<sup>3</sup> अभिसेय<sup>4</sup> दाम<sup>5</sup> ससि<sup>6</sup> दिणयरं<sup>7</sup> झयं<sup>8</sup> कुंभं<sup>9</sup>।  
पउमसर<sup>10</sup> सागर<sup>11</sup> भवणविमाण<sup>12</sup> रयणुच्चय<sup>13</sup> सिहिं<sup>14</sup> च ॥
1030. एते चोददस सुमिणे पासइ भददा सुहेण पासुत्ता।  
जं रयणिं उववण्णो कुच्चिं सिद्धत्थतित्थयरो ॥
1031. चउसु वि एरवएसुं एवं चउसु वि य भरहवासेसु।  
उववण्णो तित्थयरा हत्थुत्तरजोगजुत्तेणं ॥
1032. जो सो सेणियराया कालं काऊण कालमासम्मि।  
रयणप्पभाए तीसे उव्वट्ठित्ता य इहइम्मि ॥
1033. सीमंतगनरगाओ आउं परियाणि(?पालि)ऊण तो भगवं।  
चउरासितिसहसाणं वासाणं सो महापउमो ॥
1034. चेत्तस्स सुद्धतेरसिचंदे हत्थुत्तराए जोगेणं।  
सिद्धत्थ—महापउमा जाया दस एगसमएणं ॥
1035. नाणारयणविचित्ता वसुधारा निवडिया कलकलंती।  
गंभीरमहुरसददो य दुंदुभी तालिओ' गगणे ॥
1036. जाण—विमाणारूढा अह एंति तहिं दिसाकुमारीओ।  
उड्ढ—महेलोगम्मि य वत्थव्वा तिरियलोगे य ॥
1037. जाणविमाणपभाए रयणी आसी य सा दिवसभूया।  
सुरकण्णाहि समहियं दस वि य नयरे विराइत्था ॥
1038. दससु वि वासेसेवं उप्पण्णा जिणवरा दस च्चेव।  
जम्मणमहो य सव्वो नेयव्वो जाव घोसणयं ॥
1039. अद्धनवमा य मासा वासा तिन्नेव होंति वोक्कंता।  
दूसमसूसमकाले तो उप्पण्णो महापउमो ॥
1040. चुलसीतिसहस्साइं वासा सत्तेव पंच मासा य।  
वीर—महापउमाणं अंतरमेयं तु विन्नेयं ॥

ताविओ गेण सर्वासु प्रतिष्ठु ॥

## हिन्दी अनुवाद

1029. ये स्वप्न होंगे—1. गज, 2. वृषभ, 3. सिंह, 4. अभिषेक, 5. माला,  
6. चन्द्र, 7. सूर्य, 8. मछली, 9. कुम्भ, 10. पद्म सरोवर, 11. सागर,  
12. भवन विमान, 13. रयनोच्चय और 14. पर्वत।
1030. जिस रात्रि को सिद्धार्थ तीर्थकर रानी भद्रा के गर्भ में आएंगे, उसी  
रात्रि को वह रानी सुखपूर्वक सोती हुई उपरोक्त चौदह स्वप्नों  
को देखेंगी।
1031. शेष चारों ऐरावत और चारों भरत क्षेत्रों में भी हस्तुत्तर योग नामक  
उत्तम नक्षत्र में तीर्थकर उत्पन्न होंगे।
- 1032+1033. इस भरत क्षेत्र में तीर्थकर महावीर के काल में जो श्रेणिक नाम  
के राजा थे, वे रत्नप्रभा नामक तीसरी पृथ्वी के सीमंतक नामक नरक  
से चौरासी हजार वर्ष की आयु का अपना काल पूरा कर मृत्यु के  
बाद उस भव में महापद्म होंगे।
1034. चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की तेरस तिथि को उत्तर—फाल्गुनी नक्षत्र  
में एक ही समय में दसों क्षेत्रों में सिद्धार्थ और महापद्म उत्पन्न होंगे।
1035. उनके जन्म के समय नाना प्रकार के विचित्र रत्न कलकल करते हुए पृथ्वी  
पर गिरे तथा आकाश में गंभीर, मधुर शब्द में दुंदुभी और तालियां बजेगी।
1036. अब उर्ध्व, मध्य और अधोलोक की वासी, दिशाकुमारियां, यान-विमान  
पर आरूढ़ होकर तीर्थकरों के जन्म स्थान पर आती हैं।
1037. तीर्थकरों के जन्म के समय यान विमानों की प्रभा से रात भी दिन के  
समान हो जाता है। देव कन्याएं विशेष रूप से जिन जन्म नगरों में  
निवास करती हैं, वहां विशेष प्रकाश होगा।
1038. दसों क्षेत्रों में दस तीर्थकर उत्पन्न होते हैं। उन सबके जन्म महोत्सव  
पूर्व के वर्णन की तरह ही जानना चाहिए।
1039. दुषमा—सुषमा काल में से तीन वर्ष साढ़े आठ माह बीत जाने पर  
महापद्म उत्पन्न होंगे।
1040. महावीर और महापद्म तीर्थकर के बीच का अंतर चौरासी हजार सात  
वर्ष पांच महीने जानना चाहिए।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1041. तुट्ठाओ देवीओ देवा आणंदिया सपरिसागा।  
भयवम्मि महापउमे तइलोककसुहावहे जाते।।
1042. जायम्मि महापउमे परमरयणकणगवण्णवरवासं।  
मुंचति देवसंघा हरिसवसुल्लसियरोमंचा।।
1043. जम्हां अम्हं नगरे जायं जम्मे इमस्स पुत्तस्स।  
पउमेहिं महावासं नामं से तो महापउमो।।
1044. रिद्धिथिमियसमिद्धं भारहवासं जिणंदिकालम्मि।  
बहुअतिसयसंपण्णं सुल्लोगनिभं गुणसमिद्धं।।
1045. गामा (य) नगरभूया, नगराणि य देवलोगसरिसाणि।  
रायसमा य कुडुंबी, वेसमणसमा य रायाणो।।
1046. भंग-त्तासविरहितो डमरुल्लोल-भय-दंडरहितो य।  
परचक्क-ईति-तक्करअ-करभरविवज्जितो लोगो।।
1047. अह वड्ढति सो भगवं सुममतिरायस्स संगतो वीरो<sup>1</sup>।  
दासी-दासपरिवुडो परिकिण्णो पीढमद्देहिं।।
1048. असितसिरतो सुनयणो बिंबोटो धवलदंतपंतीओ।  
वरपउमगभगोरो फुल्लुप्पलगंधनीसासो।।
1049. जातीसरो उ भयवं अप्पडिवडिएहिं तिहि उ नाणेहिं।  
कंतीय य बुद्धीए य अब्भहितो तेहिं मणुएहिं।।
1050. अह तं अम्मा-पितरो जाणित्ता अहियअट्ठवासागं।  
कयकोउगऽलंकारं लेहायरियस्स उवणंति।।
1051. सक्को य तस्समक्खं भयवं वस्सा(?दम्भा)सणे निवेसित्ता।  
सद्दस्स लक्खणं पुच्छे वागरणं अवयवाइदं(?ईयं)।।

1. धीरो हं०।।

## हिन्दी अनुवाद

1041. तीन लोकों में सुख की वृद्धि करनेवाले भगवान महापद्म के जन्म लेने पर सभी देव-देवियां अपने परिषद सहित आनंदित और संतुष्ट होंगी।
1042. महापद्म के जन्म होने पर हर्ष से प्रफुल्लित, रोमांचित देवगण रत्न एवं सुवर्ण वर्णवाले श्रेष्ठ गंधयुक्त फूलों की वर्षा करेंगे।
1043. तीर्थकर के पिता सुमति कहेंगे—इस पुत्र के जन्म होने पर हमारे नगर में बहुत फूलों की वर्षा हुई है, इसलिए इसका नाम महापद्म होगा।
1044. जिनेन्द्र के समय में भरत क्षेत्र के लोग वैभव, ऋद्धि एवं मित्रों से संपन्न, बहुत अतिशय से संपन्न, गुण समृद्ध एवं देवलोक सदृश होंगे।
1045. ग्राम नगर के समान, नगर देवलोक के सदृश, कुटुम्ब गण राजा के समान और राजा कुबेर के समान होंगे।
1046. उस समय में लोक विनाश—त्रास से रहित, बाह्य या आभ्यंतर राज विद्रोह से रहित, दुश्मनों के षड्यंत्र एवं ईति, तस्करी या राजकर के भार से मुक्त होते हैं।
1047. अब धीर—वीर भगवान सुमति राजा की देखरेख में बढ़ते हैं। वे दास-दासियों से घिरे तथा पीठमर्द (काम पुरुषार्थ में राजा का सहायक मित्र) से परिकीर्ण होते हैं।
1048. भगवान के सिर पर काले-काले बाल, सुंदर आंखे, बिम्बफल के समान ओष्ठ, श्वेत दंतपंक्ति, उत्तम कमल के भीतरी भाग के सदृश सुंदर और कोमल शरीर तथा कमल गंध सदृश श्वासोच्छ्वास होंगे।
1049. भगवान जन्म काल से ही जाति स्मरण और तीन ज्ञान (मति, श्रुत, अवधि) से युक्त होंगे तथा उस समय के सभी मनुष्यों से सुंदरता और बुद्धि में भी अधिक तीक्ष्ण होंगे।
1050. अब उनके माता-पिता, उन्हें आठ वर्ष से अधिक का हुआ जानकर उन्हें कौतूक अलंकारों से अलंकृत कर लेखनाचार्य यानी गुरु के पास ले जाएंगे।
1051. तब शक्र लेखनाचार्य के सामने ही भगवान को कुशासन पर बैठाकर उनसे शब्द के लक्षण, व्याकरण, अवयव आदि पूछते हैं।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1052. अह तं अम्मा-पितरो जाणित्ता अहिगअट्ठवासागं।  
कयकोउगऽलंकारं रायऽभिसेगं तु काहिति॥
1053. तिहि-करणम्मि पसत्थे महंतसामंतकुलपसूयाए।  
कारिति पाणिगहणं जसोयवररायकण्णाए॥
1054. भरहम्मि पढमराया हय-गय-रह-जोहसंकुलं सेण्णं।  
तो माणिभदददेवो काहीती पुण्णभददो य॥
1055. जम्हा देवा सेण्णं पडियग्गंती उ पुव्वसंगइया।  
तो हवउ देवसेणो देवासुरपूजितो नामं॥
1056. घवलं गयं महंतं सत्तंगपइट्ठितं चउददंतं।  
वाहेती विमलजसो नामं तो विमलवाहणो त्ति (?)॥
1057. सो देवपरिग्गहिओ तीसं वासाइं वसति गिहवासे।  
अम्मा-पितीहिं भगवं देवत्ति(?)गतेहिं पव्वइतो॥
1058. संवच्छरेण होही अभिनिक्खमणं तु जिणवरिदाणं।  
तो अत्थसंपयाणं पवत्तइ पुव्वसूरम्मि॥
1059. सिंघाडग-तिग-चउक्क-चच्चर-चउमुह-महापह-पहेसु।  
दारेसु पुरवराणं रच्छामुहमज्झयारेसुं॥
1060. वरवरिया घोसिज्जइ किमिच्छगं दिज्जए बहुविहीयं।  
सुरअसुर-देव-दाणव-नरिंदमहियाण निक्खमणे॥
1061. एगा हिरण्णकोडी अट्ठेव अणूणगा सयसहस्सा।  
सूरोदयमाईअं दिज्जइ जा पायरासाओ॥
1062. तिन्नेव य कोडिसया अट्ठासीइं च हुति कोडीओ।  
असिइं च सयसहस्सा एअं संवच्छरे दिण्णं॥
1063. एवं नवसु वि खेत्तेसु तित्थगरा उ संवच्छरं दाणं (?)।  
हत्थुत्तराहि नव वी निक्खंता खायकित्तीया॥

## हिन्दी अनुवाद

1052. माता-पिता उन्हें आठ वर्ष से अधिक का हुआ जानकर सुंदर अलंकारों से अलंकृत कर उनका राज्याभिषेक करेंगे।
1053. माता-पिता श्रेष्ठ तिथि-करण में विशाल सामन्त कुल में उत्पन्न यशोदा नामक श्रेष्ठ राजकन्या के साथ उनका विवाह करेंगे।
1054. इस प्रकार महापद्म आगामी उत्सर्पिणी काल में भरत क्षेत्र के प्रथम राजा होंगे। मणिभद्र और पूर्णभद्र देव भरत क्षेत्र के प्रथम राजा पद्म के घोड़े, हाथी, रथ तथा योद्धाओं से परिपूर्ण सेना को सजाते हैं।
1055. पूर्व भव के मित्र देवों द्वारा सेना सजाने के कारण महापद्म का दूसरा नाम देवासुर द्वारा पूजित देवसेन भी होगा।
1056. सातों अंगों से सुशोभित चार दांतवाले विशाल श्वेत हाथी पर विमल यशवाले वे प्रथम तीर्थकर सवार होते हैं। इसलिए उनका नाम विमलवाहन भी होता है।
1057. वे पद्म तीर्थकर देवताओं से घिरे हुए तीस वर्ष तक गृहवास करेंगे। माता-पिता की मृत्यु होने के बाद वे प्रव्रजित हो जाएंगे।
1058. अभिनिष्क्रमण के एक वर्ष पहले से सूर्योदय काल में वे अपनी संपत्ति के दान में प्रवृत्त होंगे। इसके बाद लोकांतिक देवों द्वारा निवेदन किये जाने पर अभिनिष्क्रमण करेंगे।
- 1059+1060. वे तीर्थकर श्रेष्ठ नगर के सिंघाटक, त्रिकों, चौकों, चौराहों, चतुर्मुखों, महापथों, पथों, नगर द्वारों तथा मुहल्लों के मध्य में सुर, असुर, देव, दानव और श्रेष्ठ राजाओं को इच्छित वस्तुओं का दान देने की घोषणा करवाते हैं।
1061. एक करोड़ आठ लाख स्वर्ण मुद्राएं वे प्रतिदिन प्रातःकाल में भोजन वेला तक जिनेश्वरों द्वारा दान किया जाता है।
1062. इस प्रकार तीन सौ अट्ठासी करोड़ अस्सी लाख स्वर्ण मुद्राओं का दान वे एक वर्ष में करते हैं।
1063. इस प्रकार सभी नौ क्षेत्रों में यशस्वी तीर्थकर गण संवत्सर दान के बाद हस्तोत्तरा नक्षत्र में अभिनिष्क्रमण करते हैं।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1064. हत्थुत्तराहि भगवं सयदारे खत्तिओ महासत्तो।  
वज्जरिसभीसंघयणो भवियजणविबोहतो पउमो।।
1065. सारस्सय—माइच्चा वण्ही वरुणा य गददतोया य।  
तुसिता अब्बावाहा अग्गिच्चा चेव रिट्ठा य।।
1066. एते देवनिकाया भगवं बोहिंति जिणवरिदं तु।  
'सव्वजगजीवहिययं भगवं तित्थं पवत्तेहि'।।
1067. एवं अभिथुव्वंतो बुद्धो बुद्धारविंदसरिसमुहो।  
लोगंतियदेवेहिं सतवारम्मि य महापउमो।।
1068. मणपरिणामो य कतो अभिणिक्खमणम्मि जिणवरिदेणं।  
देवेहि य देवीहि य समंतओ 'उव(?ग)यं गयणं'।।
1069. भवणवइ वाणमंतर जोइसवासी विमाणवासी य।  
धरणियले गयणयले विज्जुज्जोओ कओ खिप्पं।।
1070. जेट्ठं नलिणिकुमारं रज्जे ठावित्तु तं महापउमो।  
उत्तत्तकणयवण्णो मिगसिरबहुलस्स दसमीए।।
1071. पाईणगामिणीए अभिणिविट्ठाए पोरिसिच्छाए।  
विजएण मुहुत्तेणं सो उत्तरफग्गुणीजोगे।।
1072. चंदप्पभा य सीता उवणीया जम्म—मरणमुक्कस्स।  
आसततमल्लदामा जलय—थलय—दिव्वकुसुमेहिं।।
1073. पण्णासइमायामा धणूणि वीसा य पण्णवीसा य।  
छत्तीसइमुव्विद्धा सीता चंदप्पभा भणिया।।
1074. सीयाए मज्झयारे दिव्वं मणि—रयण—कणगचेंचइयं।  
सीहासणं महरिहं सपायपीढं जिणवरस्स।।
1075. आलइयमालमउडो भासरबोंदी पलंबवणमालो।  
सियवत्थसन्नियच्छो जस्स य मोल्लं सयसहस्सं।।

1. उधयं सं०। उधयं हं० की०।।

## हिन्दी अनुवाद

1064. हस्तोत्तरा नक्षत्र में शतद्वार नगर में वज्रऋषभनाराच संहनन से युक्त महासात्विक क्षत्रिय भगवान पद्म भव्यजनों को उद्बोधन देंगे।
- 1065+1066. सारस्वत, आदित्य, वह्नि, वरुण, गर्दतोय, त्रुसित, अव्याबाध आनेय तथा रिष्ट— इतने देव निकायों को जिन श्रेष्ठ पद्म भगवान बोध देंगे। इसके बाद ये सभी देव निकाय जगत के समस्त जीव का कल्याण करनेवाले भगवान से निवेदन करेंगे— “भगवन! तीर्थ का प्रवर्तन कीजिये”।
1067. लोकान्तिक देवों द्वारा शतद्वार नगर में इस प्रकार की स्तुति की जाने पर कमल के खिले पुष्प के समान नेत्रों वाले भगवान महापद्म बुद्ध यानी तीर्थकर को तब तीर्थ प्रवर्तन का ध्यान आएगा।
1068. जिनवरों द्वारा अभिनिष्क्रमण का भाव मन में लाते ही सभी देव—देवियां उनके पास चारो दिशाओं से आ जाएंगी।
1069. भवनवासी, वयान्वन्तर, ज्योतिष्क तथा विमानवासी देवतागण शीघ्रतापूर्वक वहां की धरती तथा आकाश में बिजली का प्रकाश करेंगे।
- 1070+1072. उत्तप्त सुवर्ण वर्णवाले महापद्मनाथ अपने ज्येष्ठ पुत्र नलिन कुमार को मृगसिरा नक्षत्र की दशमी तिथि को राज सिंहासन पर बैठाकर उत्तर फाल्गुनी नक्षत्र के विजय मुहूर्त में चौथे पहर के समय जब मानव की छाया पूरब की ओर अभिनिविष्ट होगी, जन्म—मरण के चक्र से मुक्ति के लिए जल—थल में उत्पन्न दिव्य कुसुमों की पुष्पमाला से आवृत चंद्रप्रभा नामक शिविका में बैठकर अभिनिष्क्रमण के लिए निकलेंगे।
1073. वह चन्द्रप्रभा नामकी शिविका (पालकी) 50 धनुष लंबी, 25 धनुष बीच की चौड़ी, आगे—पीछे 20 धनुष चौड़ी और 36 धनुष ऊंची कही गयी है।
1074. उस पालकी के अंदर बीच में जिनदेव के लिए दिव्य मणि, रत्न, सुवर्ण, बहुमूल्य सिंहासन तथा पादपीठ रखा जाएगा।
1075. अपने सुविशाल भाल पर ललित मुकुट पहने हुए, प्रकाशमान देह छवि वाले और घुटनों तक लंबी वैजयंती माला पहने उन महापद्म द्वारा पहने श्वेत वस्त्र का मूल्य एक लाख स्वर्ण मुद्रा थीं।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1076. छट्ठेणं भत्तेणं अज्झवसाणेण सोहणेण जिणो।  
लेसाहिं विसुज्झंतो आरुभती उत्तमं सीयं।।
1077. सीहासणे निसन्नो सक्कीसाणेहिं दोहि पासेहिं।  
वीयंति(?तो) चामरेहिं मणि-कणगविचित्तदंडेहिं।।
1078. पुव्विं उक्खित्ता माणुसेहिं सा हट्ठरोमकूवेहिं।  
पच्छा वहंति सीयं असुरिद-सुरिद-नागिंदा।।
1079. चलचवलकुंडलधरा सच्छंदविउव्वियाऽऽभरणधारी।  
देविंद-दाणविंदा वहंति सीयं जिणवरस्स।।
1080. वणसंडो व्व कुसमिओ, पउमसरो वा जहा सरयकाले।  
सोभइ कुसुमभरेणं इय गयणयलं सुरगणेहिं।।
1081. सिद्धत्थवणं व जहा असणवणं सणवणं असोगवणं।  
चूतवणं व कुसुमितं इय गयणयलं सुरगणेहिं।।
1082. अयसिवणं व कुसुमियं कणियारवणं व चंपयवणं व।  
तिलगवणं व कुसुमियं इय गयणयलं सुरगणेहिं।।
1083. वरपडह-भेरि-झल्लरि-दुंदुहि-संख(य)सतेहिं तूरेहिं।  
धरणियले गयणयले तुरियनिनाओ परमरम्मो।।
1084. एवं सदेवमणुयासुराए परिसाए परिवुडो भयवं।  
अभिथुव्वंतो गिराहिं मज्झमज्झेण सतवारं।।
1085. अणवरयदाणसीलो नलिणकुमारेण परिवुडो वीरो।  
उज्जाणं संपत्तो नामेणं पउमिणीसंडं।।
1086. ईसाणाए दिसाए ओइण्णो उत्तमाओ सीयाओ।  
सयमेव कुणइ लोयं, सक्को से पडिच्छई केसे।।
1087. जिणवरमणुण्णवित्ता अंजण<sup>1</sup>-घण-रूयगभसंकासा।  
केसा खणेण नीता खीरसलीलामय<sup>2</sup> उदहिं।।

1. 0णघणरूयगभमरसं0 हं।।

2. सरौरामयं सर्वासु प्रतिषु।।

## हिन्दी अनुवाद

1076. जिनदेव स्वयं को षष्ठम भक्त यानि-तेलाव्रत, अध्यवसाय, शुद्धि, लेश्या आदि से युक्त होकर उस चन्द्रप्रभा शिविका में आरोहण करेंगे।
1077. पालकी के बीचोंबीच सिंहासन पर बैठे जिनों को शक्रेन्द्र और इषाणेन्द्र दोनों तरफ से मणि-स्वर्ण से जड़े हुए दण्ड और चामर से हवा झलेंगे।
1078. आगे से वह पालकी हर्षित रोमांचित मनुष्यों द्वारा तथा पीछे से वह दानव-देव तथा नागेन्द्रों के द्वारा धारण की जाएगी।
1079. इस प्रकार जिनके कुंडल चपलित हैं तथा जो स्वच्छंद वैक्रियलब्धि द्वारा विभिन्न रूपों को धारण किये तथा आमूषणों से भूषित हैं, ऐसे देवेन्द्र और दानवेन्द्र जिनवरों की पालकी को ढोएंगे।
1080. जैसे शरद काल में पद्म सरोवर तथा कुसुमित विविध पुष्प की छटा बनती है, वैसे ही देवताओं आकीर्ण उस समय गगनमंडल शोभित होगा।
- 1081+1082. जिस प्रकार सिद्धार्थ वन, असन वन, सन वन, अशोक वन, आम्र वन, फूलयुक्त तीसी वन, कणियार वन, चंपक वन तथा तिल वन होता है, वैसे ही देवताओं से भरा गगन तल सुंदर और रमणीय प्रतीत होगा।
1083. उस समय श्रेष्ठ ढोल, भेरी, झाल, दुंदुभी, शंख तथा सैंकड़ों तुरही की धरती तथा आकाश में, परम रमणीय निनाद उत्पन्न होंगे।
- 1084+1085. इस प्रकार परिषद सहित देव, मनुष्य तथा दानवों से घिरे हुए वीरवर भगवान बीच-बीच में जय-जयकार आदि स्तुति वाणी से पूजित और अभिनंदित होते हुए भगवान पद्म अनवरत दान देते हुए नलिनकुमार द्वारा सेवित शतद्वार नगर के मध्य भाग में स्थित मुख्य मार्ग से निकलकर पदिमनी खंड नामक उद्यान में पहुंचेंगे।
1086. इस प्रकार जिनवर उस उद्यान के ईषाण कोण दिशा में पहुंचकर उत्तम पालकी से उतरेंगे और स्वयं ही केशलोच करेंगे। उन केशों को शक्र ग्रहण करेंगे।
1087. जिनवरों की आज्ञा पाकर काजल और घने मेघ के समान रुचक तथा भ्रमर के समान काले सुन्दर केशों को शक्र शीघ्र ही क्षीर समुद्र के अमृत जल में डाल आएंगे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1111. नवसु वि वासेसेवं सिद्धत्थादी य जिणवरिदा उ।  
साइम्मि जोगजुत्ते कत्तियबहुलस्स अंतम्मि॥
1112. एसा उ मते भणिया पउमजिणिंदस्स संकहा सु(पु)ण्णा।  
एत्तो परं तु जाणह जिणंतरा चेव पडिलोमा॥
1113. ते चेव जम्मरिक्खा, ते चिय मासा, तिहीओ ता चेव।  
आउग-उच्चत्ताइं वण्णा रुक्खा वि ते चेव॥
1114. नवरं पडिलोमाइं तित्थोगालीए वीरभणियाइं।  
तित्थगरे आगमिसे सनामनामेहिं कित्ते हं॥

### (गा. 1115-19. आगमिस्सुस्सप्पिणीए भरहखेत्तचउवीसइजिणनामाइं)

1115. <sup>1</sup>महापउमे 1 य <sup>2</sup>सुरदेवे 2 सुपासे 3 य सयंपमे 4।  
सव्वाणुभूति अरहा 5 देवगुत्तो<sup>6</sup> 6 य होहिही॥
1116. उदगे 7 पेढालपुत्ते 8 य पोट्टिले 9 सयगे<sup>4</sup> 10 त्ति य।  
मुणिसुव्वते 11 य अरहा सव्वभाव<sup>6</sup>विहंजणे 12॥
1117. अममे 13 निक्कसाए 14 य निष्पुलाए 15 य निम्ममे।  
चित्तगुत्ते 16 समाहि 17 य आगमेसाए<sup>6</sup> होहिति॥
1118. संवरे 18 अणियट्टी 19 य विवागे<sup>7</sup> 20 विमले 21 त्ति य।  
देवोववायए अरहा 22 अणंत 23 विजए 24 ति य॥
1119. एते वुत्ता चउव्वीसं भरहे वासम्मि केवली।  
<sup>8</sup>आगमेसाए होहिंति<sup>9</sup> धम्मतित्थस्स देसगा॥

1. अत आरभ्य गाथापंचकं समवायांगे उपलभ्यते, दृश्यतां श्रीमहावीरजैनविद्यालयप्रकाशिते समवायांगसूत्रे पृ. 476। गाथापंचकस्यास्य व्याख्यायां श्रीमद्विरभयदेवसूरिभिः संक्षिप्तरूपेणेत्यं निर्दिष्टमस्ति-“महापद्मादयो विजयान्ताश्चतुर्विंशतिः”॥ 2. सूर. सम॥

3. देवउत्ते य होक्खती सम॥ 4. सतए ति य सम०॥ 5. वविदू जिणे सम०॥

6. आगमेस्सेण होक्खईं सम०॥ 7. विवाए सम०॥ 8. आगमिस्साण होक्खति सम०॥

9. अभिधानचिन्तामणिनाममालायां भविष्यश्चतुर्विंशतिजिननामान्तीत्यं निरूपितानि-“भाविन्यां तु पद्मनाभः 1 शूरदेवः 2 सुपार्श्वकः 3॥53॥ स्वयंप्रभृच 4 सर्वानुभूति 5 देवश्रुतोदयो 6-7। पेढालः 8 पोट्टिलश्चापि 9 शतकीर्तिश्च 10 सुव्रतः 11॥54॥ अममो 12 निष्कषायश्च 13 निष्पुलाको 14 ष्थ निर्ममः 15। चित्रगुप्तः 16 समाधिश्च 17 संवरश्च 18 यशोधराः 19॥ विजयो 20 मल्ल 21. देवो 22 चाणनन्तवीर्यश्च 23 भद्रकृत् 24। (प्रथमे देवाधिदेवकाण्डे)॥

हिन्दी अनुवाद

1111. शेष नौ क्षेत्रों में भी सिद्धार्थ आदि जिनदेव कार्तिक कृष्ण पक्ष की अंतिम रात्रि में उत्तम स्वाति नक्षत्र में सिद्ध होंगे।

1112. इस प्रकार पद्म जिनदेव की सुनी हुई पुण्य कथा मेरे द्वारा कही गयी। इसके बाद जिनों के अंतराल काल अवसर्पिणी काल के जिनों के अंतराल काल के समान लेकिन उल्टे क्रम से समझना चाहिए।

1113. उसी क्रम से उनके जन्म के नक्षत्र, महीने, तिथि, आयु, ऊंचाई, रंग एवं चैत्य-वृक्ष भी होंगे।

1114. पुनः पञ्चानुपूर्वी यानी उल्टे क्रम से ही आगामी तीर्थकरों के नाम तथा कर्तव्यों को तित्थोगाली में भगवान महावीर ने वर्णन किया है। अब आगे आगामी तीर्थकरों के नाम का कीर्तन करूंगा।

(आगामी उत्सर्पिणी काल में भरत क्षेत्र के चौबीस तीर्थकरों के नाम, गाथा. 1115-19)

1115. 1. महापद्म, 2. सूर्यदेव, 3. सुपार्श्व, 4. स्वयंप्रभ, 5. सर्वानुमति, 6. देवगुप्त तीर्थकर होंगे।
1116. 7. उदक, 8. पेढालपुत्र, 9. पोट्टिल, 10. शतक, 11. मुनि सुव्रत या सर्वभावविद् तीर्थकर होंगे।
1117. 12. अमम, 13. निष्कषाय, 14. निष्पुलाक, 15. निर्मम, 16. चित्रगुप्त, 17. समाधि आगामी काल के तीर्थकर होंगे।
1118. 18. संवर, 19. अनिवर्तिन, 20. विपाक, 21. विमल, 22. देवोपपातक, 23. अनंत तथा 24. विजय जिनदेव होंगे।
1119. ए सब जिनदेव भरत क्षेत्र के आगामी काल के लिए कहे गये हैं। उस काल में ये सब धर्मतीर्थ के उपदेशक होंगे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1088. दिव्वो मणुस्सघोसो तुरियनिनाओ य सक्कवयणेणं।  
खिप्पामेव निलुक्को ताहे पडिवज्जइ चरित्तं॥
1089. काऊण नमोक्कारं सिद्धाणमभिग्गहं तु सो गिण्हे।  
'सव्वं मे अकरणिज्जं पावं' ति चरित्तमारूढो॥
1090. तिहिं नाणेहिं समग्गा तित्थयरा जाव होंति गिहवासे।  
पडिवण्णम्मि चरित्ते चउनाणी जाव छउमत्था॥
1091. नवसु वि वासेसेवं सिद्धत्थादी जिणिंदचंदा उ।  
हत्थुत्तराहिं सव्वे मिगसिरबहुलस्स दसमीए॥
1092. बारस चेव य वासा मासा छ च्चेव अद्धमासो य।  
पउमादीण दसण्ह वि एसो छउमत्थपरियाओ॥
1093. एवं तवोगुणरतो अणुपुव्वेणं मुणी विहरमाणो।  
वज्जरिसभसंघयणो सत्तेव य होति रयणीओ॥
1094. वइसाहसुद्धदसमीए केवलं सामसालहेट्ठम्मि।  
छट्ठेणुक्कुड्डुयमओ उप्पणं जंभियागामे॥
1095. सेसाणं पि नवण्हं एवं वइसाहसुद्धदसमीए।  
हत्थुत्तराहिं नाणं होही जुगवं जिणिंदाणं॥
1096. उप्पण्णम्मि अणंते नट्ठम्मि य' छाउमत्थिए नाणे।  
राईए संपत्तो महसेणवणं तु उज्जाणं॥
1097. अमर-नर-रायमहिओ पत्तो धम्मवरचक्कवट्ठित्तं।  
बीयम्मि समोसरणे पावाए मज्झिमाए उ॥
1098. एक्कारस वि गणहरा सव्वे उन्नयविसालकुलवंसा।  
पावाए मज्झिमाए समोसढा जण्णवासम्मि॥

1. वि हं की०॥

## हिन्दी अनुवाद

1088. शक्र की आज्ञा से तत्काल देवों, मनुष्यों के जयघोष, तूर्य आदि वाद्यों की गूंज आदि बंद हो जाएंगी और जिनदेव व्रत-नियम रूपी निर्ग्रन्थ चरित्र को अंगीकार करेंगे।
1089. नमस्कार मंत्र का जाप कर वे तीर्थकर सिद्धों को प्रणाम कर अभिग्रह—'सब पाप मेरे लिए अकरणीय हैं'—धारण करेंगे और चरित्र यानि पंच महाव्रत को अंगीकार करेंगे।
1090. जब तक तीर्थकर गृहवास काल में होते हैं तो तीन ज्ञान-मति, श्रुत, अवधि से युक्त होते हैं। व्रत अंगीकार करने से लेकर छद्मस्थ अवस्था यानि कैवल्य की प्राप्ति से पहले वे चौथे ज्ञान यानी मनःपर्यव से भी युक्त हो जाते हैं।
1091. इसी तरह शेष नौ क्षेत्रों में भी सिद्धार्थ आदि जिनेश्वर मृगशिरा नक्षत्र में कृष्ण पक्ष की दशमी तिथि को पुत्रों को राज्य देकर हस्तुत्तरा नक्षत्र में अभिनिष्क्रमित होंगे।
1092. इसके बाद पद्म आदि दसों तीर्थकर बारह वर्ष साढ़े छह माह तक छद्मस्थ अवस्था में आवृत रहेंगे।
1093. इस तरह सात मुंड हाथ लंबे तपवृद्धि में रत, वज्रऋषभनाराच संहनन से युक्त तीर्थकर भगवान के अनुक्रमशः अप्रतिहत विचरण करते हुए वैशाख के शुक्ल पक्ष की दशमी को वेलातप तथा उक्कुटुक आसन से युक्त स्थिति में जंभिया नामक ग्राम में काले रंग के साल वृक्ष के नीचे उन्हें केवल ज्ञान प्राप्त होगा।
1095. शेष नौ तीर्थकरों को भी इसी प्रकार वैशाख मास के शुक्ल पक्ष की दशमी को एक ही समय में हस्तोत्तर नक्षत्र के योग में केवल ज्ञान प्राप्त होगा।
1096. छद्मस्थ ज्ञान के नष्ट होने और अनंत केवल ज्ञान के उत्पन्न होने पर उसी रात्रि में ही तीर्थकर भगवान महासेन वन नामक उद्यान में विहार कर जाएंगे।
1097. देव, मनुष्य, राजाधिराज, द्वारा पूजित भगवान पावापुरी नगरी में हुए दूसरे समवसरण में धार्मिक चक्रवर्ती के पद से विभूषित होंगे।
1098. उत्कृष्ट, विशाल कुलवंश में उत्पन्न उनके सभी 11 गणधर पावापुरी के मध्य में आयोजित यज्ञ की यज्ञशाला में समवसृत होंगे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1099. पढमेत्थ कुंभसेणो नामेणं गणहरो महासत्तो।  
वज्जरिसभसंघयणो चोददसपुव्वी महावीरो।।
1100. वइसाहसुद्धएक्कारसीए तह पढमपोरिसीए उ।  
हत्थुत्तरवय' (?व)करणे गणिपिडगसभाणि ए अत्थं (?)।।
1101. एवं तित्थुप्पत्ती दससु वि वासेसु होइ नायव्वा।  
एक्कारस य<sup>2</sup> गणहरा नव य गणा तस्स एमेव।।
1102. सोहिय संववहारो सभावो गरुयया खमा सच्चं।  
आउग-उच्चत्ताइं दससु वि वासेसु वड्ढति।।
1103. चंदसमा आयरिया, खीरसमुददोवमा उवज्जाया।  
साहू साहुगणा वि य, समणीओ समियपावाओ।।
1104. ससिलेह व्व पवत्तिणि, अम्मा-पियरो य देवयसमाणा।  
माइसमा वि य सासू ससुरा वि य पितिसमा हु तथा।।
1105. धम्माधम्मविहन्नु विणयन्नु सच्च-सोयसंपन्नो।  
गुरु-साहुपूयणरओ सदरनिरतो जणो तइया।।
1106. अप्प(?ग्घ)इ य सविण्णाणो, धम्मे य जणस्स आयरो तइया।  
विज्जापुरिसाा पुज्जा, धरिज्जइ कुलं च सीलं च।।
1107. एवं कुसुमसमिद्धे जणवयवंसम्मि विहरते भगवं।  
नवसु वि वासेसेवं विहरेंति जिणा, जिणा बेंति।।
1108. सुबहूहिं केवलीहि य मणपज्जव-ओहिनाणहड्ढीहिं।  
समणगणसपरिवुडा विहरेंति जिणा इ भुवणिंदा।।
1109. वड्ढइ जणवयवंसो नलिणिकुमारवररायवंसाओ।  
सज्जाओ वि य वड्ढति एवं कालाणुभावेणं।।
1110. निट्ठवियकम्मजालो कत्तियबहुलस्स चरिमरातीए।  
सिज्झिहिति नाम पउमो अण्णाए पावनगरीए।।

1. 0रपयक0 ला0 विना।।

2. वि हं0 की0।।

## हिन्दी अनुवाद

1099. उसमें प्रथम कुंभसेन नामक गणधर, महान सत्ववाले, वज्रऋषभ नाराच संहनन से युक्त, चौदह पूर्वों के ज्ञाता तथा महान पराक्रमी होंगे।
1100. वे वैशाख शुक्लपक्ष एकादशी के प्रथम प्रहर में हस्तोत्तर नक्षत्र में भगवान गणपितक की अर्थसहित व्याख्या प्रारम्भ करेंगे।
1101. इस प्रकार तीर्थ की उत्पत्ति दसों क्षेत्रों में जानना चाहिए। इस तीर्थ में 11 गणधर तथा 9 गण होंगे।
1102. लोगों की निर्मलता, व्यवहार, सद्भाव, महानता, क्षमा, सत्य, आयु, ऊंचाई आदि दसों क्षेत्रों में उत्तरोत्तर बढ़ती रहती हैं।
1103. आचार्य चन्द्रमा के समान शीतल, उपाध्याय क्षीर समुद्र सदृश, साधुगण संज्जन तथा साध्वियां पाप रहित होंगे।
1104. उस समय प्रवर्तिनियां चन्द्रलेख के समान, माता-पिता देवताओं के समान, सास माता के समान और ससुर पिता के समान होंगे।
1105. उस समय के लोग धर्म-अधर्म का भेद करनेवाले, विनय, सत्य एवं शौच से संपन्न, गुरु-साधु की पूजा में रत तथा स्वपत्नी में संतुष्ट रहनेवाले होंगे।
1106. उस समय लोग ज्ञान-विज्ञान से युक्त होंगे एवं उनका आचरण धर्मपूर्ण होगा। विद्वान पुरुष पूजे जाएंगे तथा लोग कुल और शील की मर्यादाओं का पालन करेंगे।
1107. इस प्रकार फूलों से लहलहाते जनपदों के क्षेत्र में भगवान विहार करेंगे। इसी प्रकार शेष नौ क्षेत्रों में भी जिनदेव विहार करेंगे। ऐसा जिनवर देव ने कहा है।
1108. इस सभी क्षेत्रों के जिनदेव बहुत सारे केवलियों, मनःपर्यव ज्ञान व अवधि ज्ञान की ऋदिधियों से संपन्न साधुगणों से घिरे हुए विहार करते रहेंगे।
1109. इस प्रकार उस समय काल के प्रभाव से जनपदों की संख्या, समृद्धि के साथ ही राजा नलिन कुमार के श्रेष्ठ राजवंश और उनके सद्भाव की वृद्धि होती जाती है।
1110. कार्तिक कृष्ण पक्ष की अंतिम रात्रि में सभी कर्मजालों को नष्ट कर भगवान पद्म अपर अपापा नगरी से सिद्ध होंगे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

(गा. 1120-27. आगमेस्सुस्सप्पिणीए एरवयखेत्तचउव्वीसइजिणनामाइ)

1120. एत्तो परं तु वोच्छं तित्थगराणं तु नामसंखेवं।  
एरवते आगमिसे सिरसा वंदित्तु कित्ते हं॥
1121. 'सिद्धत्थे 1 पुन्नघोसे 2 य केवली सुयसागरे 3।  
(?पुष्फकेऊ 4) य अरहा समाहिं पडिदिसंतु मे॥
1122. सुमंगले 5 अत्थसिद्धे 6 य नेव्वाणे 7 य महायसे 8।  
धम्मज्झए 9 य अरहा समाहिं पडिदिसंतु मे॥
1123. सिरिचंदे 10 दढकेत्ते(?कित्ती) 11 महाचंदे 12 य केवली।  
दीहपासे 13 य अरहा समाहिं पडिदिसंतु मे॥
1124. सुव्वए 14 य सुपासे 15 य अरहा य सुकोसले 16।  
अणंतपासी 17 य अरहा समाहिं पडिदिसंतु मे॥  
(?पुष्णघोस<sup>2</sup> 18 महाघोसे 19 सव्वाणंदे 20 य केवली।  
सच्चसेणे 21 य अरहा समाहिं पडिदिसंतु मे॥)
1125. विमले 22 उत्तरे चेव अरहा य म(?हाब)ले 23।  
देवाणंदे 24 य अरहा समाहिं पडिदिसंतु मे॥
1126. एते वुत्ता चउव्वीसं एरवतम्मि य केवली।  
आगमेसाए होहिंति धम्मतित्थस्स देसगा॥
1127. एवं एते वुत्ता जिणचंदा य केवली।  
एत्तो परं तु वोच्छं भरहेरवएसु चक्किणो॥

"जंबुद्वीवे एरवए वासे आगमिससाए उस्सप्पिणीए चउव्वीसं तित्थकरा भविस्संति, तं जहा— सुमंगले 1 सिद्धत्थे 2 य गिब्वाणे 3 य महाजसे 4। धम्मज्झए 5 य अरहा आगमेसाण होक्खति॥1॥ सिरिचंदे 6 पुष्फकेऊ 7 य महाचंदे 8 य केवली। सुयसागरे 9 य अरहा आगमेसाण होक्खती॥2॥ सिद्धत्थे 10 पुष्णघोसे 11 य महाघोसे 12 य केवली। सच्चसेणे 13 य अरहा आगमिस्साण होक्खई॥3॥ सूरसेणे 14 य अरहा महासेणे 15 य केवली। सव्वाणंदे 16 य अरहा देवउत्ते 17 य होक्खई॥4॥ सुपासे 3 सुव्वए 19 अरहा अरहे (?हा)य सुकोसले 20। अरहा अणंतविजए 21 आगमिस्सेण वक्खई॥5॥ विमले 22 उत्तरे अरहा अरहा य महाबले 23। देवाणंदे 24 य अरहा गमिस्सेण होक्खई॥6॥ इति समवायांगसूत्रे (आगमोदयसमितिप्रकाशितावृत्तौ पत्रम्

## हिन्दी अनुवाद

(आगामी उत्सर्पिणी काल में ऐरावत क्षेत्र के चौबीस तीर्थकरों के नाम, गाथा 1120-27)

1120. इसके बाद साष्टांग प्रणाम कर मैं आगामी उत्सर्पिणी काल में ऐरावत क्षेत्र में होनेवाले तीर्थकरों का नाम संक्षेप में कहूंगा।
1121. 1. सिद्धार्थ, 2. पुण्यघोष, 3. श्रुतसागर केवली, 4. पुष्पकेतु तीर्थकर मुझे समाधि का मार्ग दिखलाएं।
1122. 5. सुमंगल, 6. अर्थसिद्ध, 7. निर्वाण, 8. महायश, 9. धर्मध्वज अरहंत मुझे धर्म का मार्ग दिखलाएं।
1123. 10. श्रीचन्द्र, 11. दृढ़केतु, 12. महाचन्द्र, 13. दीर्घपार्श्व भगवान मुझे चारित्र को दिखलाएं।
1124. 14. सुव्रत, 15. सुपार्श्व, 16. सुकौशल, 17. अनंतपासी अर्हत् मुझे श्रुतज्ञान दें।  
(18. पूर्णघोष, 19. महाघोष, 20. सर्वानंद, 21. सत्यसेन अर्हत् मुझे धर्म का ज्ञान कराएं।)
1125. 22. विमल तदनन्तर 23. मल्ल अर्हत् तथा 24. देवानंद जिनदेव मुझे समाधि का मार्ग दिखलाएं।
1126. इस प्रकार आगामी उत्सर्पिणी काल में ऐरावत क्षेत्रों में ए चौबीस तीर्थकर धर्मतीर्थ के उपदेशक होंगे।
1127. इस प्रकार यहां तक केवली जिनचन्द्रों का वर्णन किया गया। इसके बाद भरत तथा ऐरावत के चक्रवर्तियों का वर्णन करूंगा।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

(गा. 1128-46. आगमेस्सुस्सप्पिणीए भरहेरवएसु  
चक्कवट्टिनामाइं नवनिहिवण्णणं च)

1128. भरहे 1 य दीहदंते 2 य गूढदंते 3 य सुद्धदंते 4 य ।  
सिरिचंदे 5 सिरिभूमी (ती) 6 सिरिसोमे 7 य सत्तमे ॥
1129. पउमे 8 य महापउमे 9 विमले 10 तह विमलवाहणे 11 चेव ।  
रिट्ठे 12 बारसमे वुत्ते भरहपत्ती आगमेसाए ॥
1130. नवसु वि वासेसेवं बारस बारस य चक्कवट्टी उ ।  
एतेसिं तु निहीओ वोच्छामि समासतो सुणसु ॥
1131. नेसप्प 1 पंडु 2 पिंगल 3 सव्वरयणवर 4 तहा महापउमे 5 ।  
काले 6 य महाकाले 7 माणवगमहानिही 8 संखे 9 ॥
1132. नेसप्पमि निवेसा गामाऽऽगर-नगर-पट्टणाणं तु ।  
दोणमुह-मंडबाणं खंधाराणं गिहाणं च ॥
1133. गणियस्स य उप्पत्ती माणुम्माणस्स जं पमाणं च ।  
धण्णस्स य बीयाण य उप्पत्ती पंडुए भणिया 2 ॥
1134. सव्वा आभरणविही महिलाणं जा य होइ पुरिसाणं ।  
आसाण य हत्थीण य पिंगलगनिहिम्मि सा भणिया 3 ॥
1135. रंयणाणि सव्वरयणे चोददस वि वराइं चक्कवट्टिस्स ।  
उप्पज्जंते इं(ए) गिदियाणि पंचेदियाइं च 4 ॥
1136. वत्थाण य उप्पत्ती निप्पत्ती चेव सव्वभत्तीणं ।  
रंगाण य धोवा(या)ण य सव्वा एसा महापउमे 5 ॥

154) ॥ "इय संपइजिणनाहा एरवए कित्तिया सणामेहिं । अहुणा भाविजिणिंदे नियनामेहिं  
पकित्तेमि ॥ 299 ॥ सिद्धत्थं 1 पुन्नघोसं 2 जमघोसं 3 सायरं 4 सुमंगलयं 5 । सव्वट्ठसिद्ध  
6 निव्वाणसामि 7 वंदामि धम्मधयं 8 ॥ 300 ॥ तह सिद्धसेण 9 महसेणनाह 10 रविमित्त  
11 सव्वसेणजिणे 12 । सिरिचंदं 13 दढकेरुं 14 महिंदयं 15 दीहपासं 16 च ॥ 301 ॥  
सुव्वय 17 सुपासनाहं 18 सुकोसलं 19 जिणवरं अणंतत्थं 20 । विमलं 21 उत्तर 22  
महरिद्धि 23 देवाणदयं 24 वंदे ॥ 302 ॥" इति प्रवचनसारोद्धारे, पत्रम्- 81 ॥

2. समवायांगसूत्रपाठानुसारेणायं श्लोकः स्थानाशून्यार्थे सम्पादकेन परिकल्पितोऽस्ति ॥

1. सिरिउत्ते समवायांगे ॥

2. रिक्ते वा 0 सं 0 ला 0 ॥

## हिन्दी अनुवाद

(आगामी उत्सर्पिणी काल में भरत तथा ऐरावत क्षेत्रों के  
चक्रवर्तियों के नाम तथा उनके नौ निधियों का वर्णन)

- 1128+1129. 1. भरत, 2. दीर्घदंत, 3. गूढदंत, 4. शुद्धदंत, 5. श्रीचन्द्र,  
6. श्रीभूमि, 7. श्रीसोम, 8. पद्म, 9. महापद्म, 10. विमल, 11. विपुलवाहन  
और 12. रिष्ट (बह्मदत्त)—आगामी काल में भरत क्षेत्र के अधिपति  
चक्रवर्ती कहे गये हैं ।
1130. शेष नौ क्षेत्रों में भी बारह-बारह चक्रवर्ती होंगे । इनकी निधियों को  
कहता हूँ । इसे संक्षेप में सुनिये ।
1131. नौ निधियां ये हैं—1. नैसर्प, 2. पांडु, 3. पिंगल, 4. सर्वश्रेष्ठ रत्न,  
5. महापद्म, 6. काल, 7. महाकाल, 8. मानवक महानिधि और 9. शंख ।
1132. नैसर्प में ग्रामों, आकरों, नगरों, मुहल्लों, द्रोणमुखों (जल, थल दोनों  
मार्ग से पहुंचने वाला नगर), मंडपों, सैनिक शिविरों तथा गृहों का  
स्थापन होगा ।
1133. पांडु से गणित की उत्पत्ति, नाप-तौल का प्रमाण एवं धन के मूल की  
उत्पत्ति कही गयी है ।
1134. सभी प्रकार की आभूषण विधि जो, स्त्रियों तथा पुरुषों के लिए  
होगी । घोड़ों-हाथियों की उत्पत्ति तीसरे पिंगल निधि से कही  
गयी है ।
1135. सर्वरत्नवर नामक चौथी निधि से चक्रवर्ती के सर्वश्रेष्ठ चौदह रत्न एवं  
एकेन्द्रिय तथा पंचेन्द्रिय जीव उत्पन्न होंगे ।
1136. वस्त्रों की उत्पत्ति, सभी अधिपति राजाओं का निष्पादन एवं  
रंगों और सभी प्रकार के सफाई कर्म पांचवें महापद्म से निष्पन्न  
होंगे ।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1137. 'काले कालण्णाणं गम्भ (?भव्व) ध(?पु)राणं च तीसु वासेसु।  
सिप्पसयं कम्माण(णि) य तिण्णि पयाए हियकराणि 6 ॥
1138. लोहाण य उप्पतती होइ महाकाले आगराणं च।  
रुप्पस्स सुवण्णस्स य मणि-मोत्ति-सिल-प्पवालस्स 7 ॥
1139. सेणाण य उप्पत्ती आवरणाणं च पहरणाणं च।  
सव्वा य दंडनीती माणवगे रायनीति य 8 ॥
1140. नट्टविहि नाडगविही कव्वस्स चउव्विहस्स उप्पत्ती।  
संखे महानिहिम्मि होइ उ तुडियं च सव्वेसु(तुडियाण सव्वेसि) 9 ॥
1141. चक्कट्टपइट्ठाणा अट्टुस्सेहा य नव य विक्खंभो।  
बारसदीहा मंजूससंठिया जन्हवीए मुहे ॥
1142. वेरुलियमणिकवाडा कणगमया विविहरयणपडिपुण्णा।  
ससि-सूरचक्कलक्खणअणुसमवयणोववततीया ॥
1143. पलितोवमट्ठितीया निहिसरिनामा य तेसु खलु देवा।  
तेसिं ते आवासा मणहरगुणरासिसंपण्ण ॥
1144. एते(य) नव निह(ही)तो पभूयधण-कणग-रयणपडिपुण्णा।  
अणुसमयमणुवयंती चक्कीणं सततकालं पि ॥
1145. आउग-उच्चत्ताइं वण्णा रिद्धी य गइविसेसाइं।  
ओसप्पिणीइमीसे समाइं ता (जा) बंधदत्ताइं (त्तो उ) ॥
1146. एवं एते वुत्ता कित्तीपुरिसा उ चक्किणो सव्वे।  
एत्तो परं तु वोच्छं दसारवंसुभवा जे उ ॥
- (गा. 1147- 55. आगमेस्सुस्सप्पिणीए भरहखेत्ते  
वासुदेव-बलदेव-पडिवासुदेवाणं नामनिरुवणाइ)
1147. नंदी 1 य नंदिमित्ते<sup>3</sup> 2 सुंदरबाहू 3 य तह महाबाहू 4।  
अइबल 5 महबले 6 या भदद 7 दिविट्टू 8 तिविट्टू 9 य ॥

1. गाथेयं प्रवचनसारोद्धारस्य 1124 तमीगाथानुसारेण शोधिता ॥  
2. तेसिं आवासा पुण मणो की 0 ॥  
3. 0त्ते दीहबाहू तहा महा 10 समवायांगे ॥

## हिन्दी अनुवाद

1137. छठे काल निधि से काल का ज्ञान, सौ प्रकार के शिल्पकर्म का ज्ञान,  
गर्म आदि का ज्ञान होगा जो प्रजा के हित में होगा।
1138. सातवें महाकाल निधि से लौह, खान, रुपया, सुवर्ण, मणि, मोती,  
शिला, मूंगा आदि की उत्पत्ति होगी।
1139. आठवें माणवक महानिधि से सेना, वास्तुविद्या, प्रहार विद्या, सभी  
प्रकार की दंडनीति तथा राजनीति की उत्पत्ति होगी।
1140. नौवें शंख महानिधि से नृत्यविधि, नाटक गुण, चार प्रकार के काव्य  
तथा सभी प्रकार के वाद्यों की उत्पत्ति होगी।
1141. चक्र को स्थापित करने के लिए गंगा नदी के अग्रभाग में बारह योजना  
लंबा, नौ योजन चौड़ा और आठ योजन ऊंचा संदूक रखा जाता है।
1142. उस मंजूषा का किवाड़ वैडूर्यमणि, स्वर्ण एवं विविध प्रकार के रत्नों  
से परिपूर्ण होता है। उसमें थोड़े ही समय में चन्द्र-सूर्य के समान  
चक्र उत्पन्न होगा।
1143. उस समय एक पत्न्योपम आयुवाले निधि समान नामवाले, देवता  
होंगे। उनका आवास मनोहर गुणराशि से संपन्न होगा।
1144. ये सब देवगण नविनिधि प्रभूत धन, स्वर्ण, रत्न से परिपूर्ण होंगे। थोड़े  
ही समय में ये सब संतत् काल तक चक्रवर्तियों का अनुसरण करने  
लग जाएंगे।
1145. इस उत्सर्पिणी काल में जब तक ब्रह्मदत्त राजा यानी बारहवें  
चक्रवर्ती, रहेंगे तब तक आयु-ऊंचाई-वर्ण-ऋद्धि और गति विशेष  
रूप से रहेंगे।
1146. इस प्रकार यहां तक सभी चक्रवर्तियों की कीर्ति और पुरुषार्थ को  
कहा गया है। इसके बाद दशार्ह वंश के उद्भव को कहेंगे।  
(आगामी उत्सर्पिणी काल में भरत क्षेत्र के वासुदेवों, बलदेवों,  
प्रतिवासुदेवों का नाम निरूपण, गाथा 1147-55.)
1147. 1. नंदी, 2. नंदीमित्र, 3. सुंदरबाहू, 4. महाबाहू, 5. अतिबल, 6. महाबल,  
7. भद्र, 8. द्विपिष्ठ और 9. त्रिपिष्ठ।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1148. कणहा उ, 'जयंति(तऽ)जिए 1-2 (भद्दे 3) सुप्पभ 4 सुदंसणे 5 चेव।  
आणंदे 6 नंदणे 7 पउमे नाम 8 संकरिसणे 9 चेव।।
1149. एतेसिं तु नवणं पडिसत्तू चेव तत्तिया जाणे।  
गरुयपडिवक्खमहणा तेसिं नामाणिमे सुणऽ।।
1150. तिलए 1 य जंघलोहे (लोहजंघे) 2 य वइरजंघं 3 य केसरी 4 चेव।  
पहराए 5 स(अ)पराजिय 6 भीम 7 महाभीम 8 सुग्गीवे 9।।
1151. एते खलु पडिसत्तू कित्तीपुरिसाण वासुदेवाणं।  
सव्वे य चक्कजोही, सव्वे वि हता सचक्केहिं।।
1152. एवं एते भणिया उअप्पिणीए उ उत्तमा पुरिसा।  
गरुयपरक्कमपयडा सम्मदिदट्ठी चउप्पणं।।
1153. तेसीति लक्ख णव उ तिसहस्सा नव सता य पणनउया।  
मासा सत्तऽद्धऽट्ठमदिणा य धम्मो चउसमाए।।
1154. जाव य पउमजिणिंदो जाव य विजओ वि जिणवरो चरिमो।  
इय सागरोवमाणं कोडाकोडी भवे कालो।।
1155. उअप्पिणीइमीसे दूसमसुसमा उ वन्निया एसा।  
अरगो य गतो तइओ चउत्थमरगं तु वोच्छामि।।
- (गा. 1156- 61. आगमस्सुअप्पिणीए चउत्थस्स  
सुसमदूसमाअरगसस भावा)
1156. पलितोवमलेहद्धं परमाउं होइ तेसि मणुयाणं।  
उक्कोस चउत्थीए पवइढमाणा उ रुक्खादी।।
1157. जह जह वइडइ कालो तह तह वइढंति कप्परुक्खा वि।  
एकं गाउगमुच्चा नर-नारी रुवसेपण्णा।।
1158. मूल-फल-कंद निम्मलनाणाविहइट्ठगंधरसभोई।  
ववगतरोगाऽऽतंका सुरुय सुरदुंदुहित्थणिया।।

1. जयंते 1 विजए 2 भद्दे 3 सुप्पभे 4 य सुदंसणे 5 इति समवायांगे।।  
2. 0सणे य बोधव्वे। आ0 सर्वासु प्रतिष्ठु।।

## हिन्दी अनुवाद

1148. वासुदेवों के नाम हैं—1. कृष्ण, 2. जयंतजीत, 3. भद्र, 4. सुप्रभ,  
5. सुदर्शन, 6. आनंद, 7. नंदन, 8. पद्म तथा 9. संकर्षण।
1149. इसी तहर उस समय उनके नौ प्रतिशत्रु या प्रतिवासुदेव जानें। वे सब  
भयंकर और पराक्रमी प्रतिपक्षी होते हैं। उनके नाम सुनिए।
1150. 1. तिलक, 2. लौहजंघा, 3. वज्रजंघा, 4. केसरी, 5. पहराय,  
6. सपराजित, 7. भीम, 8. महाभीम और 9. सुग्रीव।
1151. कीर्तिपुरुष वासुदेवों के ए सब प्रतिशत्रु होंगे। सभी चक्र से लड़नेवाले  
योद्धा होंगे और सभी अपने ही चक्र से मारे जाएंगे।
1152. इस तरह इस उत्सर्पिणी काल में महनीय पराक्रम प्रकट करनेवाले  
सम्यक्दृष्टि चौबन उत्तम महापुरुष होंगे।
1153. चारों काल में कुल तेरासी लाख सत्ताईस हजार नौ सौ पंचानवे  
(83,27,995) वर्ष सात माह साढ़े आठ दिन धर्म होगा।
1154. जबसे पद्म तीर्थंकर होंगे और जब तक अंतिम विजय तीर्थंकर रहेंगे,  
इस बीच का समय सागरोपम कोडाकोडी का होगा।
1155. यहां इस उत्सर्पिणी काल के दुषमा-सुषमा का वर्णन किया गया।  
अब इस तीसरे आरे के समाप्त होने पर आनेवाले चौथे आरे का  
वर्णन करूंगा।

## (आगामी उत्सर्पिणी के चौथे सुषमा-दुषमा आरा का भाव)

1156. उस समय के मनुष्यों की उत्कृष्ट आयु आधा पल्योपम की होगी।  
चौथे आरे के अंत तक वृक्ष आदि निरंतर वृद्धिमान रहेंगे।
1157. जैसे-जैसे समय बीतेगा, वैसे-वैसे कल्पवृक्ष बढ़ेंगे। उस समय नर-  
नारी रूप से संपन्न तथा एक गाउक यानी दो हजार धनुष ऊंचाई  
के होंगे।

नोट : (तत्कालीन माप विशेष, इसका वर्तमान धनुष से कोई संबंध नहीं समझना चाहिए)

1158. लोग मूल, फल, कंद, नाना प्रकार के निर्मल और अभिष्ट गंध रस  
आदि को खानेवाले होंगे। रोग और आतंक समाप्त होगा तथा यहां  
सुंदर देवदुंदुभी की तरह आवाज वाले लोग होंगे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1159. सच्छंदवणविहारी ते पुरिसा ता य होंति महिलाओ।  
निच्चोउयपुप्फफला ते वि य रुक्खा गुणसमिद्धा॥
1160. कोडाकोडीकालो दो चेव य होंति सागराणं तु।  
सूसमदुसमा एसा उ चउत्थअरगम्मि वक्खाया॥
1161. एत्तो परं तु वोच्छं सुसमाए किंचि एत्थ उददेसं।  
जह होइ मणुय-तिरियाण कप्परुक्खाण वुड्ढी उ॥
- (गा. 1162-69. आगमेस्सुस्सपिणीए पंचमस्स सुसमाअरगस्स  
भावा, कप्परुक्खवण्णणं च)
1162. जह जह वड्ढति कालो तह तह वड्ढति आउ-दीहादी।  
उवभोगो य नराणं तिरियाणं चेव रुक्खेसु॥
1163. मणिगणि 1 दीवसिहा 2 तुडियंगा 3 भिंग 4 कोविण<sup>1</sup> 5 उदुसुहा<sup>2</sup> 6 चेव।  
आमोदा 7 य पमोदा 8 चित्तरसा 9 कप्परुक्खा 10 य॥
1164. वत्थाइं अणिगणेषुं 1, दीवसिहा तह करेति उज्जोयं 2।  
तुडियंगेषु य गेज्जं 3, भिंगेषु य भायणविहीओ 4॥
1165. कोवीणे आभरणं 5, उदूसुहे भोगवन्नगविहीओ 6।  
आमोएसु य व(म)ज्जं 7, मल्लविहीओ पमोएसु 8॥
1166. चित्तरसेसु य इट्ठा नाणाविहसाउभोयणविहीओ 9।  
पेच्छामंडवसरिसा बोधव्वा कप्परुक्खेसु(क्खा उ) 10॥
1167. जह जह वड्ढति कालो तह तह वड्ढति आउ-दीहादी।  
उवभोगो य नराणं तिरियाणं चेव रुक्खेसु॥
1168. दोगाउयमुव्विद्धा ते पुरिसा ता य होंति महिलाओ।  
दोन्नि पलिओवमाइं परमाउं तेसि बोधव्वं॥
1169. एसा उवभोगविही समासतो होइ पंचमे अरगे।  
कोडाकोडी तिन्नि उ, छट्ठं अरगं तु वोच्छामि॥

1. कोवीणा हं० की०॥

2. उदुसहा सं० ला०॥

## हिन्दी अनुवाद

1159. वे मनुष्य तथा स्त्रियां स्वच्छंद वन में विहार करनेवाली होंगी। वृक्ष हमेशा पुष्प और फल से लदे रहेंगे तथा गुणों से पूर्ण होंगे।
1160. इस तरह चौथा सुषमा-दुषमा आरा दो कोडाकोडी सागरोपम काल का होगा, जिसका वर्णन किया गया।
1161. इसके बाद सुषमा काल के कुछ उद्येशक कहूंगा। इसमें मनुष्य-तिर्यच तथा कल्पवृक्षों की वृद्धि होती है।
- (आगामी उत्सर्पिणी काल के पंचम सुषमा आरा का भाव और कल्पवृक्ष का वर्णन, गाथा 1162-69)
1162. जैसे-जैसे समय बीतता है, वैसे-वैसे लोगों की आयु और लंबाई बढ़ती है। कल्पवृक्षों से मिलने वाली मनुष्यों और तिर्यचों के उपभोग की वस्तुएं भी बढ़ती जाएगी।
1163. कल्पवृक्ष हैं, 1. अनिगन या अनग्नक, 2. दीपशिखा, 3. त्रुटितांग, 4. भृंग, 5. कोपीन, 6. उरुसुह, 7. आमोद, 8. प्रमोद, 9. चित्ररस और 10. कल्पवृक्ष।
1164. पहले अनग्नक से वस्त्र प्राप्त होगा, दूसरा दीपशिखा प्रकाश पैदा करेगा। तीसरे त्रुटितांग से गीत तथा चौथे भृंग से विभिन्न प्रकार के गायन प्राप्त होंगे।
1165. पांचवें कोपीन से आभूषण, छठे उरुसुह से भोग वर्णन विधि, सातवें आमोद से मद्य और आठवें प्रमोद से फूलमाला प्राप्त होगी।
1166. नौवें चित्ररस से अभिलषित नाना प्रकार के भक्ष्य, भोज्य पदार्थ प्राप्त होंगे और दसवें कल्पवृक्ष को नाट्यगृह सदृश जानना चाहिए।
1167. जैसे-जैसे समय बीतेगा, लोगों आयु और लंबाई जाएगी। इसके साथ ही कल्पवृक्षों से प्राप्त होनेवाली मनुष्यों और तिर्यचों के उपभोग की वस्तुएं बढ़ती जाएंगी।
1168. उस समय के पुरुष और महिलाएं दो गाउय यानी चार हजार धनुष ऊंचाई के होंगे। उनकी उत्कृष्ट आयु दो पल्योपम जानना चाहिए।
1169. इस प्रकार संक्षेप में पंचम आरे में उपलब्ध उपभोग विधि होगी। यह तीन कोडाकोडी काल का होगा। अब छठे आरे को कहूंगा।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

(गा. 1170-88. आगमेस्सुस्सप्पिणीए छट्ठस्स  
सुसमसुसमाअरगस्स भावा)

1170. सुसमसुसमाए कालो चत्तारि हवन्ति कोडिकोडीओ।  
इय सागरोवमाणं कालपमाणेण नायव्वा ।।
1171. जह जह वड्ढति कालो तह तह वड्ढति आउ-दीहादी।  
उवभोगा य नराणं तिरियाणं चेव रुक्खेसु ।।
1172. सुसमसुसमामणूसा तिन्नेव य गाउयाइं उच्चत्तं।  
तिन्नि पलिओवमाइं परमाउं तेसि होइ बोधव्वं ।।
1173. नयण-मणकंतरूवा भोगुत्तमसव्वलक्खणधरा य।  
सव्वंगसुंदरंगा रत्तुप्पलपत्तकर-चरणा ।।
1174. नग-नगर-मगर-सागर-चककंकुस-वजज-पव्ववरजुत्ता।  
सुपइट्ठियवरचलणा उन्नयतणु तंबनक्खा य ।।
1175. सुसिलिट्ठगूढगुज्जा एणीकुरविंदवततवरजंघा।  
सामुग्गगूढजाणू गयससणसुजायसरिसोरु ।।
1176. वरवारणमततगती सुजायवरतुरयगुज्जदेसा य।  
वरसीहवट्ठितकडी वइरोवमदेसमज्जा य ।।
1177. गंगावत्तपयाहिणरविकिरणविबुद्धकमलसमनाभी।  
रमणिज्जरोमराती झस-विहगसुजातकुच्छीया ।।
1178. संगतपासा सण्णयपासा सुंदरसुजायपासा वि।  
बत्तीसलक्खणधरा उवचितवित्थिण्णवरवत्था ।।

## हिन्दी अनुवाद

(आगामी उत्सर्पिणी काल के छट्ठे आरे सुषमा-सुषमा का  
भाव. गाथा 1170- 88)

1170. सुसमा-सुसमा काल में चार कोडाकोडी समय होता है। इस काल प्रमाण को सागरोपम प्रमाण जानना चाहिए।
1171. जैसे-जैसे समय बीतता है, वैसे-वैसे आयु बढ़ती जाती है। कल्पवृक्षों से प्राप्त होनेवाली मनुष्यों और तिर्यचों के उपभोग की वस्तुएं भी प्रचूर मात्रा में मिलने लगती हैं।
1172. सुसमा-सुसमा आरे में मनुष्यों की ऊंचाई तीन गाउय अर्थात् छह हजार धनुष प्रमाण होती है। उनकी उत्कृष्ट आयु तीन पल्योपम होती है, ऐसा जानना चाहिए।
1173. उस समय के लोग नयन और मन को अति सुंदर लगनेवाले, उत्तम भोग से युक्त, उत्तम लक्षणोंवाले, सर्वांग सुंदर अंग वाले तथा रक्तकमल के समान सुकोमल हाथ-पैरोंवाले (होंगे)।
1174. उनके श्रेष्ठ पर्वत, नगर, मगर, सागर, चक्र, अंकुश, वज्र पर्वत आदि से युक्त सुंदर लक्षणों वाले पैर और उन्नत शरीर और ताम्रवर्ण के नख से युक्त (होंगे)।
1175. उस समय के मनुष्यों के अति संसृष्ट और गूढ घुटने-टखनों आदि के जोड़वाले एणी, कदली तथा कुरुविंद की तरह शोभित श्रेष्ठ जंघा, उभार से रहित श्रेष्ठ संपुटाकार गूढ घुटनों तथा हाथी के सूढ़ सदृश सुजात जांघवाले होंगे।
1176. उनकी चाल श्रेष्ठ मदमत्त हाथी की तरह, गुप्तभाग सुंदर जाति में उत्पन्न श्रेष्ठ घोड़े की तरह होंगे। श्रेष्ठ सिंह सदृश कमर तथा मध्य भाग वज्र के सदृश (होंगे)।
1177. (उस समय के लोग) गंगा के भंवर के सदृश प्रदक्षिणा करती हुई सी और रवि किरणों के प्रकाश पड़ने पर खिले कमल समान नाभि, सुंदर रमणीय रोमावली और मछली-पक्षी की तरह कुक्षिवाले (होंगे)।
1178. वे लोग यथास्थान समुचित रूपेण सुगठित अंदर की ओर झुके हुए पार्श्ववाले, बत्तीस लक्षणों के धारक और समुन्नत विशाल कक्षवाले होंगे।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1179. पुरवरवरफलिहभुया घणथिरसुसिलिट्ठपव्वसंधीया ।  
वरपीवरंगुलितला चउरंगुलिसरिसवग्गीवा ॥
1180. सुविभत्तवित्तमंसू पसत्थसद्दूलविपुलवरहणुया ।  
बिंबोट्ट धवलदंता गोखीरसरिच्छदसणाभा ॥
1181. तवणिज्जरत्तजीहा गरुलाऽऽययउज्जुतुंगनासा य ।  
वरपुंडरीयनयणा आणामियचाववरभुमया ॥
1182. अल्लीणजुत्तसवणा पीणसुमंसलपसत्थसुकवोला ।  
पंचमिचंदनिडाला उड्डवइपडिपुण्णवरवयणा ॥
1183. छत्तुत्तमंगसोहा घणनिचियसुबद्धलक्खणोकिण्णा ।  
कूडागारसुसंठितपयाहिणावत्तवरसिरजा ॥
1184. लक्खणगुणोववेया माणुम्माणपडिपुण्णसव्वंगा ।  
पासाय दरिसणिज्जा अभिरूवा चव ते मणुया ॥
1185. सुपइट्ठियचलणाओ निच्चं पीणुन्नएहिं थणएहिं ।  
ससिसोमदंसणाओ ताणं मणुयाण महिलाओ ॥
1186. एव परिवड्डमाणे लोए चंदे व्व धवलपक्खम्मि ।  
सुसमसुसमाय तइया तिरियाण वि सव्वसोक्खाइं ॥
1187. सम्मं वासति मेहो, होंति य सुरसाइं ओसहिबलाइं ।  
ओसहिबलेण आऊ वड्डइ मणुयाण तिरियाणं ॥
1188. उस्सप्पिणीइमीसे छट्ठो अरगो उ वन्निओ एसो ।  
रायगिहे गुणसिलए गोयममादीण समणाणं ॥

## हिन्दी अनुवाद

1179. श्रेष्ठ नगर के विशाल द्वार की अर्गला के समान उस समय लोगों की भुजाएं, प्रगाढ़ और दृढ़तापूर्वक बंधे हुए शारीरिक संधियां, मांसल होने से उभरी हुई हथेली तथा शंख के समान गर्दन चार अंगुल लंबी होंगी ।
1180. उनके दाढ़ी-मुंछें सलीके से सजे और वर्तुलाकार, बाघ की टुड्डी के समान मजबूत टुड्डी, बिंब के समान लाल ओष्ठपुटों तथा गाय के दूध के सदृश दांतों की आभा होगी ।
1181. आग में लाल हुए स्वर्ण के समान जीभ, गरूड़ की तरह उत्तुंग लंबी और ऋजु नाक, श्रेष्ठ कमल की तरह आंखें तथा थोड़े से झुके धनुष की तरह सुंदर भौंहें होंगी ।
1182. उन लोगों के न ज्यादा चिपके और न ही ज्यादा उभरे हुए कान, पुष्ट-मांसल प्रशस्त और सुंदर गाल, पंचमी के चंद्रमा सदृश ललाट और पूर्णिमा की चंद्रमा की शोभा से परिपूर्ण सुंदर मुख होंगे ।
1183. उनके सिर अत्यन्त उत्कृष्ट लक्षणों से उत्कीर्ण तथा सुंदर रूप से बद्ध छत्र के समान शोभित होगा तथा उनके सिर के बाल पर्वत के उच्चतम शिखर पर स्थित काले बादलों के समान घने और संवरे हुए काले व घुंघराले होंगे ।
1184. उस समय के लोग, सभी शुभ लक्षणों और गुणों से युक्त, माण-उम्माण से परिपूर्ण अंगोवाले तथा प्रासाद के सामन दर्शनीय व सुंदर होंगे ।
1185. उस समय के पुरुषों की स्त्रियां सुंदर गौरवपूर्ण चालवाली, हमेशा उन्नत तथा पुष्ट स्तनों के भार से थोड़ी झुकी हुई तथा देखने में चंद्रमा के समान सौम्य होंगी ।
1186. इस प्रकार लोग सुषमा-सुषमा काल में शुक्ल पक्ष के चंद्रमा की भांति वृद्धिमान होंगे । उस समय तिर्यचों को भी सभी सुख प्राप्त होंगे ।
1187. उस समय मेघ सम्यक् रूप से बरसेंगे । औषधियां रसयुक्त व गुणों से युक्त होंगी । उन औषधियों के प्रभाव से मनुष्यों और तिर्यचों की आयु बढ़ती रहेगी ।
1188. इस प्रकार भगवान महावीर ने राजगृह के गुणशील चैत्य में गौतम आदि शिष्यों को इस उत्सर्पिणी के छठवें आरे का वर्णन इसी प्रकार से किया था ।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

(गा. 1189- 1225. उवसंहारो विविहो घम्मोवएसो य)

1189. ओसप्पिणि छब्भेया एवं उस्सप्पिणी वि छब्भेया।  
एवं बारस अरगा निदिदट्ठा वद्धमाणेणं ॥
1190. एयं तित्थोगालिं जिणवरवीरेण भासियमुदारं।  
रायगिहे गुणसिलए परमरहस्सं सुयमणग्घं ॥
1191. मिच्छत्तमोहियाणं सदधम्मपरम्मुहाण जीवाणं।  
सियवायबाहिराणं तह कुस्सुइपुण्णकण्णाणं ॥
1192. परपरिवायरयाणं कुल-गण-संघस्स'ऽनिव्वुइरताणं।  
चारित्तदुब्बलाणं मा हु कहिज्जा हु<sup>2</sup> जीवाणं ॥
1193. जड्डाणं चड्डाणं निव्विण्णाणेण निव्विसेसाणं।  
संसारसूयराणं कहियं पि निरत्थयं होइ ॥
1194. एयस्सिं पडिवक्खो जे जीवा पयइभद्दग विणीया।  
पगईए मउयचित्ता तेसिं तु पुणो कहिज्जा हि ॥
1195. सोऊण महत्थमिणं निस्संदं मोक्खमग्गसुत्तस्स।  
..... यत्ता मिच्छत्तपरम्मुहा होइ ॥
1196. तद्धूण य सम्मत्तं नाणं च चरित्तमुत्तसं तुभे।  
पुव्वपुरिसाणुचिण्णं मग्गं निव्वाणगमणस्स ॥
1197. तह तह करेह सिग्घं जह जह मुच्चह कसायजालेण।  
किसलयदलग्गसंठियजललव इव चंचलं जीयं ॥
1198. धण्णाणं खु कसाया जगडिज्जंता वि अन्नमन्नेहिं।  
नेच्छंति समुट्ठेउं सुविणिट्ठो पंगुलो चेव ॥

1. 0संघस्स तिव्वइरताणं सं0 । 0संयनिव्वइरताणं हं0 । 0संघनिव्वइरताणं की0 ॥  
2. हि ला0 ॥

## हिन्दी अनुवाद

(उपसंहार और विविध धर्मोपदेश, गाथा 1189-1225)

1189. जैसे अवसर्पिणी के छह भेद हैं, उसी प्रकार उत्सर्पिणी के छह भेद-इस प्रकार वर्द्धमान महावीर द्वारा कुल बारह आरे निर्दिष्ट किये गये हैं।
1190. जिनेश्वर महावीर ने राजगृह के गुणशील चैत्य में परम रहस्य से युक्त, हर्षोत्पादक तथा अमूल्य इस तित्थोगाली को सरल रूप में कहा।
- 1191+1192. इस वर्णन को मिथ्यात्वी, मोहित, सद्धर्म से विमुख जीवों, स्याद्वाद से दूर रहनेवालों, जिनके कान कुश्रुतियों से पूर्ण हैं, ऐसे लोगों, अन्य मत के साधुओं, कुल-गण और संघ के प्रति शंकालुओं तथा दुर्बल चरित्रवाले जीवों को नहीं कहना चाहिए।
1193. संसार के जड़, खुशामदी, खिन्न, संसार रूपी कीचड़ में पड़े रहनेवाले शूकर रूपी मनुष्यों तथा दुर्जनों के लिए इसका कथन किये जाने पर भी वह निरर्थक होगा।
1194. इसके विपरीत जो जीव स्वभाव से सज्जन, विनीत तथा मृदु चित्त-स्वभाव वाले हैं, उन्हें ही इसका उपदेश देना चाहिए।
1195. महान् अर्थवाले इस श्रुत का उपदेश सुनकर मोक्ष मार्ग निष्पादित होता है (रास्ता खुल जाता है)। एवं मिथ्यात्व विमुख होते हैं।
- 1196+1197. पूर्व में हुए तीर्थंकर पुरुषों द्वारा आचरित मार्ग मोक्ष प्राप्ति का मार्ग है। इसमें जो व्यक्ति लग जाते हैं, वे सम्यक्तव ज्ञान और उत्तम चरित्र को प्राप्त कर लेते हैं। हे मनुष्यों! तुम भी शीघ्रतापूर्वक वह काम करो जिन-जिन कार्यों से कषाय जाल से मुक्त हो सको। जीवन कमल के पत्ते के अग्रभाग पर स्थित जल की बूंद की तरह चंचल यानि क्षणिक है।
1198. परस्पर संबद्ध कषाय परस्पर एक-दूसरे द्वारा जगाये जाने पर भी भाग्यवान प्राणियों में जागृत नहीं होते हैं। उनमें वे कषाय पंगु व्यक्ति की तरह उठने की यानी जाग्रत होने की इच्छा नहीं करते।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1199. उवसामपुव्वणीया (?) गुणमहिया<sup>1</sup> जिणचरित्तसरिसं पि।  
पडियाएति<sup>2</sup> कसाया, किं पुण सेसे सरागत्ये ?।।
1200. सामणमणुचरंतस्स कसाया जस्स उक्कडा होंति।  
मन्नामि उच्छुपुप्फं व निप्फलं तस्स सामइयं।।
1201. जं अज्जियं चरित्तं देसूणाए (वि) पुव्वकोडीए।  
तं पि कसाइयमित्तो नासेइ नरो मुहुत्तेणं।।
1202. उवसमेण हणे कोहं, माणं मददवया जिणे।  
मायं चऽज्जवभावेण, लोभं संतुट्ठिए जिणे।।
1203. जह जह दोसोवरमो, जह जह विसएसु होइवेरगं।  
तह नायव्वं<sup>3</sup> तं खलु आसन्नं मे पदं परमं।।
1204. दुग्ग(ग्गे) भवकंतारे<sup>4</sup> भममाणेहि सुइरं पणट्ठेहिं।  
दुलभो जिणोवइट्ठो सोगइमग्गो इमो लद्धो<sup>5</sup>।।
1205. इणमो सुगतिगतिपहो सुदेसिओ उज्जुओ जिणवरेहिं।  
ते धन्नो जे एयं पहमणवज्जस्स मोतिण्णा।।
1206. जाहे य पावियव्वं इह परलोगे य होइ कल्लाणं।  
ताहे जिणवरभणियं पडिवज्जइ भावतो धम्मं।।
1207. खंती य मददवऽज्जव सुत्ती तव संजमे य बोधव्वे।  
सच्चं सोयं<sup>6</sup> आकिंचणं च बंभं च जइधम्मो।।

1. 0महया की0 विना।। 2. एति हं0 की0।। 3. नाइव्वं हं0 की0।।  
4. 0कंतारं हं0 की0।। 5. लुद्धो हं0 बिना।। 6. आकिंचणं हं. ला0।।

## हिन्दी अनुवाद

1199. गुणों की महत्ता में वीतराग जिनों के जैसे चरित्र वाले उपशमित यानि चतुर्दश पूर्वधरों को भी कषाय नीचे की ओर गिरा देता है। ऐसे में सराग लोगों में ऐसा हो जाए तो क्या आश्चर्य ?
1200. श्रामण्य का अनुपालन करते हुए जिनका कषाय तीव्र हो जाता है, उनके श्रामण्य को या सामायिक को मैं इक्षुपुष्प की तरह निष्फल मानता हूँ।
1201. यदि किसी मनुष्य ने एक करोड़ पूर्व तक श्रमण धर्म का पालन कर चारित्र धर्म अर्जित किया है, उसे केवल एक कषाय के मन में उत्पन्न होने से भी एक क्षण में उस सम्पूर्ण अर्जित चारित्र धर्म का नाश हो जाता है।
1202. व्यक्ति को चाहिए कि वह उपसम यानि शांति से क्रोध को, मार्दव यानि कोमलता से मान को, आर्जव या सरल भाव से माया को तथा संतोष से लोभ को जीते।
1203. जैसे-जैसे दोष विरत होते हैं तथा जैसे-जैसे विषयों के प्रति वैराग्य होता जाता है, वैसे-वैसे उस परम पद यानी सिद्धत्व या मोक्ष को अति निकट जानना चाहिए।
1204. इस दुर्गम संसार रूपी अटवी में जन्म-मरण के चक्कर में भ्रमण करते हुए, चिरकाल से भटके और नष्ट हुए हमने जिन द्वारा प्रतिपादित यह दुर्लभ मार्ग पाया है।
1205. इस सुंदर मोक्ष को प्राप्त करने का मार्ग जिनवरों ने सरल रूप में दिखलाया है। वे लोग धन्य हैं जो इन पापों का त्याग कर मुक्ति क इस मार्ग पर अग्रसर हुए हैं।
1206. इहलोक तथा परलोक में कल्याण प्राप्त करना चाहते हो तो उस धर्म भावना को ग्रहण करो, जिसे जिनवरों ने प्ररूपित किया है।
1207. क्षमा, मार्दव, आर्जव, त्याग, तप, संयम, सत्य, शौच, आकिंचन्य तथा ब्रह्मचर्य को यति धर्म जानना चाहिए।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1208. जो समो सव्वभूतेसु तसेसु धावरेसु य।  
धम्मो दसविहो तस्स इति केवलिभासितं ।।
1209. जो दसविहं पि धम्मं सददहती सत्ततत्तसंजुत्तं।  
सो होइ सम्मदिट्ठी संकादीदोसरहितो य ।।
1210. सम्मददंसणमूलं दुविहं 'धम्मं' (? च सो) समासत्तो।  
जेट्ठं च समणधम्मं, सावगधम्मं च अणुजेट्ठं ।।
1211. जा जिणवरदिट्ठाणं भावाणं सददहणया सम्मं(?)।  
अत्तणओ बुद्धीय य सोऊण य बुद्धिमंताणं ।।
1212. मिच्छाविगप्पिएसु य अत्थेसु कुसासणोवइट्ठेसु।  
'एतं एव' मिति रुई सुद्धं तं होइ सम्मत्तं ।।
1213. एगंतो मिच्छत्तं, जिणाण आणा य होइ गेगंतो।  
एगं पि असददहओ मिच्छदिट्ठी जमालि व्व ।।
1214. जिणसासणभत्तिगतो वरतरमिह सीलविप्पहूणो वि।  
न य नियमपरो वि जणो जिणसासणबाहिरमतीओ ।।
1215. जह निम्मले पडे पंडरम्मि सोभा विणा वि रागेण।  
सुंदररागे वि कए सुंदरतरिया हवइ सोभा ।।
1216. एवमिह निम्मले दरिणम्मि सोभा विणा वि सीलेणं।  
सीलसहायम्मि उ दरिसणम्मि अहिया हवइ सोभा ।।
1217. भट्ठेण चरित्तओ सट्ठुतरं दंसणं गहेयव्वं।  
सिज्झंति चरणहीणा, दंसणहीणा न सिज्झंति ।।

1. धम्मं समासत्तो उ। जेट्ठं सर्वासु प्रतिषु ।।

## हिन्दी अनुवाद

1208. जो त्रस, स्थावर और अन्य सभी जीवों के प्रति समभाव रखते हैं,  
उन्हीं के लिए इन दस प्रकार के धर्म का प्रतिपादन केवलियों ने  
किया है।
1209. जो सात तत्त्वों से संयुक्त दस धर्मों में श्रद्धान करके हैं, वह शंका  
आदि दोषों से रहित होकर सम्यक दृष्टि को प्राप्त होते हैं।
1210. संक्षेप में सम्यक दर्शन आधारित धर्म दो प्रकार का होता है— इसमें  
ज्येष्ठ श्रमण धर्म है तथा कनिष्ठ श्रावक धर्म।
1211. या तो जिनवरों द्वारा उपदिष्ट धर्म पर सम्यक् श्रद्धान करने से  
सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है या तत्त्वदर्शी ज्ञानियों से सुनकर होती  
है। या फिर स्वयं में तत्त्व चिंतन द्वारा सम्यक्त्व प्राप्त किया जा  
सकता है।
1212. जो कुछ भी मिथ्यात्ववादियों द्वारा उपदिष्ट सिद्धांतों में है, वह वैसा  
ही नहीं है, इस प्रकार की रुचि होने पर शुद्ध सम्यक्त्व प्राप्त होता है।
1213. एकान्त में मिथ्यात्व है। जिनेश्वरों की आज्ञा अनेकांत की है।  
जिनेश्वर द्वारा प्ररूपित सिद्धांतों में से यदि कोई व्यक्ति किसी एक  
तथ्य पर भी अश्रद्धान करता है तो वह जामाली के समान मिथ्यात्वी  
होता है।
1214. जिन शासन के प्रति भक्ति रखनेवाला व्यक्ति चाहे श्रेष्ठ शील से  
रहित हो अथवा नियमों से परे यानी नियमों का पालन न करनेवाला  
हो, तो भी वह जिनशासन से बाहर मति वाला नहीं हो सकता है।
- 1215+1216. जिस प्रकार निर्मल श्वेत वस्त्र की शोभा बिना रंग के भी होती  
है और सुंदर रंग से रंगने पर उसकी शोभा और बढ़ जाती है, उसी  
प्रकार निर्मल दर्शन की शोभा बिना शील के भी होती है एवं उसमें  
शीलता आ जाने पर उस दर्शन की शोभा और अधिक बढ़ जाती है।
1217. भ्रष्ट चरित्र वालों से भी सम्यक दर्शन को ग्रहण करना चाहिए।  
चरित्रहीन तो सिद्ध हो जाता है पर दर्शन से हीन सिद्ध नहीं हो  
सकता है।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1218. एत्तिय य संका कंखा वितिगिच्छा अन्नदिट्ठियपसंसा।  
परतित्थिओवसेवा पंच (उ) हासेति सम्मत्तं।।
1219. संकादिदोसरहितं जिणसाणकुसलयादिगुण (? जुत्तं)।  
एयं तं जं भणितं मूलं दुविहस्स धम्मस्स।।
1220. जिणसासणे कुसलता 1 पभावणा 2 सयतणसेवणा 3 थिरता 4।  
भत्ती 5 य गुणा सम्मत्तदीवगा उत्तमा पंच।।
1221. सव्वन्नू सव्वदरिसी य वीयरागा य जं जिणा।  
तम्हा जिणवरवयणं अवितहमिति भावतो मुणह।।
1222. सम्मत्ताओ नाणं सियवायसमन्नियं महाविसमं।  
भावाभावाविभावं दुवालसंगं पि गणिपिडगं।।
1223. जं अन्नाणी कम्मं खवेइ बहुयाहि वासकोडीहिं।  
तं नाणी तिहि गुत्तो खवेइ ऊसासमेत्तेणं।।
1224. नाणाहितो चरणं पंचहिं समितीहिं तीहिं गुत्तीहिं।  
एयं सीलं भणितं जिणेहिं तेलोक्कदंसीहिं।।
1225. सीले दोन्नि वि नियमा' सम्मत्तं तह य होइ नाणं च।  
तिण्हं पि समाओगे मोक्खो जिणसासणे भणितो।।

### (गा. 1226-57. वित्थरओ सिद्धसरुव)

1226. असरीरा जीवघणा उवउत्ता दंसणे य नाणे य।  
सागारमणागारं लक्खणमेयं तु सिद्धाणं।।
1227. सव्वट्ठविमाणाओ सव्वुरिल्लाओ थूभिय (ऽग्गाओ)।  
बारसहिं जोयणहिं ईसीपभारपुढवी उ।।
1228. विम्मलदगरयवन्ना तुसार-गोखीर-हारसरिवन्ना।  
भणिया उ जिणवरेहिं उत्ताणगच्छत्तसंठाणा।।

## हिन्दी अनुवाद

1218. यहां (ध्यान रखने की बात है कि) शंका, कांक्षा, संशय, अन्यमत की प्रशंसा एवं अन्य तीर्थियों का उपदेश—ये पांच सम्यक्तव का ह्रास करते हैं।
1219. शंका आदि दोषों से रहित होना तथा जिन शासन में पुण्य आदि गुणों से युक्त होना—दोनों प्रकार के धर्म के ये ही दो मूल कहे गये हैं।
1220. जिन शासन में 1. कुशलता, 2. प्रभावना, 3. मोक्ष की पर्युपासना, 4. स्थिरता एवं 5. भक्ति—ये पांच उत्तम गुण सम्यक्तव के द्वीप रूपी हैं।
1221. जो सर्वज्ञ, सर्वद्रष्टा और वीतराग तीर्थंकर हैं, उन जिनों के वचन शाश्वत होते हैं, इस आस्था को दृढतापूर्वक मानना चाहिए।
1222. सम्यक्तव से स्याद्वाद सहित भाव, अभाव और विभाव तथा बारह गणिपिटकों का अति गहन ज्ञान प्राप्त होता है।
1223. जिन कर्मों का क्षय अज्ञानी करोड़ों वर्षों के कठोर परिश्रम से कर पाते हैं, ज्ञानी उसे तीन गुप्ति द्वारा उच्छवास मात्र में नष्ट कर देते हैं।
1224. ज्ञान से पांच समिति, तीन गुप्ति और चारित्र की उपलब्धि होती है, इसे त्रिलोकदर्शी जिनों के द्वारा 'शील' कहा गया है।
1225. नियम से शील में ज्ञान तथा सम्यक्तव दोनों आते हैं। इन तीनों के समायोग पर ही जिनशासन में मोक्ष की प्राप्ति बतायी गयी है।

### (विस्तृत रूप से सिद्ध स्वरूप का वर्णन. गाथा 1226- 57)

1226. अशरीरी, जीवन से मुक्त, दर्शन और ज्ञान में अप्रमत्त, सागारी और अनागार— सिद्धों के ये स्वरूप या लक्षण हैं।
1227. सर्वार्थ सिद्धि विमान से बारह योजन ऊंची लोक के सबसे ऊपरी शिखर यानि लोक के अग्रभाग पर ईषत् प्राग्भारा नामक पृथ्वी है, जो छत्राकार में संस्थित है।
1228. जिनवरों ने इस क्षेत्र यानि सिद्ध शिला को निर्मल जलबिन्दु, हिम, गाय के दूध की धार के समान वर्णवाली और औंधे छत्र के समान संस्थान वाली कहा गया है।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1229. ईसीपम्भाराए सीयाए जोयणम्मि लोगंतो।  
बारसहिं जोयणेहिं सिद्धी सब्दठसिद्धाओ॥
1230. पणयालीसं आयाम-विथडा होइ सतसहस्साइं।  
तं पि तिगुणं विसेसं परीरओ होइ बोधव्वो॥
1231. एगा जोयणकोडी बायालीसं च सयसहस्साइं।  
तीसं च सहस्साइं दो य सया अउणवीसा(णपण्णा) उ॥
1232. खेत्तसमयविथिन्ना अट्ठेव य जोयणाइं बाहल्लं।  
परिहायइ चरिमंते मच्छियपत्ताओ तणुययरी॥
1233. गंतूण जोयणं तु परिहाइ अंगुलपहु (? पुह)त्तं।  
संखतलसन्निगासा पेरंता होति पतणू सा॥
1234. अज्जुणसुवन्नगमयी नामेण सुदंसणा पमा सा य।  
संखतलसन्निगासा छत्तागारा य सा पुढवी॥
1235. ईसीपम्भाराए उवरिं खलु जोयणस्स जो कोसो।  
कोसस्स य छम्भाए सिद्धाणोगाहणा भणिया॥
1236. कहिं पडिहया सिद्धा? कहिं सिद्धा पइट्ठिया ?।  
कहिं बोदी चइत्ताणं कत्थ गंतूण सिज्झई ?॥
1237. अलोए पडिहया सिद्धा, लोयग्गे य पइट्ठिया।  
इहं बोदी चइत्ताणं तत्थ गंतूण सिज्झई॥
1238. दीहं वा हस्सं वा ज संठाणं तु आसि पुब्बभवे।  
तत्तो तिभागहीणा सिद्धाणोगाहणा भणिया॥
1239. जं संठाणं तु इहं भवं चयंतस्स चरिमसमयम्मि।  
आसी य पएसघणं तं संठाणं तहिं तस्स॥

## हिन्दी अनुवाद

1229. ईषत् प्राग्भारा नामक पृथ्वी से एक योजन ऊपर लोकान्त है। यह सिद्ध भूमि सर्वार्थसिद्धि विमान के 12 योजन ऊपर स्थित बताई गई है।
1230. पैंतालीस लाख योजन विस्तृत इसकी लंबाई है तथा इसके तिगुने से भी अधिक इसकी परिधि है। ऐसा जानना चाहिए।
- 1231+1232. इस पृथ्वी का एक करोड़ बयालीस लाख तीस हजार दो सौ उन्नीस योजन विस्तृत क्षेत्रफल है तथा बीच में आठ योजन मोटी ऊंचाई है। बीच के चारों ओर धीरे-धीरे यह पतली होती जाती है और अंतिम छोर पर चारों ओर यह मक्खी के पंख से भी पतली है।
1233. एक-एक योजन दूर जाने पर यह शंख जैसी वर्णवाली पृथ्वी अंगुल प्रमाण भर क्षीण होती रहती है। इस तरह यह अंतिम छोर पर चारों ओर बहुत ही पतली है।
1234. अर्जुन स्वर्णमयी सुदर्शन प्रभा नामकी वह पृथ्वी शंख और रूई के समान वर्णवाली है और औंधा किये हुए छत्र के आकार की है।
1235. ईषत् प्राग्भारा पृथ्वी पर योजन भर का एक कोस है। उसमें से एक कोस के छठवें भाग में सिद्धों की अवगाहना कही गयी है।
1236. सिद्धगण कहां प्रतिहत होते हैं अर्थात् कहां पर जाकर उनकी गति रुक जाती है? वे कहां प्रतिष्ठित होते हैं? कहां शरीर त्याग करते हैं? और कहां जाकर सिद्ध होते हैं?
1237. अलोक (जीव-पुद्गल रहित आकाश) में सिद्धगण प्रतिहत होते हैं, लोकाग्र में अवस्थित होते हैं। यहां देहत्याग कर वहां जाकर सिद्ध होते हैं।
1238. पूर्वभव में (जिस मनुष्य शरीर से सिद्ध प्राप्त हो) दीर्घ या लघु, जो भी शरीर का आकार रहा हो, उसके तीन भाग कम यानि एक तिहाई बराबर सिद्धात्मा की अवस्थिति कही गयी है।
1239. जो जिस अवस्था में इस भव में शरीर त्याग के समय में रहता है, उसी संस्थान में वहां सिद्धत्व अवस्था में उनका निविड़ प्रदेश यानी, सिद्ध आत्मा रहती है।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1240. उत्ताणओ व्व पासेल्लओ व्व ठियओ निसन्नओ चव ।  
जो जह करेइ कालं सो तह उववज्जए सिद्धो ॥
1241. तिन्नि सता तेवीसा धणुत्तिभागो य होइ बोधव्वो ।  
एसा खलु सिद्धाणं उक्कोसोगाहणा भणिता ॥
1242. चत्तारि य रयणीओ रयणितिभागूणिया य बोधव्वा ।  
एसा खलु सिद्धाणं मज्झिमओगाहणा भणिया ॥
1243. एगा य होइ रयणी अट्ठेव य अंगुलाइं साहीया ।  
एसा खलु सिद्धाणं जहन्नओगाहणा भणिया ॥
1244. जत्थ य एगो सिद्धो तत्थ अणंता भवक्खयविमुक्का ।  
अन्नोन्नसमोगाढा पुट्ठा सव्वे य लोगंते ॥
1245. फुसइ अणंते सिद्धे सव्वपदेसेहिं नियमसो सिद्धो ।  
ते वि असंखेज्जगुणा देस—पदेसेहिं जे पुट्ठा ॥
1246. केवलनाणुवउत्ता जाणंती सव्वभावगुणभावे ।  
पासंति सव्वओ खलु केवलदिट्ठीअ(हS)णंताहिं ॥
1247. न वि अत्थि माणुसाणं ते सोक्खं न वि य सव्वदेवाणं ।  
जं सिद्धाणं सोक्खं अब्बाबाहं उवगयाणं ॥
1248. सुरगणसुहं समत्तं<sup>1</sup> सव्वद्धापिडितं अणंतगुणं ।  
न वि पावइ मुत्तिसुहं णंताहिं वि वग्गवग्गूहिं ॥
1249. सिद्धस्स सुहो रासी सव्वद्धापिडिओ जइ हवेज्जा ।  
सोऽणंतभागभइओ सव्वागासे न माएज्जा ॥
1250. जह नाम कोइ मेच्छो नगरगुणे बहुविहे विजाणंतो ।  
न चएइ परिकहेउं उवमाए तहिं असंतीए ॥

1. समग्गं लो ॥

## हिन्दी अनुवाद

1240. चित्त, करवट लेटे, खड़ा या बैठे—अंतिम काल में जो जिस अवस्था में रहते हैं, उनकी आत्मा उसी तरह सिद्धत्व अवस्था में भी रहती है।
1241. तीन सौ तेईस पूरा तथा एक धनुष का एक तिहाई प्रमाण सिद्धों की उत्कृष्ट अवगाहना कही गयी है। ऐसा जानना चाहिए।
1242. एक तिहाई मुंड हाथ कम चार मुंड हाथ सिद्धों की मध्यम अवगाहना कही गयी है। ऐसा जानना चाहिए।
1243. एक मुंड हाथ आठ अंगुल प्रमाण सिद्धों की जघन्य यानि न्यूनतम अवगाहना कही गयी है।
1244. जैसे उस लोक में एक सिद्ध हैं, वैसे भव चक्र को नष्ट कर मुक्त हुए अनन्त सिद्ध जीव हैं। वे सब परस्पर एक—दूसरे से सम्यक रूप से उपचित होकर अर्थात् समवगाढ होकर लोकांत में स्थित हैं।
1245. नियमतः सिद्ध अपने पूरे आत्म प्रदेशों से अनन्त सिद्धों का स्पर्श करते हैं। उससे भी असंख्य गुणा ऐसे सिद्ध हैं जो एक सिद्ध के कुछ प्रदेश को ही स्पर्श करते हैं।
1246. केवल ज्ञान युक्त वे लोकालोक के त्रिकालवर्ती गुणभाव तथा सद्भाव को जानते हैं। केवल अनंत केवल दृष्टि से वे सब कुछ देखने में समर्थ हैं।
1247. जितना अव्याबाध सुख सिद्धों को प्राप्त होता है, वह सुख न मनुष्यों को और न ही देवताओं को प्राप्त होता है।
1248. मोक्ष सुख के वर्गमूल के वर्गमूल जितने सुख की भी बराबरी सुरगणों को सभी कालों में प्राप्त सुखों का अनन्त गुणा सुख भी नहीं कर सकता।
1249. सिद्धों को प्राप्त सभी कालों की समस्त सुखराशि को एकत्र किया जाए तो उसका अनन्त भाग में बंटे सुख का एक हिस्सा भी संपूर्ण आकाश में नहीं समा पाएगा।
1250. जैसे कोई म्लेच्छ नगर के बहुविध गुणों को जानते हुए भी अपने म्लेच्छ देश जाने पर वहां के गुणों की उपमा अपने देश में न होने के कारण उसे व्यक्त करने में असमर्थ होता है।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1251. इय सिद्धाणं सोक्खं अणोवमं, नत्थि तस्स ओवम्मं ।  
किंचिविसेसेणेत्तो सारिक्खमिणं सुणह वोच्छं ॥
1252. जह सब्बकामगुणितं पुरिसो भोत्तूण भोयणं कोई<sup>1</sup> ।  
तण्हा-छुहाविमुक्को अच्छेज्ज जहा<sup>2</sup> अमयतित्तो ॥
1253. इय निच्चकालतित्ता अतुलं नेव्वाणमुवगता सिद्धा ।  
सासय<sup>3</sup>मव्वाबाहं चिट्ठंति सुही सुहं पत्ता ॥
1254. तत्थ वि य ते अभे(वे)दा अवेयणा निम्ममा निसंगा य ।  
संजोगविप्पमुक्का अपएसा निच्च एगसंठाणा ॥
1255. नित्थिण्णसव्वदुक्खा जाइ-जरा-मरणबंधणविमुक्का ।  
अव्वाबाहं सोक्खं अणुहौती सासयं सिद्धा ॥
1256. एसा य पयसहस्सेण वन्निया समण<sup>4</sup>गंधहत्थीणं ।  
पुट्ठेण उ रायगिहे तित्थोगाली उ वीरेणं ॥
1257. सोउं तित्थोगालिं जिणवरवसहस्स वद्धमाणस्स ।  
पणमह सुगइगताणं सिद्धाणं निट्ठित्तत्ताणं ॥

(गा. 1258-61. अंतिममंगलाइ)

1258. भद्दं सब्बजगुज्जोयगस्स भद्दं जिणस्स वीरस्स ।  
भद्दं सुरासुरनमांसितस्स भद्दं धुयरयस्स ॥
1259. <sup>5</sup>गुणभवणगहण! सुतरयणभरित! दंसणविसुद्धरच्छागा! ।  
संघनगर! भद्दं ते अक्खंडचरित्तापागारा ! ॥

1. 'कोई' स्थाने सर्वासु प्रतिषु 'कुणइ' इति पाठोऽस्ति ।  
2. अमियो हं० की० ॥  
3. ०यनिव्वा० हं० की० ॥  
4. ० णसंघभत्तीणं ला० ॥  
5. गुणगहणभवण! सर्वासु प्रतिषु ॥

## हिन्दी अनुवाद

1251. वैसे ही सिद्धों के सुख अनुपम हैं। इसे बताने के लिए इसके तुल्य कोई दूसरी उपमा नहीं है। अब सिद्धों के कुछ सादृश्य यानि इसी से मिलती-जुलती कुछ विशेषताओं को कहता हूँ। उसे सुनो।
1252. जैसे व्यक्ति सर्व कामनाओं और गुणों से युक्त अत्यन्त स्वादिष्ट भोजन कर भूख और तृष्णा से रहित होकर पूर्णतः तृप्तावस्था में बैठता है।
1253. उसी प्रकार निर्वाण को प्राप्त सिद्ध नित्यकाल तृप्त हैं। वे सिद्ध अतुलनीय, अनुपम निर्वाण स्थान को पहुंचकर सुखपूर्वक शाश्वत शिव सुख को प्राप्त करते हैं।
1254. वहां वे अभेद्य, अवेदित, निर्मम, निसंग, संयोग-वियोग से मुक्त, अप्रदेशी तथा शाश्वत रूप से एक स्थान में अवस्थित होते हैं।
1255. सभी दुखों को पार करनेवाले, जन्म-वृद्धावस्था-मृत्यु से मुक्त वे सिद्ध शाश्वत सुख का अनुभव प्राप्त कर रहे हैं।
1256. इस प्रकार उत्तम गंधहाथियों के भक्ति भाव वाले गणधरों के पूछने पर भगवान महावीर के द्वारा राजगृह के गुणशील चैत्य में एक लाख पदों में तित्थोगाली का वर्णन किया गया।
1257. हे लोगों, जिनों में वृषभ समान भगवान महावीर द्वारा तीर्थ के प्रवाह को सुनकर निर्दिष्ट स्थान यानी, सिद्धशिला को सुगतिपूर्वक प्राप्त कर चुके सिद्धों को प्रणाम कीजिए।

(अंतिम मंगल. गाथा 1258-61)

1258. हे केवली लोक से संपूर्ण जगत को प्रकाशित करनेवाले, तुम्हारा कल्याण हो! तीर्थकर महावीर की जय हो! सुरों और असुरों द्वारा वंदनीय का कल्याण हो! कर्मरज का नाश कर देनेवाले का भी कल्याण हो।
1259. उत्तम गुण रूप भवनों से गहन व्याप्त, श्रुत-शास्त्र-रूप रत्नों से पूरित, विशुद्ध सम्यक्त्व रूप स्वच्छ वीथियों से संयुक्त, अतिचार रहित मूलगुण रूप चारित्र के परकोटे से सुरक्षित हे नगर रूपी संघ! आपका कल्याण हो।

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

1260. जं 'उद्वितं सुयाओ अहव मतीए य थोवदोसेण।  
तं च विरुद्धं नाउं सोहेयव्वं सुयहरेहिं ॥
1261. तेत्तीसं गाहाओ दोन्नि सत्ता ऊ सहस्समेगं च।  
तित्थोगालीए संखा एसा भणिया उ अंकेणं ॥

गाथा<sup>१</sup> 1233 ; भलोक 1565

तित्थोगाली सम्मत्ता<sup>२</sup>

ऊं भांतिः भांतिः भांतिः

## हिन्दी अनुवाद

1260. यह ग्रंथ श्रुत से अथवा मेरी अल्प बुद्धिवाली मति से कही गयी है। इसमें यदि कोई विरोधी संघ-विरुद्ध बात आ गयी हो तो श्रुतधारियों के द्वारा इसका शोधन कर लेना चाहिए।
1261. इस प्रकार मैंने एक हजार दो सौ तैंतीस गाथाएं इस तित्थोगाली में हैं। इस संख्या को अंकों में कहा गया है।

•••

1. उद्धितं हं० की० ॥
2. गाथा 1249 ॥ तित्थोगाली सम्मत्तं ॥ एवं श्लोकग्रंथाग्रं 1565 ॥ छ ॥ श्री ॥ छ ॥ हं ॥ गाथा 1253 तित्थोगाली सम्मत्ता ॥ एवं श्लोकग्रंथाग्रं 10 (5) 65 ॥ छ ॥ शुभं भवतु ॥ सं. पताल भार्या रंगू पुत्र सं. गांगा सुश्रावकेण लिखापितं ज्ञानाराधनफलं निषम्य आत्म (?) श्रेयोऽर्थे ॥ की ॥ गाथा 1233 तिथ (त्थो)गाली सतापा (सम्मत्ता) ॥ ग्रंथाग्रं श्लोक ॥ इति श्रीतित्थुग्गालीसूत्र (त्रं) समाप्तम् ॥ संवत् 1660 वर्षे श्रीमत्तपागच्छाधिराजभट्टारकपुरंदर श्री 5 श्रीविजयपे (से) नसूरीश्वरविराज्य (ज)माने ग. श्रीजगविमल ग. प्रेमविमलवाचनार्थे गढरिणस्थंभोरमहादुर्गे वास्तव्य श्रीमालज्ञातीय शक्रीया जयतदास लिषापितं कोरंटगच्छे मु. रत्ना लिषतं चिरं नंदतु (तु) ॥ श्री ॥ ला ॥
3. ता ॥ श्रीयोगिनीपुरवासिभिर्महदिर्धकै राजमान्यै सकलनागरिकलोकमुख्यैष्ट. दूदा उ. ठकुरा उ. पदमसीहै. स्वपितुः सा राजदेश्रेयसे अनुयोगद्वारचूर्णिः 1 शोडषकसूत्रवृत्ति 2 तित्थोगाली 3 श्रीताडे तथा श्रीऋषभदेवचरित्रं 12 सहस्रं कागदे। एवं पुस्तिका 4 तपागच्छनायकदेवसुंदरसूरीणामुपदेशेन संवत् 1452 श्रीपत्तने लेखिता इति भद्र ॥ छ ॥ सं ॥

## तित्थोगाली प्रकीर्णक

क्र.	तीर्थकर	चक्रवर्ती	वासुदेव	देहमान	आयु
1	ऋषभ	भरत	0	धनुष 500	पूर्वलक्ष 84
2	अजित	सगर	0	धनुष 450	पूर्वलक्ष 72
3	सम्भव	0	0	धनुष 400	पूर्वलक्ष 60
4	अभिनंदन	0	0	धनुष 350	पूर्वलक्ष 50
5	सुमति	0	0	धनुष 300	पूर्वलक्ष 40
6	पद्मप्रभ	0	0	धनुष 250	पूर्वलक्ष 30
7	सुपार्श्व	0	0	धनुष 200	पूर्वलक्ष 20
8	चन्द्रप्रभ	0	0	धनुष 150	पूर्वलक्ष 10
9	सुविधि	0	0	धनुष 100	पूर्वलक्ष 2
10	शीतल	0	0	धनुष 90	पूर्वलक्ष 1
11	श्रेयांस	0	त्रिपृष्ठ	धनुष 80	लक्षवर्ष 84
12	वासुपूज्य	0	द्विपृष्ठ	धनुष 70	लक्षवर्ष 72
13	विमल	0	स्वयम्भू	धनुष 60	लक्षवर्ष 60
14	अनंत	0	पुरुषोत्तम	धनुष 50	लक्षवर्ष 30
15	धर्म	0	पुरुषसिंह	धनुष 45	लक्षवर्ष 10
16	0	मघवा	0	धनुष 42.5	लक्षवर्ष 5
17	0	सनत्कुमार	0	धनुष 41.5	लक्षवर्ष 3
18	शांति	शांति	0	धनुष 40	लक्षवर्ष 1
19	कुन्धू	कुन्धू	0	धनुष 35	वर्षसहस्र 95
20	अर	अर	0	धनुष 30	वर्षसहस्र 84
21	0	0	पुण्डरीक	धनुष 29	वर्षसहस्र 65
22	0	सुभूम	0	धनुष 28	वर्षसहस्र 60
23	0	0	दत्त	धनुष 26	वर्षसहस्र 56
24	मल्लि	0	0	धनुष 25	वर्षसहस्र 55
25	मुनिसुव्रत	पद्म	0	धनुष 20	वर्षसहस्र 30
26	0	0	नारायण	धनुष 16	वर्षसहस्र 12
27	नमि	हरिषेण	0	धनुष 15	वर्षसहस्र 10
28	0	जय	0	धनुष 12	वर्षसहस्र 3
29	नेमि	0	कृष्ण	धनुष 10	वर्षसहस्र 1
30	0	ब्रह्मदत्त 0	धनुष 7	वर्षशत 7	
31	पार्श्व	0	0	हस्त 9	वर्षशत 1
32	महावीर	0	0	हस्त 7	वर्ष 72

गाथा संख्या 360 से 383 तक के प्ररूपण का निदर्शक कोष्ठक

## लेखक परिचय



डॉ. अतुल कुमार सिंह का जन्म बिहार के मुजफ्फरपुर जिले के मणिका ग्राम में 13 अगस्त 1972 को हुआ। आपके पिता श्री प्रहलाद प्रसाद सिंह और माता श्रीमती कमलेश्वरी देवी हैं। आपके पिता बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ में कार्यरत थे और वर्तमान में अवकाश प्राप्त कर चुके हैं। माता गृहिणी हैं। आपकी प्रारंभिक शिक्षा गांव में ही हुई। हाईस्कूल की शिक्षा पड़ोस के गांव बिन्दा स्थित रामेश्वर उच्च विद्यालय से प्राप्त की। आपने रामदयालु सिंह महाविद्यालय, मुजफ्फरपुर से इंटर और बी.ए. की शिक्षा इतिहास ऑनर्स में ली। एम.ए. में आपने प्राकृत भाषा एवं साहित्य को चुना और जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं, राजस्थान से 1994 में इस विषय की परीक्षा प्रथम श्रेणी से पास की। एम.ए. के दौरान ही 1993 में आपने यूजीसी द्वारा संचालित जे.आर.नेट./नेट की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके बाद आपने प्राकृत भाषा एवं साहित्य में शोधकार्य के लिए काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी के जैन-बौद्ध दर्शन विभाग में पंजीकरण कराया। यहां से आपने 1999 में 'तित्थोगाली प्रकीर्णक का समीक्षात्मक अध्ययन' विषय पर शोधकार्य पूर्ण किया। इसी दौरान इस ग्रंथ का अनुवाद हिन्दी में किया। कुछ दिनों तक आपने पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी में प्राकृत भाषा में अध्यापन कार्य किया। पी.एच.डी. पूर्ण होने के बाद भारतीय दार्शनिक अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली से जनरल फेलोशिप के तहत 2003 में आपका चयन हुआ और आपने इसके तहत शास्त्रवार्तासमुच्चय पर अपनी परियोजना पूर्ण की। आप बरेली में पत्रकारिता से जुड़े। इस दौरान आपने माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय, भोपाल से संबद्ध अजमेरा इंस्टीट्यूट ऑफ मीडिया स्टडीज में पत्रकारिता में अध्यापन कार्य किया। आपने 10 से अधिक राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सेमिनारों में हिस्सा लिया है और उनमें अपना शोध पत्र प्रस्तुत किया। आप जापान के ओकीनावा में आयोजित 'चीन-जापान संबंध और एशिया में शांति' विषयक अंतरराष्ट्रीय सेमिनार में भाग ले चुके हैं। आपने कई सामाजिक मुद्दों पर कार्य किया है और लेख लिखे हैं। प्राकृत और जैन दर्शन से संबंधित आपके करीब 10 लेख विभिन्न शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। आपके परिवार में माता-पिता, पत्नी और एक पुत्र हैं। वर्तमान में आप पत्रकारिता से जुड़े हुए हैं और विभिन्न सामाजिक-राजनीतिक मुद्दों पर लिखते-पढ़ते रहते हैं। आपके लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं।



**जैन विश्वभारती संस्थान**  
( मान्य विश्वविद्यालय )

लाडनूं-341 306, राजस्थान, फोन : 01581-226110